इस्लाम का पैगाम

विनोबा

۱- بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○

۲- اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ○

۳- الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○

۴- مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ○

۵- اِيَّاكَ نَعْبُدُ

وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ ○

۶- اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ○

۷- صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ

۸- غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ○

इस्लाम का पैगाम

लेखक

विनोबा

ISBN 978-93-83982-94-3

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-२२१००१

E-mail:sarvodayavns@yahoo.co.in

अनुक्रम

प्रस्तावना

संपादकीय

इस्लाम : शरणता + शांति

1. दिलों को जोडने के लिए
2. प्यार का रिश्ता
3. नबी मुहम्मद पैगंबर
4. अल् फातिहा
5. ईश्वर – अल्लाह
6. इस्लाम: स्वरूप
7. समन्वय की कला
8. सूरे-हश्र
9. नसीहत की बूंदे
10. सवाल-जवाब
11. कुरान-सार: एक विहंगावलोकन
12. कुरान के चौदह

परिशिष्ट : 1. अस्माउल् हुस्ना हदीस के क्रमानुसार विष्णुसहस्रनाम के साथ

अस्माउल् हुस्ना अकारानुक्रम से विष्णुसहस्रनाम के साथ

” 2. कुरान-शरीफ संदर्भ-सूचि

” 3. संदर्भ-सूचि

प्रस्तावना

सन् 2006 का 28 सितंबर का दिन ! चीन की सरकार ने शांगडांग प्रांत के क्यूफू ग्राम में एक भव्य समारोह का आयोजन किया था। चीन के महान दार्शनिक संत कन्फ्यूशियस का वह 2557 वा जन्मदिन था। उस उपलक्ष्य में उनके जन्मग्राम में यह समारोह हो रहा था। चीन में सर्वत्र एक माह तक उनके विचारों पर आधारित सांस्कृतिक कार्यक्रम मनाये गये । सरकार ने 'चायना कन्फ्यूशियस फाउंडेशन' स्थापित किया। पुराने मंदिरों का जीर्णोद्धार किया। सरकार ने यह भी जाहिर किया कि प्राथमिक स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालयों तक की कक्षाओं में संत के विचार पढाये जायेंगे । प्रमुख विश्वविद्यालयों में अध्ययन केंद्र चलाये जायेंगे। वहां संत के नैतिक और आध्यात्मिक विचारों के साथ ही उनकी 'डेटांग' संकल्पना ('वसुधैव कुटुंबकम्' का विचार) का विशेष अध्ययन किया जायेगा।

चीन में यह वैचारिक परिवर्तन क्यों आया ? 'पॉवर कम्स आउट ऑफ दी बॅरल ऑफ ए गन' – माओ-त्से-तुंग के इस तत्त्व-विचार पर चलनेवाले चीन ने करीब सौ साल के बाद अपने महान संत को याद किया, वह क्यों? इन सौ साल के चीन के अपने अनुभव ने ही उससे यह कराया। चीन का अनुभव रहा कि 'मॉडर्न प्रोग्रेसिव कम्युनिस्ट स्टेट' बनाने के प्रयास में बाजार की संस्कृति पनपी और लोग – खास तौर से युवा पीढी – सुखासीन और व्यसनाधीन हुए। उनमें ऐशोआराम बढा, मौज-मस्ती का शौक बढा। फिर इस शौक को पूरा करने के लिए पैसे कमाने के आसान तरीके खोजे गये । नतीजा ? भ्रष्टाचार बढा और वृत्ति हिंसक बनी। आर्थिक प्रगति का जो सपना देखा गया था, उसमें रुकावट आ गयी। प्रगति की राह बंद हो जाने का डर छा गया। चीन के ध्यान में आया कि इस हालात के जडमूल में

नैतिक अधःपतन ही है। इसलिए खोयी हुई नैतिक संस्कृति को पुनर्जीवित करने का चीन ने तय किया।

विकास के नाम पर आधुनिकीकरण की होड में आध्यात्मिक और नैतिक मूल्य समाज में तेजी से घट रहे हैं। दुनिया के अन्य देश भी यह महसूस कर रहे हैं। अमरीका के राष्ट्रपति बराक ओबामा ने चिंता जाहिर की है कि वहां के युवा व्यसनाधीन और ऐशआरामी बन रहे हैं। वे मेहनत करना नहीं चाहते। गरीबी बढ रही है। इसलिए अमरीका को अपनी शिक्षा पद्धति में परिवर्तन करना होगा, ताकि युवा श्रमनिष्ठ और अधिक प्रतिभाशाली बने। इस प्रकार कुल दुनिया में आज 'आर्मिंग यूथ्स विथ व्हॅल्यूज् ऑण्ड मिशन' का नवजागरण अभियान प्रारंभ हो गया है।

विनोबा क्रांतदर्शी थे। उनका स्पष्ट दर्शन था कि आध्यात्मिक और नैतिक आधार के अभाव में विज्ञान की जो प्रगति होगी, वह समाज में जटिल समस्या पैदा करेगी। समाज को विकृत जीवनशैली की तरफ ले जायेगी। विज्ञान का विकास तो होता ही रहेगा। उसे रोकना संभव नहीं है और लाभदायी भी नहीं है। इसलिए विज्ञान का उपयोग विश्वहित में, मानव-कल्याण के लिए करना होगा। इसके लिए अध्यात्म (एकात्म-भावना) और विज्ञान (निराग्रही व्यापक वृत्ति) की कसौटी पर कसे हुए जीवनमूल्यों का प्रसार करना होगा। दुनिया के सभी धर्म इन जीवनमूल्यों को प्रस्तुत करते हैं। हिंदू, मुस्लिम, ईसाई, बौद्ध, कोई भी धर्म – सभी इन्हीं जीवनमूल्यों की शिक्षा देते हैं। इन धर्मग्रंथों पर समाज की परंपरागत श्रद्धा है। इसलिए इनके आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों को, जो सर्वजनकल्याण-दायी हैं, प्रकाश में लाने के प्रयास विनोबाजी ने अथक परिश्रम कर किये हैं। सभी धर्म-विचारों और धर्मग्रंथों का तहेदिल से अध्ययन कर उनके सार-ग्रंथ जनता के लिए उपलब्ध करा दिये हैं। ये मूल्य सिर्फ किसी विशिष्ट धर्मावलंबी उपासकों के लिए ही नहीं, बल्कि समूचे विश्वसमाज के लिए हैं, सार्वकालिक हैं और इसलिए सभी के लिए अनुकरणीय हैं।

प्रचलित धर्मग्रंथों में सामाजिक सदाचार के निर्देश भी होते हैं। नीति-नियम, उपासना-पद्धति, कानून आदि भी होते हैं। वे स्थल, काल, परिस्थिति के अनुरूप बनाये जाते हैं। इसलिए पुराने जमाने के परंपरागत नीति-नियम आज जैसे के वैसे स्वीकार नहीं हो सकते । जैसे, बलुचिस्तान या अन्य कई देशों-प्रदेशों में लडकियों की पढाई पर प्रतिबंध लगाया गया है। उन्हें बुरखा पहनना लाजमी कर दिया गया है। जो यह नहीं मानेगी उस पर कट्टरपंथी, आतंकवादी अत्याचार करते हैं। यह तो आज के समाजशास्त्र के अनुकूल नहीं है। आज दुनियाभर के सभी देशों का समाजशास्त्र प्रगतिशील, प्रगत है। उसको नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। बल्कि समाजव्यवस्था के या सदाचार के शाश्वत मूल्य धर्मग्रंथों में भी होते हैं, लेकिन आज हालत यह है कि उनका भी ख्याल किया नहीं जा रहा है। जैसे कुरान में कहा है, **लैसल् बिर्र, अन् तुवल्लू वुजूहकुम् क़िबलल् मश्रिक़ि वल् मग्रिबि** (कुसा 186) (पूर्व और पश्चिम सब ईश्वर के ही हैं। इसलिए तुम जिस ओर मुंह करो, उसी ओर ईश्वर सम्मुख है। निःसंदेह ईश्वर सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है)। यह शाश्वत जीवनमूल्य है। ऐसे जीवन-मूल्यों को धर्मग्रंथों से ढूंढकर सामाजिक सदाचार व्यवस्था समाज में प्रस्थापित करनी होगी। तभी वह समाज विज्ञानयुग में टिक सकेगा। इस दृष्टि से विनोबाजी के सार-ग्रंथ आज समाजशिक्षा के लिए अत्यंत जरूरी है।

प्राचीन ऋषि ने प्रतिज्ञा की है कि 'सर्वेषां अविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे' – किसी से भी विरोध न हो इस प्रकार मैं धर्माचरण करूंगा। विज्ञानयुग में यह प्रतिज्ञा वैश्विक स्तर पर भी प्रासंगिक है। संस्कृत में धर्म शब्द का अर्थ बहुत व्यापक होता है। धर्म यानी गुण (क्वालिटि), पवित्रता (रायचसनेस), कर्तव्य (ड्यूटी), विश्वास (फेथ या रिलिजन), टिकाऊ शाश्वत शक्ति (सस्टेनिंग पॉवर)! इस तुलना में अंग्रेजी 'रिलिजन' शब्द बहुत छोटा पडता है, संकुचित संदेश देता है। इसलिए गलत धारणाएं बनती हैं। वास्तव में धर्म आकाशवत् रहेगा। वह मानवमात्र को समान रूप से लागू होगा। सर्वसंग्राहक और सहिष्णु होगा।

व्यक्तिनिरपेक्ष होकर भी सभी रसूलों – प्रेषितों, अवतारों को समान आदर से देखेगा। सभी के प्रति अभेद-वृत्ति रखेगा। विनोबाजी ने गीताई-चिंतनिका (4.7,8) में धर्म की समर्पक व्याख्या की है, जिसका मतलब यह है कि धर्म हर समय आध्यात्मिक और वैज्ञानिक भूमिका पर ही रहेगा। वह स्वच्छ, निर्मल होगा। सबको अभेद-वृत्ति से एक करनेवाला विश्वधर्म होगा। इसलिए ऑज समाज में धर्म के नाम से जो प्रचलित हैं, वह वास्तव में धर्म नहीं हैं, 'दीन' नहीं हैं। वे एक-दूसरे के बीच अलगाव फैलानेवाले, नफरत पैदा करनेवाले मजहब, संप्रदाय, पंथ या फिरके हैं।

एक समय था जब धर्म अनुभवी सिद्ध साधक के हाथ में था – वैदिक ऋषि, मुहम्मद पैगंबर, ईसामसीह, नानक, बुद्ध, महावीर, जरतुष्ट्र आदि सभी सिद्ध साधक थे । आज वह कट्टरपंथी और राजनैतिक लोगों के हाथ में चला गया है। उन्हें धर्मपालन में रुचि नहीं है। इस कारण मजहबों के बीच झगडे, एक-दूसरे पर हमले, हत्याएं, उपासना-स्थानों का विध्वंस आदि विनाशक काम दुनियाभर में चल रहे हैं। इसलिए अब यह बहुत जरूरी हो गया है कि धर्म की संकल्पना को आध्यात्मिक स्तर पर ही समझना होगा। मतलब, मजहब के नाम पर चलनेवाले रूढ रिवाजों के बदले धर्म के आध्यात्मिक सार-तत्त्व का भान रखना होगा, उसे स्वीकारना होगा। विनोबाजी कहते थे, "मेरी यह अनुभूति है कि मैं हिंदू हूं, मुसलमान भी हूं, ईसाई भी हूं, बौद्ध, यहूदी, जैन, पारसी भी हूं।" एकता के इस तथ्य को पहचानने का प्रयास करना होगा। भारत की मानसिकता सर्वसंग्राहक और वृत्ति सहिष्णु रही है। पृथ्वी को उन्होंने एक छोटा-सा कुटुंब माना, "वसुधैव कुटुंबकम्" कहा। भारत के ऋषियों से ऐसी व्यापक और उदार दृष्टि मानव-समाज को मिली है। इसलिए सभी धर्म के प्रचारकों का भारत ने स्वागत किया है।

ईसामसीह के क्रूसिफिकेशन के तुरंत बाद उनके एक शिष्य सेंट थॉमस केरल में पहुंचे। ईसामसीह के विचारों का भारत ने स्वागत किया। वैसे ही वहां के ईसाइयों पर आदि

शंकराचार्य के तत्त्वज्ञान का असर रहा है। माना जाता है कि ईसामसीह का बौद्ध संन्यासियों से संपर्क हुआ था। इसलिए उनके और गौतम बुद्ध के कुछ वचनों में साम्य दीखता है। प्रसिद्ध बुद्ध-वचन है, “वैर से वैर का शमन नहीं होता।” बाइबल में है, “ऑल दे दॅट टेक दि स्वोर्ड शॉल पेरीश विथ दि स्वोर्ड।” – जो तलवार लेते हैं, वे तलवार से ही नष्ट हो जाते हैं। भारत में इस्लाम का प्रसार भी राजाओं के द्वारा नहीं, राजाओं के आगमन के बहुत पहले सूफी फकीरों द्वारा हुआ। वे ‘करिमा’ (ईश्वर-स्तुति) गाते हुए भारत के गांव-गांव घूमते थे। सूफियों का मूल स्थान ईरान और मध्य एशिया है। वहां से वे आये। उनका तत्त्व-विचार वेदांत से मिलता-जुलता है। सूफी कुरान का सूक्ष्म और व्यापक अर्थ करते हैं। इसलिए कट्टरपंथी उनका विरोध करते हैं। परंतु भारत के जनमानस पर उनका प्रभाव पडा। क्योंकि जहां संकुचित मनोवृत्ति नहीं होती, वहां बुद्धि की सात्त्विकता बढती है। और इसलिए फकीरों के विचारों की अपेक्षा उनके सात्त्विक जीवन का असर उस जमाने में जनमानस पर पडा । आज भी सूफी संत भारत के सभी समुदायों को वंदनीय हैं।

प्राचीन काल से अविभाजित भारत का सांस्कृतिक और व्यापारी संबंध ईरान, ईराक, अफगानिस्तान, उजबेकिस्तान, तुर्कस्तान, इंडोनेशिया आदि देशों से रहा है। दुनिया में सर्वाधिक मुस्लिम आबादीवाले देश के नाते प्रथम क्रमांक इंडोनेशिया का है और उसके बाद दूसरे क्रमांक पर भारत है। मुस्लिम समुदायों के अन्य समुदायों से परंपरा से सौहार्दपूर्ण संबंध रहे हैं। विनोबाजी कश्मिर में पदयात्रा कर रहे थे, तब कई मुसलमान सज्जनों ने उन्हें कहा था कि वे अपने को कश्यप ऋषि के वंशज मानते हैं। बंगला देश के मुस्लिम बुद्ध, चैतन्य महाप्रभु, रवीन्द्रनाथ टागोर का आदर करते हैं। उन्हें नाज़ है कि उनकी बंगला भाषा भारत की बंगला की तुलना में ‘खाटी’ यानी अधिक शुद्ध है। कुछ समय पहले पाकिस्तान के एक प्रभावी मुस्लिम नेता जनाब अलमा इकबाल ने जाहिर तौर पर कहा कि ‘अविभाजित भारत (पाकिस्तान और बंगला देश सहित) के इस्लाम की आत्मा आर्यन् है

और शरीर सेमेरिटन है।' भारत ने तो राष्ट्रवाद को कभी सिद्धांत बनाया ही नहीं। राष्ट्रवाद से संकीर्णता पैदा होती है। संकीर्णतावाद आज उग्रवाद, आतंकवाद के रूप में तेजी से उभर रहा है। दुनिया में भारत एकमात्र राष्ट्र है, जहां सभी संप्रदायों के समुदाय प्रेम से इकट्ठा रहते आये हैं। वैदिक ऋषि ने प्रार्थना की है, ' 'हे पृथ्वीमाता ! तू अनेक धर्मों से (भावनाओं से) संपन्न है। तुझमें विविध वाणियां और भाषाएं चलती हैं – 'नाना धर्माणां पृथिवीं विवाचसम्' ।' ' भारत उसकी साक्षात् प्रतिकृति है। इसलिए भारत में विश्वधर्म की नींव सहजता से डाली जा सकती है। विनोबाजी के सारे प्रयास इसी के लिए रहे हैं। इन प्रयासों को आगे ले जाना, पूरा करना आज हमारा और उससे भी अधिक नयी पीढी का काम है। हम प्रार्थना करें – **इह्दिनस् सिरातल् मुस्तक़ीम । सिरातल् लजीन अन्अम्त अलैहिम्** । **गैरिल् मग़्दूबि अलैहिम् व लद्द्वल्लीन** (कुसा 1) – हे प्रभु ! सीधा रास्ता दिखा। रास्ता उन लोगों का, जिन पर तुमने दया की है। न कि उनका जिन पर तेरा प्रकोप हुआ है और न उनका जो भ्रमित हुए हैं।

- बालविजय

संपादकीय

कभी एकाध छोटी-सी घटना भी बहुत बडी नसीहत दे जाती है।

एक बार एक बहन अपनी छः माह की बेटी को लेकर विनोबाजी के दर्शन के लिए आयी। विनोबाजी दो-तीन मिनट बच्ची के साथ खेलते रहे। उसकी नन्हीउंगलियों में अपनी उंगली पकडा दी, तालियां बजायीं, उसको हंसाया। किसी ने कहा, यह बच्ची मुस्लिम है। तुरंत विनोबाजी बोले – "कौन कहता है, यह मुस्लिम है ? यह न हिंदू है, न मुस्लिम। उसकी मां मुस्लिम होगी, पिता मुस्लिम होगा, लेकिन यह मुस्लिम नहीं है। उसको पूछो कि तुम कौन हो, तो वह जवाब नहीं देगी। बच्चा बडा होगा, सयाना होगा, तब तो कह सकेगा कि वह कौन है हिंदू, मुस्लिम या ईसाई ? जब तक वह बच्चा है, तब तक वह सिर्फ इनसान है।"

विनोबाजी का मानना था कि "हर मनुष्य को 18 साल की उम्र में जाहिर करना चाहिए कि वह किस धर्म को मानता है। वह अमुक धर्म के माता-पिता से पैदा हुआ इसलिए ऑटोमॅटिकली उस धर्म का हो गया, यह जो ऑटोमॅटिक यंत्र चल रहा है, वह बंद होना चाहिए और 18 साल की उम्र में अपना धर्म साफ जाहिर करना चाहिए, फिर माता-पिता चाहे किसी भी धर्म के हो।"

सिर्फ उस नन्ही बच्ची को ही नहीं, हर इनसान को वे 'खालिस' इनसान की तरह देखते थे । खालिस इनसान यानी किसी तरह के लेबल के बिना का इनसान । मजहब, जाति, भाषा, राष्ट्र, पार्टी, ये लेबल लग जाने पर इनसान खालिस नहीं रहता । ये लेबल इनसान की इनसानियत को ढांक देते हैं, इनसान इनसान में भेद पैदा करते हैं और इनसान टुकडों में बंट जाता है। इसलिए इन लेबलों के पीछे जो खालिस इनसान है, उसको पहचानना, उसकी पहचान कर लेना आज बहुत जरूरी हो गया है।

इनसान को सिर्फ इनसान की तरह देखने की तालीम रूहानियत देती है। रूहानियत इनसान की रूह के साथ जुडी हुई होती है। मजहब या पंथ, जिसे आम तौर पर धर्म कहा जाता है, ऊपर का होता है। या तो परंपरा से दिया हुआ या मनुष्य का स्वीकारा हुआ होता है। इसलिए इनसान के असली रूप को ढांक देता है। जाति या मजहब भगवान ने नहीं पैदा किये। भगवान ने तो इनसानियत पैदा की है। सच्चा धर्म तो यही है कि इनसानियत आगे बढे और इनसान के टुकडे न पडने दें।

धर्म के बारे में उनके ये विचार हैं। धर्म शब्द वे 'दीन' के अर्थ में इस्तेमाल करते हैं। रिलीजन, मजहब, संप्रदाय, ये शब्द धर्म के लिए पर्यायी शब्द नहीं हो सकते । कुरानशरीफ में एक आयत है, जिसका जिक्र विनोबाजी ने इस किताब में किया है, कि धर्मग्रंथ के दो हिस्से होते हैं। "एक होता है 'उम्मुल किताब' यानी मूल किताब, किताब का मुख्य हिस्सा, बुनियादी उसूल – रूहानियत । और दूसरा होता है, 'मुतशाबिहात'; वह है बदलनेवाला हिस्सा – मजहब या पांथिकता। धर्म में कुछ चीजें बदलती रहेंगी जमाने के मुताबिक, मुल्क के मुताबिक । लेकिन कुछ चीजें कॉमन रहेंगी और कायम रहेंगी। जैसे भगवान का स्वरूप, भक्ति, सचाई, रहम । इसी को 'उम्मुल किताब' कहेंगे। मूल किताब सब किताबों (यानी सभी धर्मग्रंथों) की माता है, यानी साररूप अंश है। उसे कुरान ने दीन और हक कहा है। उपनिषदों ने सत्य और धर्म कहा है। 'मुतशाबिहात' बदलता रहेगा और उसके बारे में मुख्तलिफ रायें हो सकती हैं। इसलिए 'उम्मुल किताब' पर जोर देना चाहिए।" इसी को रूहानी तालीम कहेंगे।

इस पुस्तक में विनोबाजी ने बहुत बडी और इस जमाने में बहुत जरूरी बात कही है, जिसे आजमायेंगे नहीं तो मानवसमाज टिक नहीं पायेगा, तहस-नहस हो जायेगा। कुरानशरीफ ने 'हुवल्लाहु अहदुन' – 'अल्लाह एक है', की बात सिखायी है। विनोबाजी कहते हैं कि इसी के साथ इसी तरह नयी तालीम देनी होगी – 'इनसान अहदुन' - 'इनसान

एक है।' विनोबाजी ने इस किताब के जरिये इस उम्मीद को जाहिर किया है कि इस्लाम का पैगाम कुल दुनिया को प्रेम से एक बनानेवाला है।

इसी दृष्टि से विनोबाजी ने कुरानशरीफ का चयन कर उसका सार-अंश 'कुरान-सार' किताब के जरिये पेश किया है। कुरान-सार के बारे में वे कहते हैं – "हमारी मंशा क्या है? इस किताब के द्वारा हम कुरानशरीफ को रिप्लेस तो नहीं करना चाहते। वह तो अपनी जगह रहेगी। हमारी किताब का मकसद महदूद है। इसमें इस्लाम की रूहानी तालिम क्या है वह चुनचुनकर दे दी है..." इसीलिए कुरान-सार को भारत के और भारत के बाहर के मुसलमानों ने बडे प्यार से स्वीकारा। कुछ अखबारों ने उस समय कुरान-सार के बारे में जो लिखा था, वह मुसलमानों की उदार भावनाओं को व्यक्त करता है। अखबारों ने लिखा था–

"विनोबाजी का यह काम, जिसने अल्लाह की फजल से 'रूहुल कुरान' का लिबास पहना है, न केवल इस्लाम की, बल्कि दुनिया के इतिहास की यादगारी कहलायेगा। इन्शा अल्लाह ।

"हिंदुस्तान की जमीं पर मुख्तलिफ जबानों के और मुख्तलिफ 'फेथ' – श्रद्धाओं के प्रचंड समुदाय को विनोबाजी ने कुरान का तोहफा देकर जो काम पूरा किया है, उसके लिए वे शुक्र-गुजार के हकदार हैं।"

'मदीना', 25.8.1962

"यह चुनाव बडे विवेक के साथ किया गया है। शुद्धि का पूरा ख्याल रखा गया है। मालूम होता है कि संपादक का मकसद है कि मुख्तलिफ कौमों के बीच की खौफगी (नाराजगी) दूर हो और लोग कुरानी रूह को (बुनियादी उसूलों को) समझ सकें। विनोबाजी मुसलमानों को कुरानी आयतों के द्वारा भूला हुआ लेसन (पाठ) याद दिलाना चाहते हैं। यह किताब हर तरह से पढनेलायक है।"

'किताबी दुनिया', कराची, 25.12.1962

मशहूर मौलाना मसूदी ने तो कहा कि “यह तो ऐसा काम है, जो पचीस मौलवी दस साल तक इकट्ठा बैठकर और दस लाख रुपया खर्च करके भी कर न पाते; वह काम विनोबाजी ने कर लिया है।"

कुरानशरीफ का चुनाव करने के पीछे विनोबाजी का जो मकसद था, उसको ख्याल में रखकर ही ‘इस्लाम का पैगाम’ का संकलन किया गया है, जो ‘कुरान-सार’ के अध्ययन में और कुरानी फिल्सफी समझने में मददगार बन सकता है। मन्शा यह है कि आज साईन्स के जमाने में मुख्तलिफ मजहबों को नजदीक आना चाहिए, एक-दूसरे को समझ लेना चाहिए, इसलिए विनोबा जैसे वैश्विक हस्ती के ये विचार सबके पास पहुंचें ।

गाय घास खाती है, जुगाली करती है और आसानी से हजम होनेवाला दूध बच्चों को देती है। दुनिया के मुख्तलिफ धर्मों का अध्ययन विनोबाजी ने अपने खुदके लिए तो किया ही; लेकिन सार-ग्रंथ बनाने की कडी मेहनत दुनियाभर के मानव समाज के लिए ही की है। लोग एक-दूसरे के धर्म को जानें, उनमें कैसी एकता है इसका ख्याल सबको हो, और समाज में भाईचारा बढे, सब प्यार से रहें, हक-रहम- सब्र पर चलें, यही असली मकसद है।

पूर्व पाकिस्तान की यात्रा पूरी कर विनोबाजी पश्चिम बंगाल में पदयात्रा कर रहे थे। बडी फजर का समय था। सूरज निकलने तक मौन ही रहता। उसके बाद मुलाकातें, चर्चाएं या साथियों से बातें होतीं। यह सारा चलते-चलते ही होता था। उस दिन उन्होंने सहसा हमको आगे बुला लिया और अपने साथ चलने को कहा। फिर कहा – “कुरान-सार पुस्तक प्रकाशित हो रही है। मैं चाहता हूं कि हमारे सब साथी उसका अध्ययन करें। ये सार-ग्रंथ मैंने इसी मकसद से तैयार किये हैं कि सब लोग भिन्न-भिन्न धर्मग्रंथों का अध्ययन करें। आज मैं ‘कुरान-सार’ के अंतरंग का नक्शा तुम्हारे सामने रखना चाहता हूं, ताकि तुम लोगों को उसके अध्ययन में रुचि पैदा हो। चंद दिनों में कुरान-सार के अध्यायों को हम संक्षेप में

देख लेंगे।" हम साथियों की तो मानो किस्मत ही खुल गयी। पांच दिन तक यह सिलसिला जारी रहा, रोज ठीक बीस मिनट ! विनोबाजी की तकरीरों – चर्चाओं वगैरह का लफ्ज-लफ्ज लिख लेने का काम हम बहनों को सौंपा गया था। मुकाम पर पहुंचते ही मैं उसको लिख लेती; विनोबाजी के साथी श्री अच्युतभाई देशपांडे भी, जो अरबी, फारसी के विद्वान थे और कुरान-सार, ख्रिस्त-धर्म-सार बनाने के वक्त विनोबाजी के दाहिने हाथ बने थे, ये बातें सुनते थे। मेरी नोटस् को वे बारीकी से देख लेते थे। इसी का नतीजा है, इस किताब में दिया हुआ 'कुरान-सार : विहंगावलोकन' ।

'इस्लाम का पैगाम' का काम करते हुए इसकी याद बार-बार आती रही। इसमें कोई गूढ संकेत खोजने की कोशिश कतई नहीं की जा रही है। लेकिन भावना का एक 'काचा तांतण' (कच्चा धागा) दोनों घटनाओं को जरूर जोड देता है। क्योंकि इस संकलन का काम भी मेरे पास अनपेक्षित ही आया। मैंने अपनी ओर से सोचा नहीं था। सहजता से आया और सहजता से पूरा हुआ। इसके लिए योग्यता क्या है? यह 'काचा तांतण' ही है। मीराबाई अपने एक भजन में कहती हैं – " 'काचे तांतणे रे मने हरिजीए रे बांधी...', एक कच्चा धागा है, उस कच्चे धागे से भगवान ने मुझे बांधा है और वह कच्चा धागा इतना पक्का है कि वह जितना खींचा जाता है, उतनी मैं उसकी ओर खींची जाती हूं।" भरोसा है कि इस 'काचे तांतण' को पकडकर मीराबाई जिस प्रभु की भक्त बनी, इस तांतण के सहारे राबिया जिस रब की खिदमत में रंग गयी, उसी ने इस प्रकार की सेवा के लिए बल दिया होगा।

संकलन के काम में अनेकों की मदद मिली है। मुंबई के इस्लाम के अध्येता श्री अब्दुल कादर मुकादम तथा धर्म-समन्वय के लिए देश-विदेश में कार्य करनेवाले विद्वान श्री असगरअली इंजीनियर ने अपनी अत्यंत व्यस्तता में से समय निकालकर पांडुलिपि को देखा और सुझाव दिये, जो बहुत मददगार रहे। श्री बालविजयजी ने, जो शुरू से आखिर

तक विनोबाजी के नजदीक रहे और उनके सेवक-सचिव रहे, प्रस्तावना लिखकर किताब की अहमियत को अच्छी तरह से पेश किया है। इन सबके हम एहसानमंद हैं !

किताब में दी हुईं आयतों के क्रमांक (कु.सा.) 'कुरान-सार' के हैं। कुरानशरीफ के क्रमांक परिशिष्ट 2 में दिये हैं।

पुस्तक में दिये कुरानशरीफ के उद्धरणों में भूल न रहे, इसकी यथासंभव कोशिश की गयी है। तिसपर भी, अरबी जाननेवाले योग्य व्यक्ति से दुरुस्त करवा लेने का काम नहीं हो सका है; इसलिए बहुत संभव है कि भूलें रह गयी हों। इस कमी के लिए पाठक क्षमा करें, यह प्रार्थना !

और भी कोई भूलें या कमी रह गयी हो तो, पाठकों से अनुरोध है कि वे उस संबंध में लिखें, ताकि अगले संस्करण में आवश्यक सुधार / संशोधन किये जा सकें ।

इन्शाअल्लाह, उम्मीद है, यह सेवा सबको मंजूर होगी।

– **कालिन्दी**

इस्लाम का पैगाम

इस्लाम : शरणता + शांति

इस्लाम शब्द के दो अर्थ हैं। एक अर्थ है शांति। और दूसरा अर्थ है भगवत्-शरणता। इस्लाम शब्द में सलम धातु है। उसका अर्थ है शरण जाना। इसी पर से सलाम शब्द बना है। सलाम यानी शांति। इस्लाम शब्द भी उसी पर से बना है। परमेश्वर की शरण जाओ तो शांति मिलेगी। गीता के एक श्लोक में यह कहा है – *तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत* – हे अर्जुन, तू सर्वभाव से भगवान की शरण जा। इसका नतीजा क्या होता है ? *तत्प्रसादात् परां*

शांतिं स्थानं प्राप्यसि शाश्वतम् – उसकी कृपा से तुमको शाश्वत शांति मिलेगी। इस तरह शरणता और शांति, ये दो चीजें एक ही श्लोक में हैं। और वही इस्लाम शब्द में है। भगवान बुद्ध ने तीन शरण बताये हैं – *बुद्धं शरणं गच्छामि; संघ शरणं गच्छामि ; धम्मं शरणं गच्छामि।*

हिंदू लोग नित्य शांतिमंत्र का उच्चारण करते हैं। मुसलमानों में किसी से मुलाकात होने पर ‘अस्सलामवालेकुम’ बोलकर अभिवादन किया जाता है। उसका अर्थ है, आपके जीवन में शांति बढे। प्रति अभिवादन में भी शांतिकामना होती है। ईसाई धर्म में कहा जाता है, ‘ग्रेस बी अन्टु यू अॅण्ड पीस फ्रॉम गॉड’ – ईश्वर की ओर से आप पर करुणा और शांति की वर्षा हो। शांति की घोषणा सभी धर्मों में है। इस्लाम में तो उसके नाम में ही यह आ जाता है।

1. दिलों को जोडने के लिए

[वि. सा. खं. 8-395,403; पा.या. पृ. 61]

भूदान के निमित्त से बरसों मेरी पदयात्रा चली, जिसका एकमात्र उद्देश्य दिलों को जोडने का रहा। बल्कि मेरी जिंदगी के कुल काम दिलों को जोडने के एकमात्र उद्देश्य से प्रेरित हैं। साइन्स ने दुनिया को छोटा बना दिया है और सब मानवों को नजदीक लाना चाहता है। ऐसी हालत में मानव समाज फिर्कों में बंटा रहे, हर जमात अपने को ऊंचा समझे और दूसरों को नीचा समझे, यह कैसे चलेगा? हमें एक-दूसरों को ठीक से समझ लेना होगा। एक-दूसरों के धर्मों की किताबों का अध्ययन (मुताला) करना होगा। एक-दूसरे के गुणों को ग्रहण करना होगा। इसी मकसद से मैंने कुरान-सार, ख्रिस्त-धर्म-सार आदि ग्रंथ तैयार किये हैं, जिससे कि भारत की जमातें जुड जायें। [कु.सा. प्रस्तावना]

मैं देखता हूं कि चाहे चैतन्य महाप्रभु हों, कबीरदास हों, या गुरु नानक, उनके जीवन और चिंतन पर जितना असर वैष्णव धर्म का हुआ, उतना ही कुरान का भी हुआ है। नानक ने तो जपुजी में कुरान का उल्लेख ही किया है। गुरुग्रंथसाहब में ऐसे विचार जगह-जगह मिलते हैं कि “चाहे वेद हो या कुरान, जो सार है वह है भगवान का नाम, और उसे हमने ले लिया है।” वैदिक धर्म, जैन धर्म, ईसाई धर्म, इस्लाम, सबकी विशेषताएं इकट्ठा होकर भारत का विचार परिपूर्ण और परिपुष्ट बना है।

भारत का इस्लाम दूसरे ही ढंग का है। भारत की ईसाइयत भी दूसरे ही ढंग की है। भारत में जो सोयाबीन बोया जाता है, वह भी सोयाबीन नहीं रहता, कुछ दूसरा ही बन जाता है। यहां की जमीन में यह खसुसियत है कि यहां के मजहब, पंथ एक- दूसरे के नजदीक आये हैं और प्यार से एक-दूसरे का सार लेते हैं। यही भारत की खूबी है। इस भूमि की यह विशेषता है कि यह सब मानवों का प्रेम से स्वागत और संग्रह करती है।

सबका संग्रह करनेवाली यह भूमि सब धर्मों को प्रेम से नजदीक ला रही थी। दिल जोडने की प्रक्रिया चल रही थी, लेकिन बीच में सियासत – राजनीति – आयी और उसने तोडने का काम शुरू किया। अब हमें फिर से दिल जोडने का काम करना होगा। वह काम करना हमारे लिए लाजमी है। विज्ञान ने हमारे सामने ऐसी बड़ी बात रखी है कि या तो आप मिलजुल कर काम करो और दुनिया में स्वर्ग लाओ, या फना हो जाओ - मिट जाओ । मनुष्य की हस्ती को ही मिटा दो। इसलिए अब हमें दिलों को जोडना ही पडेगा ।

मेरी जिंदगी में मुझे दिल जोडने के सिवाय और किसी चीज में कोई दिलचस्पी नहीं है। मैंने कुरानशरीफ का अध्ययन भी इसी लिए किया। हमारे आश्रम में एक मुसलमान लडका आया, तो मुझे इच्छा हुई कि उसे कुरान सिखाया जाये। लेकिन पहले खुद सीखें तभी तो सिखाना संभव था। इसलिए मैंने खुद सीखना शुरू किया। वह लडका तो बाद में चला गया, लेकिन मैंने अपना अध्ययन जारी रखा। उसका फायदा मुझे तब हुआ, जब मैं गांधीजी के बाद मेवों को और शरणार्थियों को बसाने के काम में लगा। वहां टूटे हुए दिलों को जोडने का काम था। वहां वह सारा ज्ञान काम आया । वहां हम लोग हिंदुओं और मुसलमानों के पास पहुंचे और दोनों के दिल जोडने का काम किया। [भू.य. 4.7.65]

कुरान में कहा है, हम भगवान के नाम से कह रहे हैं कि यह सूर्य नीचे उतर रहा है, जिंदगी भी इसी तरह जानेवाली है। ये सब लोग खतरे में हैं, जो भगवान को याद नहीं करते। भगवान पर ईमान रखनेवाले, साथ-साथ नेक काम करनेवाले, हक और सब्र पर चलनेवाले, एक-दूसरे को हक और सब्र पर चलना सिखानेवाले, उसमें मदद करनेवाले जो हैं, वे घाटे में नहीं रहेंगे (कुसा 239) [कुरानशरीफ 103.1-3] । बाकी सब घाटे में रहेंगे। मैं मानता हूं कि इसमें इस्लाम का सार आ गया। और इस अर्थ में मैं अपने को मुसलमान जाहिर करता हूं। हम कोशिश करते हैं ईमान रखने की, उस पर अमल करने की और सब्र

रखने की। इस तरह हम मुसलमान बनने की कोशिश करते हैं। हिंदूधर्म ने, भगवान बुद्ध ने और गुरुनानक ने हमें यही सिखाया है।

जो अच्छा होता है, वही सच्चा हिंदू है और वही सच्चा मुसलमान है। जो अच्छा नहीं होता, नेकी पर नहीं चलता, वह नाममात्र का हिंदू है, वह नाममात्र का मुसलमान है। दरअसल वह हिंदू है नहीं, मुसलमान है नहीं। हिंदू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध वही होता है, जो इनसान के अलावा और कुछ होता है। इनसान से कम जो होंगे, वे तो चोर, डाकू इत्यादि होंगे। वे नाम भले ही लें हिंदू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, लेकिन होंगे नाममात्र के। इनसानियत से कम होगा, वह हिंदू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध बन नहीं सकता। मैं कहना यह चाहता हूं कि हिंदू या मुसलमान इनसानियत से कुछ ज्यादा है। इनसान तो साधारण मनुष्य है, जो नेक रास्ते से चलता है। लेकिन उससे ऊपर जानेवाला, भगवान की शरण जानेवाला मुसलमान है। तो फिर पूछा जायेगा कि क्या तुलसीदासजी मुसलमान थे, शंकराचार्य मुसलमान थे ? तो मैं कहूंगा कि जी हां, वे मुसलमान थे। हिंदू का क्या अर्थ है ? 'हिंसया दूयते चित्तम्' – हिंसा से जिसका चित्त दुःखी होता है, वह हिंदू है। जो हिंसा करेगा नहीं, हिंसा करवायेगा नहीं, हिंसा के वश होगा नहीं, वह हिंदू है। तो फिर क्या मुहम्मद पैगंबर हिंदू थे? मैं कहूंगा, जी हां, हिंदू थे। यह समझने की बात है। यह सारा कुरान में, वेद में आया है। [भू.य. 31.12.65]

दिलों को जोडने के लिए एक-दूसरे के मजहब का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। इस्लाम धर्म के मुख्य विचार से हिंदू को वाकिफ होना चाहिए। और हिंदूधर्म में क्या है, इससे मुसलमानों को वाकिफ होना चाहिए। इसी तरह ईसाई आदि अन्य धर्मों की बात है। रूहुल कुरान मुसलमान पढते हैं, लेकिन हिंदू भी उसे पढ़ें और गीता-प्रवचन मुसलमान पढें। दोनों कौमें दोनों किताबें जानेंगी, तब एक-दूसरे के दिल जुड जायेंगे। [वि. सा. खं. 8.388]

इसके आगे हिंदू-मुस्लिम दोनों को मिलकर - (1) सामाजिक सुधार का बहुत बडा कार्य करना है। (2) राजनैतिक क्षेत्र में सर्वभेदातीत शुद्ध प्राज्य-सत्ता (लोगों का अपना शासन) की स्थापना करनी है। (3) आर्थिक क्षेत्र में गरीबों के दुःख के एकमात्र धर्म को पहचानना है। इससे ज्यादा या कम कुछ करना नहीं है। इतना करते हुए हर कोई अपनी-अपनी व्यक्तिगत या सांप्रदायिक उपासना को संभाले और समाप्त करे । सभी उपासनाओं का अंत आत्मज्ञान से, और आत्मज्ञान में होता है। दोनों धर्मों के और सभी धर्मों के सज्जन अपना और जनता का ध्यान आत्मज्ञान पर केंद्रित करें और उपर्युक्त कार्यक्रम में लग जायें। [मा.भा. की प्रस्तावना]

* *

2. प्यार का रिश्ता

मैंने जितनी श्रद्धा से हिंदूधर्म का अध्ययन किया, जितनी भक्ति से वेद पढा, उतनी ही श्रद्धा-भक्ति से कुरानशरीफ का भी अध्ययन किया। गीता का पाठ करते समय मेरी आंखों में कई बार आंसू भर आते हैं, वैसे ही कुरान और बाइबिल का पाठ करते समय भी होता है; क्योंकि सभी ग्रंथों में मूलतत्त्व का ही वर्णन है। कुरान के कई अंश पढते समय एकदम गद्‌गद हो जाता हूं। जब तक मुझे विश्वास नहीं हुआ कि उसके साथ एकरूप हो गया हूं, उसमें रंग गया हूं, तब तक मैंने उसका उद्धरण (कौल) पेश करना आदि नहीं किया। अब वह सहजता से हो जाता है। [वि. चिं. 18.300, 20.2.66]

मेरे रचनात्मक कामों के चिंतन में एक दिन मुझे सूझा कि मैं हिंदुस्तान में रहता हूं, तो जैसे हिंदूधर्म की किताबों का अध्ययन मैंने किया है, वैसे ही अपने पडोसी मुसलमान भाई, जो एक हजार साल से यहां रहते हैं, उनके धर्म की किताब का भी अध्ययन करूं । तो आश्रम में आये एक मुसलमान लडके को कुरान सिखाने के निमित्त से मैंने खुद कुरान पढना शुरू कर दिया। यह 1939 की बात है। प्रथम सेल का अंग्रेजी तरजुमा पढा। फिर मुहम्मदअली का तरजुमा पढा, जो अच्छा है लेकिन सेक्टेरियन है। फिर यूसुफअली का लंबा भाष्य पढा । और उसके बाद पिक्थाल का तरजुमा पढा । (आगे, जब मैं कश्मीर में पदयात्रा कर रहा था तब अहमदियावालों का शाया (प्रकाशित) तरजुमा भी देखा। उसके टेक्स्ट की प्रिंटिंग सबसे सुंदर है।) लेकिन ये सब पढने से भी दिल को तसल्ली नहीं हुई। मुझे ऐसा लगा कि ये अनुवाद मूल धात्वर्थ (मूल शब्द से निकला अर्थ) से दूर ले जा रहे हैं। अरबी और अंग्रेजी की रचना और शब्दसृष्टि में बहुत फरक है, इसलिए मूल अरबी किताब पढने का मैंने तय किया।

मेरा 'स्वदेशी' धर्म मुझे पवनार छोडने नहीं देता था, इसलिए वहीं बैठे-बैठे जैसे हो सका वैसे अध्ययन किया। मैंने कुरान के शब्दों के मूल में जाने की कोशिश की। एक-एक लफ्ज पढ़ूं और याद न रहे, आंखों को भी तकलीफ हो, इसके बजाय मैं सब नागरी में लिख लेने लगा। उससे याद भी हो जाता था। मैं वर्धा के पास एक देहात में रहता था। वहां जो भी मदद मिल सकी वह लेकर दो-तीन साल में कुरान को कई मर्तबा पढ लिया। मुझे उर्दू से अरबी ज्यादा आसान मालूम होती है। क्योंकि उर्दू में जेर जबर (उच्चारण के चिह्न) नहीं होते हैं। अरबी लिपि की एक किताब 'नबियों के किस्से' मैंने जेल में पढी थी। मुझे कुरान के अध्ययन के लिए जितनी मेहनत करनी पडी, उतनी मेहनत वेद छोडकर और किसी ग्रंथ के लिए करनी नहीं पडी। यह तो नहीं कह सकते कि उतने से मैं कुरान का 'हाफिज' या 'आलिम' (कुरानविद्) बन गया; परंतु हिंदूधर्म के गहरे अध्ययन के लिए मैंने जितनी कोशिश की उतनी ही कुरान के अध्ययन के लिए भी की। इस सारे प्रयास में मेरी आंखें, जो पहले ही कमजोर थीं, और बिगड गयीं। पर मानसिक लाभ मैंने बहुत पाया। श्रद्धा तो पहले ही थी कि सब धर्मों में एकता है, क्योंकि मानव-हृदय एक है और धर्म की सृष्टि करनेवाले ऊंचे हृदय के होते हैं; लेकिन इस अध्ययन से उस श्रद्धा की साक्षात् अनुभूति हुई । [बापू श्रद्धां. 9.2.48; पृ. 484]

एक दफा मौलाना अबुल कलाम आजाद गांधीजी से मिलने आये थे। गांधीजी जानते थे कि विनोबा ने कुरान का अरबी में अध्ययन किया है। तो उन्होंने मुझे बुलाया और कहा कि मौलाना को कुरान सुनाओ। मेरा हमेशा आग्रह रहता है कि जो भी भाषा सीखनी है, उसका ठीक उच्चारण होना चाहिए। जुम्मे के दिन रेडिओ पर बीस मिनट कुरान चलती थी। जेल में मैं वह सुनता था। उस पर से मैंने तलफ्फुज (उच्चारण) पकड लिया था। और मौलवी के पास जाकर भी सीख लिया था। अरबी उच्चारण का जो सारा शास्त्र है, उसका भी अध्ययन कर लिया था। और कुरान की कई आयतें कंठ कर ली थीं। उस दिन मौलानासाहब

के सामने मेरी परीक्षा हुई। उन्होंने कहा, उच्चारण इतना उत्तम है कि कोई उलमा बोल रहा है, या हिंदू बोल रहा है समझ में नहीं आता था। ऐसा उनका सर्टिफिकेट मिल गया। [मै. फर. 75]

इस तरह 1939 से लेकर आज तक मैं कुरान पढता रहा हूं। बीच-बीच में छोड देता हूं। क्योंकि भूलने में भी लाभ होता है। भूलने से यह फायदा होता है कि हमें जो अच्छी तरह हज्म हुआ है, उतना ही याद रहता है। सतत पढते रहने से हर जुमले (वाक्य) की कीमत का पता नहीं चलता। इसलिए जैसे सतत पढते रहना एक तरीका है, वैसे ही बीच-बीच में छोडते जाना, भूलते जाना भी एक तरीका है। दोनों तरीकों से कुरान सतत मेरे अध्ययन के ग्रंथों में रहा है। इसके कारण मुसलमान लोग मुझ पर बहुत प्यार बरसाते हैं और इसलिए मैं उनका बहुत एहसानमंद हूं। मैं जहां भी गया, मुसलमानों ने मुझे अपना ही माना। [मै. 89+16.7.59]

हिंदुओं में मैं अपने को हिंदू मानता हूं। ईसाइयों में अपने को ईसाई मानता हूं। और मुसलमानों में अपने को मुसलमान मानता हूं। यही मानो कि पाषाण और पत्थर में कोई फर्क नहीं है – पाषाण यानी पत्थर और पत्थर यानी पाषाण, वैसे ही हिंदू, मुसलमान और ख्रिस्ती यानी सज्जन सत्पुरुष इतना ही अर्थ है। [स. या. पृ. 148]

गांधीजी के जाने के बाद जब मैं कुछ दिन मेवों के पुनर्वसन कार्य के लिए हरियाणा-राजस्थान गया था, तब उनमें काम करते हुए हम लोग उनके साथ नमाज में भी भाग लेते थे, कुरान भी पढते थे। मैंने वहां गीता का उर्दू तर्जुमा भी पढा था और उर्दू भजन भी गाता था। प्रार्थना के विषय में मुझे किसी वचनविशेष का आग्रह नहीं है। यही कारण है कि उनकी प्रार्थना गाते हुए मेरी आंखें गीली हो जातीं। प्रार्थना को किसी संप्रदाय की चीज मान लेने का कोई भाव मेरे मन में कभी नहीं रहा। [मै. 1985]

सन् 1948 में मैं अजमेर गया था। उन दिनों हिंदू-मुसलमानों के बीच बहुत झगडे चल रहे थे। अजमेर में मुसलमानों को बडा खतरा मालूम हो रहा था। मैं वहां सात दिन रहा। मैंने सबको समझाया कि इस तरह झगडा करना ठीक नहीं। फलस्वरूप हिंदू और मुसलमान मान गये। उस समय मैं वहां के बडे दरगाह में भी गया था। मुहद्दीन चिस्ती नाम के महापुरुष हो गये, उनके स्मरण में वह बना है। वह स्थान हिंदुस्तान का मक्का माना जाता है। हमने वहां दस हजार मुसलमानों के बीच गीता की 'स्थितप्रज्ञस्य का भाषा' प्रार्थना बोली। जैसे नमाज पढी जाती है वैसे ही सबने दरगाह में ही बैठकर प्रेम से एकसाथ प्रार्थना की। दूसरे दिन नमाज के समय मैं पुनः वहां पहुंचा। देखा, सारे भक्तजन शांति से बैठे थे। उन लोगों का मुझ पर बडा ही प्रेम और विश्वास रहा। नमाज के बाद हरएक ने आकर अपने रिवाज के अनुसार मेरा हाथ चूमा। यह कार्यक्रम आधा-पौन घंटे तक चला। इतना उनका प्रेम मुझे हासिल हुआ। जिसके हृदय में प्रेम है, उससे क्योंकर कोई प्रेम नहीं करेगा ?

उस दिन उनमें एक भी स्त्री नहीं थी। आखिर जब मुझे चंद बातें कहने को कहा गया, तब मैंने कहा, आपकी शांतिमय प्रार्थना देखकर मुझे बडी खुशी हुई; परंतु यह न समझ सका कि ईश्वर की प्रार्थना में भी स्त्री-पुरुष-भेद क्यों कायम रखा जाता है ? मुसलमानों को अपने रिवाज में इतना सुधार करना ही होगा।

इस घटना के दस साल बाद राजस्थान की भूदान-यात्रा में अजमेर में सर्वोदय सम्मेलन का आयोजन किया गया था। वह इसी लिए कि अजमेर का यह दरगाहशरीफ मुसलमानों का प्रसिद्ध पवित्र स्थान है। फिलिस्तान में सम्मेलन करने का अवसर आये तो वह जेरूसलेम में होगा। मेरी यात्रा महाराष्ट्र में चल रही थी तब पंढरपुर में सम्मेलन हुआ था। मैं पंथ का अभिमानी नहीं हूं। इन स्थानों का महत्त्व है; क्योंकि यहां शुद्धतापूर्वक कठिन तपस्या हुई है।

वहां दरगाहशरीफ के नाजिम (व्यवस्थापक) का निमंत्रण मुझे मिला। उन्होंने हमारे साथी को लिखा था कि 'हम बहुत चाहते हैं कि विनोबाजी दरगाह में पधारें, हम उनका स्वागत करना चाहते हैं; क्योंकि हमारे महान संत का आदर्श शांति और प्रेम ही था। विनोबाजी के साथ मैं उनके साथ के सभी लोगों को भी निमंत्रण दे रहा हूं, सभी का यहां स्वागत होगा।' इस निमंत्रण के आधार से मैंने सम्मेलन की बैठक में सभी को मेरे साथ चलने का निमंत्रण दिया। मैंने कहा कि स्त्रियां भी अवश्य चलें । दूसरे दिन हजारों लोगों के साथ मैं वहां गया। जैसे पंढरपुर सर्वोदय सम्मेलन के समय वहां के मंदिर में हमारे साथ सभी जाति और धर्म के लोग गये थे, वैसे ही यहां भी सभी गये । बहुत ही प्रेमपूर्वक हमारा स्वागत हुआ। मैंने वहां कहा कि कहीं-कहीं मंदिर-मस्जिदों में सब लोगों को जाने की मनाही रहती है। यह ठीक नहीं। होना ऐसा चाहिए कि सभी इबादतगाहों में बिना किसी भेदभाव के सभी लोग जा सकें । [अ. त. 162-163]

जब मैं भूदान-यात्रा में मलबार पहुंचा, तो वहां भी ऐसा ही अनुभव आया। वहां के मुसलमानों ने मुझसे कहा कि आप जो कहते हैं वे ही बातें कुरान में हैं। मैंने उनसे कहा कि मैंने कुरान पढी है और भक्तिपूर्वक पढी है। कुरान का उत्तम अंश मुझे कंठ भी है। इसलिए आपका दावा मान्य करने में मुझे खुशी होती है। [वि. प्र. 24.9.58]

हमारी भूदान-यात्रा जब कश्मीर में चल रही थी, तब तो मेरा पांच बार नमाज पढना हो जाता था। सुबह चलते समय हमारी काफी चर्चा चलती, जिससे इलम (ज्ञान) बढ़ता, जो हमारी पहली नमाज हो जाती। फिर पडाव पर पहुंचने पर तक़रीर (भाषण) होती। उस तक़रीर में हम प्रेम की बातें करते। यह हमारी दूसरी नमाज हो जाती। ग्यारह बजे हम कुरानशरीफ पढते और सुनते । वह तीसरी नमाज हो जाती। दोपहर में अक्सर बूढे-बुजुर्ग लोग, जो हमारे साथ पैदल चल नहीं सकते, मिलने आते, उनसे मुलाकातें यानी चौथी

नमाज । और शाम को तक़रीर में पांचवी नमाज । ये सारी बातें इलम की, प्रेम-भक्ति की और सेवा-इबादत की होती थी, इसलिए हम इनको नमाज मानते थे ।

दूसरी बात, कश्मीर में पूंछ से मैंने कुरानशरीफ की तिलावत (पठन) करना शुरू कर दिया। ऐसे तो मेवों में काम करता था तब भी तिलावत करता था। कश्मीर में रोज लोग आते और हमारे पास बैठकर तिलावत करते। बहुत से लोग कुरान पढना जानते हैं और बहुत-से ठीक तरह से पढना नहीं भी जानते। इसलिए तिलावत में गलतियां भी हुआ करतीं। लेकिन अल्लाह तो 'गफूरुर्रहीमुन्' कहलाते हैं। इसलिए वे तो मुआफ कर ही देंगे। बच्चा जब ठीक नहीं बोलता, तब उसकी टूटी-फूटी जबान मां को प्यारी लगती है। इसी तरह से अल्लाह को भी यह सारा प्यारा लगता होगा। [मै. नवं. 85]

हमारी भूदान-यात्रा की एक प्रदक्षिणा पूरी हो गयी, तब असम से पश्चिम बंगाल जाना था। वहां जाने के लिए दो रास्ते थे। एक रास्ता पूर्व पाकिस्तान (बंगला देश) होकर जाता था। तो हमने उस रास्ते से जाने का सोचा। तब किसी ने हमको सुझाव दिया था कि आप मुस्लिम नेशन में जा रहे हैं, तो आपके साथ, आपकी टोली में एक तो मुसलमान होना चाहिए। मैंने कहा, हम यह नहीं मानते कि कोई मुसलमान हमारे साथ नहीं है। एक मुसलमान तो है ही और वह है खुद बाबा (विनोबा)। मुझे यह भी कहा गया था कि वहां दो हाथ जोडकर प्रणाम नहीं करें, एक हाथ से सलाम करें। मैंने कहा, भगवान ने दो हाथ दिये हैं, तो दो हाथों से प्रणाम करूंगा । और मैंने वहां दो हाथ जोडकर प्रणाम किया। तो वहां के कुछ लोगों ने दो हाथों से प्रणाम किया, कुछ ने एक हाथ से। मैं जानता हूं, एक हाथ से सलाम इसलिए करते हैं कि एक हाथ अल्लाह के लिए रखा जाता है। [मै. फर. 70]

जब रूहुल कुरान प्रकाशित हुई तब पुस्तक का भारत के और पाकिस्तान के मुसलमानों ने विरोध नहीं किया। पुस्तक प्रकाशित होने के पहले कराची के 'डॉन'

(अखबार) ने उस पर आलोचना की थी कि पिछले 1300 वर्षों में हमारे धर्मग्रंथ में इस तरह का फरक किसी ने किया नहीं था, अब वह करनेवाला यह काफीर निकला है, आदि । तब हिंदुस्तान के तमाम (मुस्लिम) अखबारों ने मेरा समर्थन किया कि यह आलोचना उचित नहीं है, कुरान का ऐसा सार पहले भी निकाला गया है, इसलिए ग्रंथ पढे बिना उसकी आलोचना करना गलत है। इसका मेरे चित्त पर बहुत असर हुआ। मैं मानता हूं कि मुसलमानों का मुझ पर यह बहुत बडा उपकार है। वह पुस्तक प्रकाशित होने के बाद कुछ मुसलमानों ने मुझे पत्र लिखे और कंस्ट्रक्टिव सुझाव दिये। मैंने उस किताब को 'रूहुल कुरान' नाम दिया है। रूह यानी आत्मा। किसी हिंदू ग्रंथ का ऐसा सार निकालें तो कोई कुछ कहेगा नहीं। मेरी भागवत-धर्म-सार प्रकाशित हुई ही है। परंतु मुसलमानों ने ऐसी सहिष्णुता दिखायी, इसका मुझ पर बहुत असर पडा । [मै. जुलाई 73]

भारत के मुसलमानों के लिए मुझे बडा गौरव महसूस हुआ कि उन्होंने यह उज्र नहीं उठाया कि कुरान में से चुनाव करना गलत है। कुरानशरीफ उनकी श्रद्धा की पुस्तक है। उस पुस्तक से कोई चीज अलग करना और उसको रूहुल नाम देना – रूहुल यानी ज्ञान की आत्मा – यह सारा का सारा, देखा जाये तो, उनकी दृष्टि से अपरिचित बात थी। लेकिन उन्होंने सनातनी आक्षेप नहीं उठाया, बल्कि कई मुसलमानों ने उसकी समीक्षा करते हुए उसका गौरवपूर्ण उल्लेख किया। और जो दोष दिखाये, वे सहानुभूतिपूर्वक दिखाये । इससे मुझे बडी आशा होती है कि भारत के मुसलमान बडे उदार हैं। तंगदिल नहीं हैं। मैं उनकी बात कर रहा हूं, जो पढे-लिखे हैं। अपढ लोग तो दिल की उदारता रखते ही हैं।

मैं पाकिस्तान में घूम रहा था (पुस्तक प्रकाशित होने पर थी,) तब जगह-जगह इसकी मांग की गयी। एक बूढे की आंखों में तो आंसू देखे। वह कह रहा था कि 'मैं अभी तक जिंदा हूं कि आपका रूहुल कुरान पढ पाऊं, कृपा करके प्रकाशित होने पर मेरे पास भेज दीजिए।'

इस किताब ने भारत और पाकिस्तान को जोडने का काम किया और आज भी कर रही है। [भू.य. 7.2.64, 27.12.63]

मेरी यह अनुभूति है कि मैं हिंदू हूं, मुसलमान भी हूं, ईसाई भी हूं, बौद्ध-यहूदी- पारसी भी हूं। हरएक के अपने-अपने मिस्टिक एक्स्पीरियन्स (गूढ अनुभूति) के अनुसार अलग-अलग धर्म बने हैं। हजरत मुहम्मद के मिस्टिक एक्स्पीरियन्स को लेकर इस्लाम बना, बुद्ध के मिस्टिक एक्स्पीरियन्स को लेकर बौद्ध धर्म बना। ये सारे धर्म यानी सत्य के अंश हैं। अगर मैं कहता हूं कि मैं किसी एक धर्म का हूं, तो सत्य के साथ असत्य को भी ग्रहण कर लेता हूं। और 'मैं किसी धर्म का नहीं हूं,' कहने से उन धर्मों में जो सत्य का अंश है, उसको भी छोड देता हूं। सत्य का अस्वीकार न हो और असत्य का स्वीकार न हो, इसलिए मैं 'भी' वाली बात कहता हूं। इस संदर्भ में चार भूमिकाएं हो सकती हैं : (1) मैं हिंदू हूं, मुसलमान नहीं हूं। (2) मैं मुसलमान हूं, हिंदू नहीं हूं। (3) मैं हिंदू भी नहीं हूं, मुसलमान भी नहीं हूं। (4) मैं हिंदू भी हूं, मुसलमान भी हूं। मेरी यह चौथी भूमिका है। पहली भूमिका में यह हो सकता है कि मैं हिंदू हूं और मेरे हिंदुत्व में सब समा जाता है। लेकिन 'मैं हिंदू हूं' कहने से मुसलमान से अलग पड जाता हूं। मैं दोनों नहीं हूं कहने से मेरा तीसरा पंथ बन जाता है। लेकिन 'मैं हिंदू भी हूं और मुसलमान भी हूं' कहने से हिंदू और मुसलमान, दोनों को एक प्लेटफार्म पर ला सकता हूं। इसलिए मैं 'भी' वादी हूं। [मै. 1981]

मैं गीता, जपुजी, कुरानशरीफ, बाइबिल – सब ग्रंथ पढता रहता हूं; तो लोग कहते हैं कि किसी एक किताब को पकडो। मैं कहता हूं कि मैं किसी एक किताब को नहीं पकडता; मैं अल्लाह को ही पकडता हूं। वही चीज मुफीद (लाभदायक) है, वह मुझे हर चीज में मिल ही जाती है। [मो. पै. 324]

* *

3. नबी मुहम्मद पैगंबर

स्फूर्ति का झरना

तेरह सौ वर्ष पहले की बात। रेगिस्तान में जहां भौतिक पानी का स्रोत मिलना भी कठिन है, मरीचिकाएं ही ज्यादा हैं, स्फूर्ति का एक झरना फूट निकला। सूखे अरबस्तान में स्फूर्ति का निर्झर बहने लगा। वहां पैगंबर मुहम्मदसाहब का जन्म हुआ। उन्होंने अरबस्तान का, जहां का मानवसमाज प्राथमिक अवस्था में था, नूर ही बदल दिया। आगे चलकर अरब लोगों ने बडे-बडे आंदोलन किये, लेकिन उसका प्रारंभ तो एक व्यक्ति ने ही किया। एक व्यक्ति ही प्रथम कारण बनता है। मुहम्मदसाहब की मृत्यु को 80 साल भी नहीं हुए थे कि अरबों ने अपना झंडा स्पेन से सिंध प्रांत तक फहराया। इतनी स्फूर्ति उनको कहां से मिली? मुहम्मद पैगंबर से । मुहम्मदसाहब ऊंट पर बैठकर, अरबस्तान में ऊंट जहां-जहां जा सकता था वहां-वहां गये। उन्होंने समूचे अरब-समाज को हिलाया, जगाया। कितनी स्फूर्ति से और श्रद्धा से उन्होंने यह सारा काम किया होगा ! उनकी यह स्फूर्ति अभी तक जीवित है। आज भी काम कर रही है। वह स्फूर्ति करोडों लोगों को प्रेरणा देती है। चीन, हिंदुस्तान, जावा, सुमात्रा, मध्य अफ्रीका, मध्य एशिया, इजिप्त, तुर्कस्तान, ईरान, अफगानिस्तान – सभी को वह स्फूर्ति अभी भी उत्साह देती रहती है। वह अनेक वर्षों से काम करते आयी है, आगे भी करेगी और आज भी इन सब लोगों को इकट्ठा लाने में उपयोगी होगी। [वि.सा.खं. 8.358; मै. 88]

मुहम्मद पैगंबर महान विभूति थे। 52 करोड लोग उनके पीछे गये हैं, उनके अनुयायी बने हैं। कार्लाइल मुहम्मद पैगंबर की स्तुति करने में तल्लीन हो जाता है। गिबन ने अपने प्रसिद्ध इतिहास-ग्रंथ में पैगंबर की बहुत प्रशंसा की है। 250 साल पहले सेल ने कुरान का अनुवाद किया। उसके लिए वह अरबस्तान गया, वहां कुरान पढा । 25 साल उसने उसका

अध्ययन किया, उसके बाद उसका अनुवाद किया। फिर भी प्रस्तावना में वह लिखता है कि वह अनुवाद सर्वांगसुंदर नहीं है, अपूर्ण है, इस अनुवाद से मुझे पूरा संतोष नहीं है। बर्नार्ड शॉ आज के जमाने के महाज्ञानी और तपस्वी लेखक । महात्मा गांधी इंग्लैंड गये थे, तब बर्नार्ड शॉ उनसे मिले थे। उन्होंने गांधीजी को कहा था कि मैं मुहम्मद पैगंबर पर एक नाटक लिखना चाहता था, लेकिन उसे पूरा नहीं कर सका; उनका चरित्र मुझे लुभाता है। सेल, कार्लाइल, गिबन, बर्नार्ड शॉ, ये साधारण व्यक्ति नहीं हैं। कार्लाइल एक ऋषि ही हैं। इन सबको मुहम्मद पैगंबर की स्तुति करने में धन्यता महसूस होती है।

अक्सर सवाल पूछा जाता है कि मुहम्मद पैगंबर ने बडी उम्र में छोटी उम्र की लडकी के साथ शादी कैसे की ? लेकिन इस पर थोडा सोचना चाहिए। वंश बढाना ही शादी का एकमात्र उद्देश्य नहीं होता है। केवल भोग ही अभिप्रेत नहीं होता है। कुछ विवाह भोग-वासना-विहीन होते हैं। मुहम्मद पैगंबर ने उस लडकी पर अनुग्रह (फज्ल) किया होगा। संरक्षण देने की दृष्टि से उसका स्वीकार किया होगा। वह पाणिग्रहण (शादी) केवल कल्याण-बुद्धि से किया होगा। उस लडकी का नाम था आयेशा। आयेशा नाम मुसलमान लोग बहुत पवित्र मानते हैं। जानबूझकर अपनी बेटी का नाम प्यार से आयेशा रखते हैं। ऐसे विषयों में देखना यह होता है कि उनकी उस कृति का समाज पर क्या असर हुआ। मुहम्मद पैगंबर के विवाह का समाज पर बुरा असर नहीं हुआ। वे आसक्त होते तो उनको इतने अनुयायी नहीं मिलते। तब उनके दुश्मनों ने उनकी बदनामी की होती। किसी आदमी को तलवार से मारना इतना आसान नहीं होता, जितना उसके चारित्र्य पर आक्षेप लगाकर उसको नेस्तनाबूत करना आसान होता है। वैसा नहीं हुआ। मुझे बहुत दुःख होता है कि मुहम्मद पैगंबर के लिए ऐसा क्यों सोचा जाता है ?

मुहम्मद पैगंबर का नामोच्चार होते ही मेरी मनःस्थिति समाधि जैसी हो जाती है। वे बहुत बड़े महापुरुष थे। उस रेगिस्तान के जंगली अरबों में कितनी भव्य स्फूर्ति उन्होंने पैदा

की ! जिसने ऐसी स्फूर्ति पैदा की, वह अपूर्व पुरुष ही होना चाहिए। ईश्वरदत्त देन का पुरुष होना चाहिए। आसक्त जीव ऐसी स्फूर्ति पैदा नहीं कर सकेगा। जड जीव इस प्रकार राष्ट्र को चेता नहीं सकता। महान व्यक्तियों में अपूर्वता होती है। उनकी नीति उन्हीं को पुसाती है। भागवत में शुकाचार्य कहते हैं – 'तेजीयसां न दोषाय' – महापुरुषों को दोष नहीं लगता। महापुरुष जो करता है, वह गर्ह्य नहीं होता, लेकिन अनुकरणीय नहीं होता। उन्हीं को वह पुसाता है।

इसके अलावा, एक और बात है, जो ध्यान में लेनी चाहिए। प्रत्येक काल में 'स्टैंडर्ड्स ऑफ मोरॅलिटी' – नीति-नियम भी बदलते हैं। समाज प्रगति करता रहता है। उत्तररामचरित में कहा है कि राम ने सीता का त्याग किया, तबसे जनक ने मांस खाना छोड दिया। ऋषियों को भी मांसाहारी बताया है। उस प्राचीन काल में पूरा समाज मांसाहारी था। उन्होंने प्रयोग किये। धीरे-धीरे मांस खाना छोडा। यह पूर्वजों की कमाई हमें मिली। मांसाहार छोडना था, इसलिए उन्होंने दूध पर जोर दिया। लेकिन हजारों साल के बाद शायद दूध पीना दोष माना जायेगा। समाजपुरुष धीरे-धीरे बडा होता है। पिछली पीढी के कंधे पर अगली पीढी बैठती है तो दूर का देख सकती है। मानवजाति गिरते-पडते, प्रयोग करते हुए आगे जा रही है। महापुरुषों के चरित्र में जीवन-संघर्ष होता है, काल के बंधन होते हैं। [मै. सितं. 2005]

अल् अमीन

अरबस्तान में मुहम्मद पैगंबर बहुत बडे व्यापारी थे। व्यापार तो दुनियाभर में लोग करते हैं। लेकिन आज हालत ऐसी है कि व्यापारियों पर लोग विश्वास नहीं करते। मुहम्मद पैगंबर ने जो व्यापार किया, वह इतना साफ, शुद्ध होता था कि लोग उन्हें 'अल् अमीन' कहने लगे। अल् अमीन यानी विश्वासपात्र । मुहम्मद पैगंबर ने माल दिया तो उसमें मुनाफे का विचार होगा ही नहीं, ग्राहक को पूरा संतोष होता था। मुहम्मदसाहब का वचन सत्य

होना ही चाहिए, ऐसी उनकी कीर्ति थी। उनका वचन कभी भंग नहीं होता था, शब्द कभी टूटता नहीं था।

लेकिन एक दफा उन्होंने किसी को कोई वचन दिया, कह दिया कि हां, मैं यह करूंगा, पर वह पूरा नहीं कर सके। किसी ने उनसे पूछा कि आप तो 'अल् अमीन' हैं, आपका वचन कभी टूटता नहीं, तो यह मौका कैसे आया कि वचन टूट गया ? तब उन्होंने जवाब दिया कि "मैं शब्द देने से पहले 'इन्शाअल्लाह' यानी 'अगर भगवान चाहेगा तो' नहीं बोला; 'मैं करूंगा' ऐसे अपने नाम से बोला, इसलिए वह काम नहीं हो पाया।" मुहम्मदसाहब के कहने का मतलब यह था कि मैंने जो वचन दिया, उसमें मेरा अहंकार था, क्योंकि मैंने परमात्मा का स्मरण नहीं किया था। इसलिए वह पूरा न हो सका। फिर उन्होंने यह भी कहा कि भाइयो, मैं 'अल् अमीन' नहीं, वह तो परमात्मा है। परमात्मा का जितना स्पर्श मुझे होता है, उतना ही गुण मुझमें आता है। वास्तव में वे सारे गुण परमात्मा के हैं।

मुसलमानों में कुछ बोलने से पहले 'इन्शाअल्लाह' कहने का रिवाज ही पडा है। लेकिन यह सिर्फ बोलने की बात नहीं है। मन में वैसी भावना होनी चाहिए। अपनी जिंदगी का कोई भी काम हम भगवान की इच्छा के बगैर नहीं कर सकते । जब वह चाहता है तभी वह बनता है (कुसा 106) [कुरानशरीफ 18.23-24] । [वि. प्र. 31.7.62]

इस कहानी से ध्यान में आता है कि सत्य-निष्ठा मुहम्मद पैगंबर का मुख्य गुण था। कुरान में मुहम्मद पैगंबर कई दफा बोले हैं कि 'मैं कवि थोडे ही हूं' (कुसा 9) [कुरानशरीफ 69.38-43]! व्यावहारिक भाषा में कवि यानी मूर्ख । मेरी समझ में नहीं आता था कि उन्होंने ऐसा वाक्य क्यों कहा होगा ? फिर एक जगह उनका यह वचन मिला कि 'मैं कवि थोडे ही हूं, जो बोले एक और करे एक' ! कहा जाता है कि कुरान में बहुत काव्य है। उसे अरबी-साहित्य की सर्वश्रेष्ठ किताब मानी जाती है। यह कोई केवल काल्पनिक गौरव की बात नहीं

है। कुरान धार्मिक पुस्तक है, इसलिए ऐसा कहा होगा, सो बात नहीं। आधुनिक अरबी-साहित्य को सारी स्फूर्ति कुरान से मिलती है। इतना होने पर भी उन्होंने कहा कि मैं कवि थोडे ही हूं, जो बोले एक और करे एक। इसका मतलब यह है कि मैं जो बोलूंगा, वह करूंगा, इसलिए मैं कवि नहीं हूं। इसे उपालंभ (उलाहना) मानने के बजाय, मैंने इसका अधिक सुंदर अर्थ किया है; वह यह कि – "आप लोगों के सामने मैं एक स्पष्ट चिंतन रखनेवाला हूं, जिससे कि आपको हिदायत मिले।" 'मैं कोई कवि नहीं' का मतलब यह है कि कवि की एक स्फूर्ति होती है। मैं यह बात स्फूर्ति से नहीं कह रहा हूं; बल्कि प्रत्यक्ष अनुभव से कह रहा हूं। [भू. गं. 3, वि. चिं. 32.387]

नबीयुन उम्मीयुन

मुहम्मद पैगंबर को लोग 'नबीयुन उम्मीयुन' (unlettered prophet) कहते थे। उन्होंने एक कहानी बतायी है। एक बार वे समाधि में बैठे थे, तब ईश्वर 'अल् गैब' यानी अव्यक्तरूप से आये। उनके सामने एक परचा डाला और जोरों से कहा, 'इक्रा' यानी पढ। 'इक्रा' अरबी शब्द है, उसी पर से कुरान शब्द बना है। कुरान यानी पढने की चीज। जब वह परचा सामने आया तब अल्लाह को प्रणाम करके मुहम्मद पैगंबर ने कहा, 'हे अल्लाह, मैं पढना-लिखना जानता नहीं'। तब अल्लाह (अल्लाह के दूतों) को उनके सामने प्रकट होना पडा और उनसे बात करनी पड़ी। मुहम्मदसाहब हमेशा लोगों से कहते थे कि देखो, यदि मैं पढना-लिखना जानता तो अल्लाह का दर्शन नहीं कर पाता, परचे पर ही समाधान कर लेना पडता। मैं पढना-लिखना नहीं जानता था इसलिए अल्लाह को मेरे सामने आकर बातचीत करनी पडी। [मै. 1973]

वही

वे समाधि में लीन हो जाते थे, तब पसीना-पसीना हो जाते थे। उनके नजदीक के लोग भी बिलकुल घबडा जाते थे कि यह कैसा घोर तप हो रहा है, कितनी तकलीफ हो रही

है.! लेकिन वह चीज 'वही' थी। अरबी में 'वही' का अर्थ पुस्तक या नोटबुक नहीं । परमेश्वर का संदेश मनुष्य के पास पहुंचता है, उस चीज को 'वही' कहते हैं। उसमें घोर वेदना होती है। जब परमेश्वर का संदेश मनुष्य के हृदय पर सवार होता है, तब बहुत ही तीव्र वेदना होती है, जिसके लिए उपमा प्रसूति-वेदना की ही दे सकते हैं। कुछ ऐसा महसूस होता है कि हम अपने को बिलकुल खो रहे हैं। कोई चीज हम पर हावी हो रही है। ऐसी कोई चीज, जिसे हम टालना चाहने पर भी टाल नहीं सकते। लगता है कि टले तो अच्छा है, लेकिन वह टल नहीं सकती, टाली नहीं जा सकती। ऐसी वेदना के अंत में जो दर्शन होता है, वह लोगों को चखने को मिलता है। लोगों को सिर्फ दर्शन ही मालूम होता है; उसके पहले की वेदना मालूम नहीं होती। [म. वि. 2.166]

सादगी की मिसाल

मुहम्मद पैगंबर अत्यंत सादे थे, नम्र थे। लोग उनसे पूछते कि आपके पूर्वकालीन पैगंबर चमत्कार दिखाते थे; आप ईश्वर का संदेश लानेवाले पैगंबर हैं, तो हमें चमत्कार दिखाइए। तब उन्होंने कहा – मैं क्षुद्र मनुष्य हूं, चमत्कार क्या दिखाऊं ? भगवान की सृष्टि चमत्कार से भरी हुई है। क्या यह चमत्कार नहीं है कि इस वीरान रेगिस्तान में खजूर के पेड हैं ? क्या यह कम चमत्कार है कि चरने गये मवेशी आपके लिए प्रेम होने के कारण वापस घर आते हैं ? क्या यह चमत्कार नहीं कि समुद्र के सीने पर छोटी-सी नाव डोलती है ? और क्या यह भी चमत्कार नहीं है कि आपके जैसे शिक्षित, पढे-लिखे लोगों को मेरे जैसा अनपढ बोध दे रहा है, मेरे जैसा अनाडी कुरान बोलता है ? इससे बढकर और क्या चमत्कार हो सकता है ? [मै. सितं. 2005]

वे अत्यंत सादगी से जिंदगी जीये। खजूर और सूखी रोटी उनका आहार था। बकरी का दूध पीते थे। शरीरश्रम के कई प्रकार के काम वे करते थे। बकरी का दूध खुद दोहते थे,

आटा पीसते थे। इन कामों को वे परमेश्वर की सेवा समझते थे और इज्जत महसूस करते थे। वे फकीर से राजा बने, लेकिन उनकी रहन-सहन में कोई फरक नहीं हुआ। उनकी पत्नी ने मुहम्मदसाहब के मृत्यु के समय का वर्णन किया है कि उस दिन उनके घर में दो ही पदार्थ थे। एक था खजूर और दूसरा था पानी। इस पर से ख्याल कर सकते हैं कि वे किस प्रकार के श्रमण थे। बडे-बडे महापुरुष हमेशा शरीरश्रम (मेहनत-मशक्कत) करते थे। यह बात भगवान कृष्ण के जीवन में भी पायी जाती है। मुहम्मद नबी, ईसा मसीह, गौतम बुद्ध, सभी श्रम पर निष्ठा रखते थे। और बिलकुल गरीबी में जीवन बिताते थे । [18.9.63]

मुहम्मद पैगंबर बहुत उपवास (फांका) करते थे। लेकिन लोगों को उन्होंने सिर्फ रमजान में रोजा रखने के लिए कहा। लोगों ने उनसे पूछा, आप तो इतने उपवास करते हैं और हमको सिर्फ रोजा रखने के लिए कहते हैं, ऐसा क्यों ? उन्होंने जवाब दिया कि मुझे दो जगहों से खाना मिलता है। एक तो आप सब लोग खाते हैं वह खाना और दूसरा मुझे भगवान से रूहानियत का खाना मिलता है। मुझे अंदर से खाना मिलता है। वह खाना तुम लोगों को नहीं मिलता, इसलिए तुम लोगों को सिर्फ रोजे रखने के लिए कहा। [वि. सा. खं. 8.363; मै. 66]

सुरतुल तिजारत

मुहम्मद पैगंबर घूमते थे, तो बहुत थोडे लोग उनकी बात सुनने के लिए आते थे, बहुत सारे तो सुनते ही नहीं थे। एक बार प्रार्थना चल रही थी, तो वहां एक आता और दूसरा जाता, यही चल रहा था। आखिर सभी व्यापारी तिजारत (धंधे) के लिए चले गये और पैगंबर अकेले रह गये। इस पर उन्होंने एक अध्याय ही लिखा है – 'सुरतुल तिजारत' । उसमें वे कहते हैं कि अरे, बाजार तो चलता ही रहेगा, लेकिन शुक्रवार को तो नमाज की ओर ध्यान दो। उन्हें दुःख हुआ कि मैं कहता जा रहा हूं, लेकिन लोग तो सुनते ही नहीं है। यह देख

अल्लाह ने मुहम्मदसाहब को फरमाया कि क्या तू जगत्कर्ता है ? क्या तेरी इच्छा से जगत् चल रहा है ? तेरे पर इतनी ही जिम्मेवारी है कि मेरा पैगाम लोगों के पास पहुंचाओ, नाहक अहंकार का बोझ मत उठाओ। जो सृष्टि का कर्ता है, वही उसका पालन-कर्ता है, वही उसका बोझ उठायेगा। तुम तो मेरा संदेश पहुंचानेवाले हो । ... **अलैकल् बलागु व अलै नल् हिसाबु** (कुसा 338) [कुरानशरीफ 13.40] – तुम्हारा काम है पहुंचाने का, मेरा काम है हिसाब लेने का । तुम नबी हो, संदेशवाहक हो । डाकिया केवल चिट्ठी पहुंचाता है। सामनेवाले ने चिट्ठी पढी तो वह उसका काम है, फाड डाली तो वह उसका काम है। डाकिये का काम सिर्फ चिट्ठी पहुंचाना है। हिसाब वहां ऊपर होगा। [8.7.58]

एकदफा पैगंबर अपने एक साथी के साथ जंगल से भाग रहे थे। पीछे से दुश्मनों की बडी फौज आ रही थी। साथी घबडा गया और कहने लगा – हमारा पीछा फौज कर रही है और हम सिर्फ दो हैं। तब मुहम्मदसाहब ने कहा, तुम गुरूर में, ऐसे भ्रम में मत रहो कि हम सिर्फ दो हैं। हम दो नहीं, तीन हैं। वह तीसरा दीखता नहीं, अदृश्य है, लेकिन वह है और जबरदस्त है। वही सबसे श्रेष्ठ है। वह लाखों की सेना से ज्यादा बलवान है। उसको ईश्वर नाम दो या कोई तत्त्व-विचार का नाम दो, अर्थ एक ही है कि प्रेरणा और बल उसका रहेगा और हम उसकी शरण में होंगे। हम अपना अहंकार छोडकर अपने आपको शून्य बना लेंगे। [30.4.63]

हिजरत

मुहम्मद पैगंबर को लोगों ने इतनी तकलीफ दी कि उन्हें मक्का छोडना पडा । और अपने लोगों को लेकर मदीना जाना पडा। अरबी में उसे हिजरत कहते हैं। उन्होंने तय किया था कि हम भगवान के आधार पर यानी सत्य के आधार पर काम करेंगे । उसके लिए हमारा साधन है सब्र यानी धीरज, शांति। उनके साथी उनकी नसीहत के अनुसार जिंदगी बिताने

की कोशिश करते थे। इसलिए उनके शिष्यों को बहुत सताया गया। बहुत तकलीफ हुई। तब मुहम्मदसाहब ने कहा कि 'हम हिजरत करेंगे, इन लोगों को छोडेंगे।' इस प्रकार परिस्थिति के कारण उनको मक्का से भागकर मदीना जाना पडा। उनका चिंतन पूर्ण अहिंसक था। तब तक उन्होंने अत्यंत तितिक्षा और सहनशीलता बरती और सबको यही समझाया कि हमारे विचार परमेश्वर की हमारे लिए देन है, इसवास्ते लोग तकलीफ देते हैं तो उसे सहन करना चाहिए। लेकिन वहां, नयी जगह पर भी विरोधियों ने उनको छोडा नहीं, बहुत सताया। उनके साथी डरने लगे। उनके बार-बार समझाने के बावजूद कि 'अल्लाह हमारे साथ है, डरो मत' अनुयायी डरने लगे। क्षमा, तितिक्षा, अहिंसा के नाम पर पलायन करने लगे। तब मुहम्मदसाहब ने कहा कि 'डरने की अपेक्षा तो अल्लाह की सेवा में लडना अच्छा' और आत्मरक्षा के लिए शस्त्र धारण किये, अनुयायियों से भी करवाये और सशस्त्र प्रतिकार की अनुमति दी (कुसा 243, 244) [कुरानशरीफ 22.39-40, 58-60] । वह धर्मयुद्ध के तौर पर दी। उसका नतीजा क्या आया, वगैरह सब इतिहास का विषय है। लेकिन इस तरह आरंभ में हिंसा के लिए जो सम्मति दी गयी वह विचार-प्रचार के लिए नहीं, विचार-बचाव के लिए दी गयी। [1.6.58]

आखिर अरबस्तान में जब राजसत्ता इन लोगों के हाथ में आयी तब भी वे धर्म-नियम पर चले। इसकी उत्तम मिसाल खलीफा उमर की है। वे मुहम्मद पैगंबर के शिष्य थे। उनका किसी के साथ धर्मयुद्ध चला। उमर ने उसकी तलवार तोड दी और उसे नीचे गिराकर उसकी छाती पर बैठ गये । तलवार उठाकर उसका सिर काटनेवाले ही थे, इतने में वह नीचे गिरा हुआ मनुष्य उन पर थूंका । तुरंत ही उमर हट गये और तंबू में चले गये। उनके साथी बोले, यह आपने क्या किया ? वह आदमी तो पूरा आपकी पकड में आ गया था और वह आप पर थूंका; तो भी आपने उसे क्यों छोडा दिया, मारा क्यों नहीं ? तब उमर बोले, 'मैं धर्मयुद्ध कर रहा था। वह आदमी थूका इसलिए मुझे गुस्सा आ गया। इसलिए मैं धर्मयुद्ध

का अधिकारी नहीं रहा। क्रोध आया तो वह धर्मयुद्ध नहीं रहा।' इस पर से ध्यान में आता है कि हिंसा को उन्होंने किस प्रकार सम्मति दी थी। [वि.चिं. 36.381-383]

बुराई भलाई से रफा

कुरान में यह आदेश मिलता है कि 'पाप का प्रतिकार पुण्य से ही होना चाहिए।' वहां का यह प्रसिद्ध वाक्य है कि 'बुराई रफा (दूर) करनी है, तो वह अच्छाई से ही हो सकती है (कुसा 233) [कुरानशरीफ 23.96-98] ।' अच्छाई से ही उसे रफा करो, यह बेहतर तरीका है; लेकिन वह न बन रहा हो और बचाव के लिए जितना जरूरी है उतना ही, और किसी प्रकार की क्रूरता के बिना शस्त्रों से लडते हों तो वह क्षम्य है। उन्होंने जो किया वह अहिंसा कायम रखकर किया। अपना यह सिद्धांत कायम रखा कि 'बुराई भलाई से रफा होती है। भलाई से बुराई का सामना करो' । प्रत्यक्ष में जो किया वह मजबूरी से किया, यह मानकर कि जो करना जरूरी है वह न करने पर उससे ज्यादा बुराई होगी। संभव है, उनके निर्णय में कुछ दोष हुआ हो। लेकिन हम उसका न्याय नहीं कर सकते। हमें मानना होगा कि उस जमाने में जो हालात थे, उसमें जो बेहतरीन हो सकता था, वही उन्होंने किया। उसी में हमारी नम्रता और बुद्धिमत्ता है। आज के हालात का ख्याल कर हम निर्णय लें और उस जमाने के लोगों पर लादें, यह उचित नहीं होगा। [29.4.63]

हम सामनेवाले से लड़ें, लेकिन उसके लिए मन में दुश्मनी न हो। हम फर्ज के लिए लड रहे हैं, जब्त के साथ, संयम के साथ लड रहे हैं, मन में वैर नहीं है, ऐसा होना चाहिए। गीता ने यही कहा है – लडना है तो लडो, लेकिन निर्वैर होकर तटस्थ बुद्धि से शांत होकर लडो । हम तो मानते हैं कि जैसे-जैसे विज्ञान बढेगा, वैसे-वैसे समझ में आयेगा कि अगर क्रोध आयेगा, दिमाग ठंडा नहीं रहेगा, तो निशाना गलत होगा। इसलिए विज्ञान के लिए और धर्म के लिए भी दिमाग शांत रखकर काम करना लाजमी होता है। फिर तो वहां प्यार

शुरू हो जाता है। राम-रावण का युद्ध हुआ। रावण की हार हुई। वह मर गया, तो राम ने उसके श्राद्ध की व्यवस्था की थी। मतलब यह कि जिसके साथ लडना है, उसके लिए मन में प्रेम और इज्जत होनी चाहिए। तभी वह धर्मयुद्ध होता है। इसलिए दिल और दिमाग शांत रखें। [मै. जुलाई 91]

परंपराएं दो प्रकार की होती हैं – एक वीरों की, दूसरी संतों की। समाज-व्यवस्था की जिम्मेवारी उठानेवाले वीर-परंपरावाले और समाज में चित्तशुद्धि का विचार फैलाकर सामाजिक क्रांति लानेवाले संतों की परंपरावाले। रक्षा के लिए शक्ति की उपासना और समाजशुद्धि के लिए करुणा की उपासना। जिनके जीवन में दोनों तत्त्व एक हो गये हों, ऐसी कोटि के थे मुहम्मद पैगंबर ! ऐसे ही और उदाहरण विश्व के इतिहास में मिलते हैं। एक ही शख्स जब वीर पुरुष का रूप लेकर हाथ में तलवार उठाता है और संत बनकर भगवद्-भक्ति की बात करता है, तब विरोध भी आता है। उसमें दो विचार-प्रवाह मिलते हैं, लेकिन कुछ विरोध के साथ। समाजरक्षा की जिम्मेवारी एक विचार और समाज के लिए कारुण्य दूसरा विचार। रक्षा के लिए शक्ति की उपासना और समाज-शुद्धि के लिए करुणा की उपासना ! शुद्धि और शक्ति, दो देवता की उपासना करने में कुछ न कुछ विरोध आता है। उस विरोध को पचाकर उपासना करनेवाले मुहम्मद पैगंबर जैसे कुछ निकल आते हैं। [भू.गं. 7.132]

एक भी चित्र नहीं

मुहम्मद पैगंबर करोडों मुसलमानों के आराध्य हैं। लेकिन उनका एक भी चित्र कहीं नहीं है। वे नबी थे, और बादशाह थे। अगर उनका जरा भी इशारा होता तो उनके जीवन के हजारों चित्र देखने को मिलते। लेकिन उन्होंने साफ कह दिया कि हम अल्लाह के गुलाम हैं। हम तो इनसान है। इनसान की तसवीर या मूर्ति हरगिज नहीं हो सकती। इसलिए आज

उनका एक भी चित्र नहीं है। मुहम्मद पैगंबर की इस मिसाल को दुनिया में दूसरा जोड नहीं। देह का कोई महत्त्व ही नहीं माना। एक अनुपम उदाहरण है। दुनिया के लिए यह एक बहुत बडी बात है। और मुझे इसके लिए अत्यंत आदर है। आगे उनके बाल का संग्रह करना (हजरतबाल) वगैरह चला। यह इस्लाम नहीं है, फिर भी चला। मैं इस पर टीका नहीं कर रहा हूं। लेकिन यह बात समझ में नहीं आती।

संप्रदायों का एक-दूसरे पर असर पडता है, इसका यह एक उदाहरण है। भगवान बुद्ध का दांत भी संभालकर रखा गया है। इन सबका एक-दूसरे पर असर पडता है। जब ऐसा किया जाता है तब उसके लिए आदर रखना जरूरी हो जाता है। फिर उसमें से झगडे भी पैदा होते हैं। इसी लिए मैं कहता हूं कि संप्रदाय के दिन बीत गये; अब संप्रदाय की जगह अध्यात्म की स्थापना करनी होगी। मुझे कहना यह है कि मुहम्मद पैगंबर ने व्यक्ति-निरपेक्ष विचार बतलाया। और मानना पडेगा कि सारा कुरान पढने पर भी, जैसे कृष्ण लीला के बिना भागवत नहीं, ख्रिस्त-लीला के बिना बाइबिल नहीं, वैसा यहां नहीं दीखता, मुहम्मद पैगंबर के बिना कुरान है। कुरान में मुहम्मद पैगंबर की थोडी जानकारी मिलती है, लेकिन वह निकाल दें तो भी कुरान का नुकसान नहीं। यह एक चीज उनसे लेनेलायक है – व्यक्ति-निरपेक्ष चिंतन !

पैगंबर गया, अल्लाह कायम है

खलीफा अबुबकर मुहम्मदसाहब के साथी थे और बाद में खलीफा बने । उनके बारे में मुहम्मदसाहब कहते हैं कि “मैं उस पर सबसे ज्यादा प्यार कर सकता हूं, अगर एक शख्स से दूसरे शख्स पर ज्यादा प्यार करने की मनाही न हो।” यानी खुदा की तरफ से एक शख्स से दूसरे शख्स पर ज्यादा प्यार करना मना है। इस तरह मनाही न होती तो मैं

ज्यादा प्यार करता । अबुबकर को लोग सत्यवादी मानते थे, उन पर लोगों का विश्वास था। मुहम्मदसाहब की मृत्यु हुई तब अबुबकर को लोगों को समझाना पडा ।

मुहम्मद पैगंबर ने बार-बार कहा था कि भाइयो, मैं केवल एक मनुष्य हूं। मैं परमेश्वर नहीं हूं, परमेश्वर की जगह मैं नहीं बैठ सकता। मैं मर्त्य हूं। लेकिन उनके कई ऐसे साथी निकले, जिन्होंने उनको परमेश्वर कहा। जहां गुणों का प्रकाशन ज्यादा होता है, वहां मनुष्य की आंखें चौंधियां जाती हैं। इसलिए उनके बार-बार इनकार करने के बावजूद लोग उन्हें परमेश्वर मानते। जब उनकी मृत्यु हुई तब उनके अनुयायियों को विश्वास नहीं हुआ कि मुहम्मदसाहब नहीं रहे। वे उनको अमर समझते थे। आखिर अबुबकर को मस्जिद के ऊपर चढकर लोगों को कहना पडा। उन्होंने कहा – "पैगंबर गया, अल्लाह कायम है।" तब लोगों ने माना। [वि. प्र. 8.5.65]

इस तरह जिनका ग्लोरिफिकेशन और डीइफिकेशन हुआ वे मनुष्य नहीं रहे। जैसे हिंदूधर्म में राम-कृष्ण और ईसाइयों में ईसामसीह का हुआ। भगवान बुद्ध और मुहम्मद पैगंबर की भी यही हालत है। उनके समग्र चरित्र की छानबीन हम नहीं कर सकते । [मै. 65]

दुनिया में कई सोचनेवाले ऐसे होते हैं, जो बात-बात में कह देते हैं कि यह नया आविष्कार है, इस मनुष्य के द्वारा ज्ञान में इतनी नयी वृद्धि हुई वगैरह। एकबार एक मित्र से बात हो रही थी। वे इतिहास वगैरह बहुत ज्यादा जानते थे। मुझे मुहम्मद पैगंबर की महिमा कहने लगे कि अरब लोग बिलकुल गिरे हुए, जानवर के समान थे और उनको मुहम्मदसाहब ने ऊपर उठाया। फिर बापू की मिसाल दी कि किस तरह बापू ने हमको ऊपर उठाया। मैंने कहा कि न मैं वह मुहम्मदसाहब का चमत्कार मानता हूं, न बापू के बारे में वैसा मानता हूं। अरब लोग जानवर के समान थे तो मुहम्मदसाहब को भाषा कहां से मिली? इतना

सारा कुरान एक अनपढ मनुष्य का काम है। शब्द तो उनको वही मिले जो अरबों में चलते थे। नया शब्द बनाना नहीं पडा । बल्कि जिस अल्लाह पर मुहम्मद पैगंबर का इतना जोर है, वह अल्लाह शब्द भी उनका अपना बनाया हुआ नहीं था। वह पुराना शब्द है। क्या किसी जानवर के पास अल्लाह शब्द है ? जिस समाज के पास अल्लाह, शांति, सत्य ये सब शब्द हैं, वह समाज गिरा होगा, तो एक थकान के तौर पर गिरा होगा। ऐसी थकान आती है समाज को बीच-बीच में, होती है गिरावट भी । [23.2.54]

जैसी नदी गिरिगुहा में पैदा होती है और एकांत में बहा करती है वैसे ही महान विचारों का जन्म किसी हृदयगुहा में होता है, फिर वह विचार एकाकी विचरता है। मनुष्य, जिसे यह विचार सूझा, वह तो निमित्तमात्र होता है। बुद्ध भगवान ने जब नया विचार पाया तो अकेले ही घूमते रहे। मुहम्मद पैगंबर को जब दर्शन हुआ तब आरंभ में बहुत थोडे ही साथी उनके साथ थे। भगवान बुद्ध एक हो गये, मुहम्मद पैगंबर एक हो गये, लेकिन इतिहास बताता है कि इस एक से कितना फरक हुआ ! एक मनुष्य की सचाई का असर समाज पर कितना पडता है ! समाज में उसकी सचाई फैलती है; क्योंकि उसको अपनी सचाई का कोई अहंकार नहीं होता। उसको चिंता नहीं होती कि उसकी सचाई का समाज पर क्या असर होता है।

* *

4. अल् फातिहा

अल् फातिहा कुरानशरीफ का पहला अध्याय है, एक मंत्र है, जो मुसलमानों में हर अवसर पर बोला जाता है कि “अल्लाह के नाम से आरंभ करता हूं...’। धार्मिक कार्य हो, उत्सव-समारोह हो, कोई काम हो, जो भी करना है, शुरुआत करते समय यह अवश्य बोलना है। अल् फातिहा में प्रार्थना की है कि परमेश्वर हमें सीधी राह दिखायें ।

पहला चरण है – **बिस्मिल्लाहिर् रहमानिर्रहीम** – आरंभ में भगवान का नाम, जो कृपावान है, करुणावान है। परमात्मा परम कृपालु, अतीव करुणावान है। नबी (मुहम्मद पैगंबर) भगवान को करुणा के रूप में देखते हैं। रहीम का अर्थ है, रहम करनेवाला, दया करनेवाला। जैसे करीम, हकीम शब्द हैं। हकीम यानी बडा सयाना । वैद्यों को हकीम कहा जाता है; क्योंकि वे ज्ञानी होते हैं। करीम का अर्थ है, अत्यंत उदार। वैसे रहीम यानी परम दयावान। ईश्वर के ये नाम मुसलमानों में अत्यंत प्रिय हैं। [मै. जुलाई 70]

अब यह तो नहीं हो सकता कि हम करुणावान भगवान का नाम लिया करें और शोषण भी करते जायें। अल्लाह यानी ईश्वर शब्द करीब-करीब निर्गुणवाचक है। मतलब, वह शब्द किसी भी गुण का दर्शक नहीं है। वह केवल शब्दमात्र है। एक चिह्न है। लेकिन उसी को सगुणरूप में पहचानने की बात आते ही ईश्वर के सब गुणों का समुच्चय मुहम्मद पैगंबर को रहम – दया शब्द में मिला। इसका मतलब यह है कि जब हम भगवान को दयावान कहकर पुकारते हैं, तो हम कैसे निष्ठुर बन सकते हैं ? हम यदि दूसरों के दुःख पर दया न करें, ऊंच-नीच का भेद करें, तो ईश्वर की दया किस तरह पायेंगे ? सबको समभाव से प्यार करना, सबकी सेवा करना ही वास्तविक धर्म है, परमधर्म है, बाकी सब गौण है। [मै. जन. 76]

दूसरा चरण है, **अल् हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आलमीन** – स्तुति उस भगवान की, जो प्रभु – स्वामी विश्व का ।

तीसरा चरण, **र्रहमानिर् रहीम** – कृपावान, करुणावान । [मै. दिसं. 98, भू.य. 23.10.59]

चौथा चरण, **मालिकि यौमिद्दी** – स्वामी आखिरी दिन का। वही मालिक है। [वि. चिं. 14.98]

यासीन पाठ के आखिर में आता है कि जिसने हरी चीजों में से यानी पेड की लकडी से अग्नि पैदा की, वह क्या तुम्हें फिर से जिला नहीं सकता है ? तुम क्या सोचते हो कि तुम मरोगे ? तुम्हें फिर से पैदा होना होगा, काम करना होगा, मुलाकात करनी होगी। वहां तुम्हारे अच्छे-बुरे काम देखे जायेंगे और उसके मुताबिक फल मिलेगा।

किसी को मरते समय भी यदि पश्चात्ताप हुआ और उसने हरिस्मरण किया तो उसका उद्धार हो सकता है – ऐसी उदारता हिंदूधर्म ने रखी है; लेकिन ऐसी छूट मुस्लिमधर्म में नहीं। मुस्लिमधर्म में कहा है कि अल्लाह आपकी मदद करने तैयार है, लेकिन अंतिम क्षण, में वह मदद नहीं देगा। आखिरी घडी अल्लाह ने अपने हाथ में रखी है। **मालिकि यौमिद्दीन** – अल्लाह अंतिम क्षण का मालिक है। हम आखिरी क्षण में कहेंगे कि भगवान अब मुझे क्षमा कर, तो चलेगा नहीं। उससे पहले क्षण पश्चात्ताप करेंगे, तो वह क्षमा भी कर दें। मृत्यु के समय आप बडी-बडी सिफारिशें लायें, तो भी उनका कोई लाभ नहीं। उस समय तो अल्लाह आपकी करनी का परीक्षण करेगा। उस अंतिम क्षण के पहले तक आपको जो करना है, करो। पश्चात्ताप करो, कुछ भी करो। कुरान कहता है कि आप परमेश्वर पर ईमान रखते हों तो वैसा आचरण करना चाहिए। यानी सदाचार भी आवश्यक है। इस तरह उन्होंने अंतिम क्षण के पश्चात्ताप को प्रतिबंध (मनाही) किया है। इतना होने पर भी मुसलमानों में मरने के

समय यासीन पाठ चलता है और मरने के बाद भी मदद मिले इसलिए पाठ किया जाता है। [वि. सा. खं. 8.382]

पांचवा चरण, **इय्याक नअ्बुदु व इयाक नस्तअीन** – तेरी करें भक्ति, तेरी ही करें याचना । [शां. या. 10.5.48]

छठा चरण, **इह्दि नस् सिरातल् मुस्तक़ीम** – सीधा रास्ता दिखा तूं हमें । [से. 48.125]

सातवां चरण, **सिरातल् लजीन अन्अम्त अलैहिम्** । **गैरिल् मग़्दूबि अलैहिम् व लद्दाल्लीन** – जिन पर तुम करते हो कृपा उनका; न कि उनका जिन पर प्रकोप उतारते हो, न उनका जो भ्रमित हैं।

इह्दि नस् सिरातल् मुस्तकीम, सिरातल् लजीन अन्अम्त अलैहिम् । हे भगवान् ! हमें सीधी राह चाहिए। गलत राह से हम मुकाम पर नहीं पहुंच सकते । कभी-कभी यह आभास होता है कि हम मुकाम पर पहुंच गये; परंतु असल में जन्नत में जाने के बजाय जहन्नुम में पहुंच जाते हैं। इसलिए हम सीधी राह से यानी सुपंथ लेकर आदर्श की तरफ पहुंचें। उपनिषदों में भी कहा है – **अग्ने नय सुपथा राये** – अग्निदेव, हमें सुपंथ से ले जाओ। इनसान को भगवान ने ऐसा पैदा किया है कि उसे न तो इधर झुकना चाहिए न उधर ही। बल्कि जैसा कि कुरान में कहा है, 'सिरातल् मुस्तकीम्' सीधी राह लेनी चाहिए। [ह. से. 12.2.55]

भगवान हमें सीधी राह बतावें, टेढी राह न बतावें । हम जानते हैं कि टेढी राहें करोडों हो सकती हैं, लेकिन सीधी राह एक ही तरह की हो सकती है। उसका प्रकार एक ही होता है। सीधी राह बतानेवाले मंत्र, चाहे अरबी में हो, संस्कृत में हो या तमिल में हो, ईश्वर के पास पहुंचानेवाले हैं। एक लफ्ज में कहा जाये तो सब धर्म सत्य के दर्शन के लिए हैं। सत्य का

पूरा दर्शन इस देह में होना मुश्किल है। उसका एक पहलू भी हाथ आ जाये तो काम हो जाता है।

मैं बीच-बीच में अल् फातिहा गाया करता हूं। 1940 में मैंने उसका मराठी में अनुवाद किया था। लेकिन मैंने देखा, अरबी के अभिमानी लोगों को उससे संतोष नहीं होता, यद्यपि अनुवाद की दृष्टि से उन्हें उसमें कोई दोष नजर नहीं आया। लेकिन उसे गाने से उन्हें यह नहीं लगता कि कुरान से गाया गया है। यही हाल संस्कृत के अभिमानियों का है। गीताई, जो गीता का मराठी अनुवाद है, उसे हम वर्षों से बोलते हैं। वह आम जनता में भी पहुंच चुका है। लेकिन यह कहनेवाले मिलते हैं कि संस्कृत गीता पढकर भले ही अर्थ समझ में न आये तो भी चलेगा, लेकिन गीताई से समाधान नहीं होता। जिन मंत्रों के अर्थ को उतना महत्त्व नहीं, केवल जप से ही सिद्धि प्राप्त करने की कल्पना रहती है, उनके बारे में अनुवाद से काम नहीं चलेगा, यह मैं समझ सकता हूं। लेकिन गीता, कुरान आदि ग्रंथ वैसे नहीं हैं। वे तो जीवनोपयोगी और चित्तशुद्धि के लिए हैं। ऐसे ग्रंथ केवल घोखने से लाभ नहीं होगा। उनको समझ लेना चाहिए।

केवल रटने से काम नहीं चलता, अर्थ समझे बिना शब्दों का उच्चारण भी निर्दोष नहीं होता। फिर तो वहां केवल शब्दों का ही लोभ हो जाता है। उच्चारण चाहे सदोष ही क्यों न हो, पर क्योंकि संस्कृत, अरबी, हिब्रु आदि भाषाएं धर्मभाषाएं मानी गयी हैं इसलिए उन भाषाओं में पठन करने से ही पुण्यलाभ होता है, यह केवल एक अंध (झूठा) विश्वास ही है। जहां मनन न हो, चित्तशुद्धि का अनुभव न होता हो, वहां सिर्फ यांत्रिक क्रिया द्वारा पुण्य प्राप्त करने की यह वृत्ति है। मैं इसको चोरी की नीयत मानता हूं। बिना परिश्रम किये धन लूटने जैसी यह वृत्ति है। चित्तशुद्धि की तकलीफ के बिना ही पुण्य हमारे नाम पर जमा होता रहे, इस भावना से ही अभी तक धर्म की काफी हानि हुई है।

यदि धर्म जीवन की चीज है, तो उसकी प्राप्ति के लिए मातृभाषा के अलावा दूसरी किसी भाषा की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। मातृभाषा के अलावा एक राष्ट्रभाषा या प्रांतीय भाषा की कल्पना मैं कर सकता हूं। पर धर्म के लिए भी जब किसी अन्य भाषा की कल्पना की जाती है, तब समाज को खतरे में समझना चाहिए। जिस माता के दूध से बालक को पोषण मिलता है, उसी माता की भाषा के द्वारा धर्म की शिक्षा मिलनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं है और धर्म ताले में बंद ही पडा है, मतलब सिर्फ संस्कृत, अरबी, हिब्रु जैसी किसी खास 'धर्मभाषा' के ज्ञान से ही खुल सकता है, तो समझना चाहिए कि वह धर्म और वह समाज खतरे में है। इसमें संस्कृत, अरबी के अध्ययन का निषेध नहीं है। जो इच्छुक हैं, वे जरूर सीखें। मेरा इतना ही कहना है कि धर्मभावना के विकास के लिए मातृभाषा का सहारा लेना चाहिए।

* *

5. ईश्वर अल्लाह –

तौहीद

परमेश्वर एक है, इस विचार का कुरान में जोर देकर प्रतिपादन किया है। इसे 'तौहीद' कहते हैं, यानी एकेश्वरवाद । यह ऐसी बात है, जो दिमाग को साफ रखती है। मुहम्मद पैगंबर ने इस बात का बार-बार जिक्र किया है। इसलिए माना भी जाता है कि 'एकेश्वर' के विचार को मुख्यतया मुहम्मद पैगंबर ने दुनिया के सामने रखा। उन्होंने ईश्वर की कोई प्रतिमा, चित्र, चिह्न नहीं माना। ईश्वर के साथ बाप, बेटा, मां, पति ऐसा कोई रिश्ता भी नहीं जोडा । बल्कि पैगंबर को भी ईश्वर का अवतार नहीं माना। वैसे बाइबिल में भी आता है कि ईश्वर एक ही है; परंतु उसके साथ माता मेरी, ईसा और पवित्र आत्मा जुडे हुए हैं। कुरान में ऐसा कोई जुडा हुआ भाव नहीं मिलता। [शां. या. 14.5.48]

भारतीय दर्शन में अद्वैत भाव है। (अंतिम तत्त्व) ब्रह्म को यहां निर्गुण निराकार माना गया है। इस्लाम कहता है कि ईश्वर एक है और वह निराकार सगुण है। निराकार माना, साकार नहीं। तीन प्रकार की भूमिकाएं हैं। प्रथम भूमिका है निर्गुण निराकार की, जो भारतीय दर्शन में मिलती है। दूसरी भूमिका सगुण निराकार की। मुहम्मद पैगंबर और ईसा मसीह ईश्वर को सगुण निराकार मानते हैं। वे कहते हैं, भगवान के गुण हैं, शक्ति है, लेकिन वह निराकार है, उसे आकार नहीं। और तीसरी भूमिका है सगुण साकार की। भक्तजन सगुण साकार को मानते हैं। मुझे लगता है कि मुहम्मद पैगंबर सगुण सक्रिय निराकार तक आयेंगे। क्योंकि भगवान उत्पत्ति-लय करता है। मतलब ईश्वर के साथ क्रिया तो है, लेकिन आकार नहीं है। बिना आकार लिये जन्म-मृत्यु देना, न्याय करना, क्षमा करना इत्यादि सब करता है। सगुण है, क्रियाशील है, परंतु निराकार है। उन्हें लगता है, आकार आया यानी अपनी

भूमिका से नीचे उतरा। जहां आकार आया, वहां विकार आया। इसलिए वह निराकार है। सगुण निराकार ईश्वर और एक ईश्वर इस्लाम की विशेषता है। [वि.सा.खं. 8.402, 362]

मूर्ति-पूजा

हिंदुस्तान में यह जो भावना बढी कि इस्लाम इसके खिलाफ है कि भगवान मूर्ति में है, इसको जरा ठीक तरह से समझ लेना होगा। इस्लाम साकार को मानता नहीं। भगवान अमूर्त (बिना आकार के) है। स्थूल मूर्ति में भगवान को मानकर केवल उसकी ओर देखा करें और दुनियाभर के अपने अन्य व्यवहार में भगवान की गैरहाजिरी मानें, तो हम बडा धोखा खायेंगे। मंदिर में मूर्ति का – भगवान का दर्शन कर बाहर आने के बाद सामने कोई कुत्ता दीखे और उसका हम तिरस्कार करें तो कहना होगा कि भगवान का दर्शन नहीं मिला। इसलिए जो केवल एक विशेष मूर्ति में आसक्त होंगे, वे बहुत धोखे में रहेंगे। इस प्रकार की गंभीर सूचना कबीर, नानक आदि निर्गुण निराकार उपासकों ने भी दी है। कुरान में भी यही विचार मिलता है। परंतु इसका अर्थ मैं इस प्रकार करता हूं कि उन्होंने वस्तु-दर्शन की दूसरी बाजू समझायी, जिससे एकांगी वस्तु-दर्शन न हो । [वि. चिं. 26, 27]

अलग-अलग गुणों पर से परमात्मा के अलग-अलग नाम पडे हैं। हिंदुओं ने इन नामों के अनुसार भगवान की अलग-अलग मूर्तियां बनायीं। मूर्ति यानी भगवान के गुणों का चित्र। उन चित्रों पर से उपासना (इबादत) करने का तरीका हिंदुओं ने निकाला। चित्रों से जैसे सहूलियत होती है, वैसे गलत ख्याल भी आ सकता है। इसलिए चित्रों का मोह छोडकर इस्लाम ने साफ तौर पर एक ही चीज को दुनिया के सामने रखा। यह इस्लाम का उपकार है। उसकी हमको कद्र करनी चाहिए। और सबका अंतर्यामी परमात्मा एक ही है, यह विश्वास दृढ करना चाहिए। [शां. या. 14.5.48]

इसी तरह हिंदूधर्म की मूर्तिपूजा को भी समझ लेना चाहिए। ऊपर-ऊपर से देखनेवाले को लगता है कि हिंदूधर्म में अनेक देवताओं की पूजा की जाती है। परंतु यह सही नहीं है। मुहम्मद पैगंबर के समय अरबस्तान में जो अनेक देवताओं की पूजा चलती थी, उसका स्वरूप बिलकुल ही अलग था। हिंदूधर्म में विष्णु, शिव, गणपति, ये जो देवता हैं, जिनकी पूज़ा की जाती है, वे सब एक ही परमेश्वर के अंग माने जाते हैं। लोग जानते हैं कि एक ही भगवान के वे अलग-अलग नाम हैं। बाइबिल या कुरान में जिस मूर्तिपूज़ा का निषेध किया है वह सुसंस्कृत हिंदूसमाज में प्रचलित नहीं। परमेश्वर के गुण अनंत है। एक-एक गुण या एक-एक गुण-समूह को सूचित करनेवाली मूर्ति-उपासना यानी मूर्तिद्वारा अमूर्त की उपासना हिंदू करता है। मूर्ति गुण की प्रतीक है। साधकों की मुख्य साधना चित्तशुद्धि यानी सद्गुण-विकास की होती है। सारांश, मूर्तिपूज़ा अनिवार्य नहीं, परंतु गुण-प्रतीक न्याय से मूर्ति का उपयोग कर सकते हैं और वह ठीक भी है।

ये सब देवता एक ही भगवान की अलग-अलग ताकतें हैं। यह भावना यहां के लोगों में दृढमूल होने के कारण यहां ‘अल्लाह एक ही है’ का विचार मान्य करने में कोई अडचन नहीं आयी । [मै. 1992; वि. चिं. 12.45]

मुसलमान लोग भगवान के लिए हार चढाने को राजी नहीं; क्योंकि उनक कहना है कि भगवान की मूर्ति हो नहीं सकती और इसलिए उसकी पूजा भी हो न सकती । लेकिन कब्रिस्तान में जाकर कब्र पर फूल चढाते हैं। गांधीजी की समाधि पर ईसाई, मुसलमान, हिंदू, सब फूल चढाते हैं, गांधीजी के समाधि-पत्थर की पूजा हो सकती है। मैं मन में सोचता हूं कि वह जो हार चढाया जाता है, उसकी खुशबू कौन लेता है ? क्या वह पत्थर लेता है ? वह हार पत्थर के लिए है या गांधीजी की स्मृति के लिए है? यह एक प्रकार की मूर्तिपूजा ही है। इसके लिए कोई आधार भी नहीं। गांधीजी का पत्थर के साथ क्या ताल्लुक है ? बहुत हुआ तो इतना सिद्ध होगा कि उनकी हस्ती किसी लेख में है। ईश्वर का तो पत्थर के

साथ ताल्लुक है; क्योंकि ईश्वर पत्थर में भी रहता है, यह बात सिद्ध हो चुकी है। इसलिए कोई ईश्वर के नाम से पत्थर की पूजा करता हो और उसको हम गलत मानें, तो उसमें अहंकार के सिवा और कोई अर्थ निकलेगा नहीं। [मै. 1966]

इस्लाम ने अनेक देवता का निरसन किया, लेकिन यह न समझें कि अल्लाह का नाम लेनेवाले निश्चय ही एक परमेश्वर के भक्त होते हैं। जो अल्लाह से धन मांगता है वह लक्ष्मीदेवी का ही उपासक है। 'हे लक्ष्मीदेवी, तेरी कृपा मुझ पर रहे', ऐसी प्रार्थना करनेवाला हिंदू और 'ए अल्लाह, मुझे दौलत दे', ऐसी दुवा मांगनेवाल मुसलमान, दोनों एक ही संप्रदाय के उपासक हैं। इससे उलटे, जो नाम लक्ष्मीदेवी का लेता है, लेकिन उससे अपेक्षा करता है चित्तशुद्धि की, मनः-शांति की, तो वह एक परमेश्वर का ही उपासक है। यही बात मुसलमानों को लागू होगी। जो अल्लाह का नाम लेकर एक बार भी कह देता है कि 'मैं इम्तहान में पास हो जाऊं' या 'तंदुरुस्त हो जाऊं' उसकी वह देवता की ही उपासना मानी जायेगी, अल्लाह की नहीं। [वि. चिं. 18.302; 20.2.66]

अगर यह पूछा जाये कि अल्लाह का कोई चेहरा है, तो कहा जायेगा, नहीं। लेकिन कुरानशरीफ में दो लफ्ज आते हैं, **वजुहुल्लाह** और **यदुल्लाह** यानी अल्लाह का चेहरा और अल्लाह का हाथ। वैसे अल्लाह को हाथ, पांव, चेहरा नहीं है। फिर भी इनसान के सामने बोलना है तो ऐसी जबान बोलते हैं, जो इनसान समझ सकता है नहीं तो, अगर हम ऐसे अल्लाह की बात सामने रखेंगे, जिसका तसव्वुर (ध्यान) ही नहीं कर सकते, तो सारा कहना बेकार होगा। इसलिए 'वजुहुल्लाह' कहना पडता है। यह शब्द कुरान में कई जगह आया है, जिसके आधार पर मूर्तिपूजा की अतिशयता का बचाव तो नहीं होगा, लेकिन सगुण साकार का हो जायेगा। इन शब्दों के आधार पर अगर कोई समन्वय करना चाहे, तो सगुण साकार के साथ समन्वय हो सकता है। एक विशेषण आता है, 'अर्रज्जाक' यानी

रोजी देनेवाला । निर्गुण निराकार किसी को रोजी नहीं दे सकता। निर्गुण का वर्णन तो साकार से ही हो सकेगा। [वि.सा. खं. 8.391; प्रभाकर माचवे पत्र 15.8.53]

कुरान का कुल मिलाकर भाव मैं यही समझता हूं कि मुहम्मद पैगंबर के सामने विकृत मूर्तिपूजा खडी थी, जिसके साथ अनेक प्रकार के भ्रष्टाचार जुड गये थे। वे उन सबका निषेध करना चाहते थे। आखिर वे ईश्वर का शब्द सुनते थे, उन्हें 'वही' प्राप्त होती थी, उससे वे भावित होते थे, उसका असर उनके शरीर पर भी होता था। कुछ रूह, कुछ प्रभा, कुछ आभास, जो भी कहो, उनके अंतर्मानस में प्रकट होती थी। यह सब देहधारी मनुष्य कैसे टाल सकेगा ? सारांश, जो शब्दातीत वस्तु है, उसको शब्द में प्रकट करने के प्रयत्न में ही दोष आ जाते हैं। विष्णुसहस्रनाम में भगवान का वर्णन – नाम ही – इस प्रकार किया है – **शब्दातिगः शब्दसहः** शब्द से परे, परंतु शब्द को सहन करनेवाला। इसलिए अचिंत्य विषय में सब प्रकार के आग्रहों को छोडकर नम्र बनना ही सर्वोत्तम लक्षण (निशान) है। [वि.सा. खं. 8.362; मैत्री 1974]

इस्लाम ने भगवान को 'ट्रान्सेंडेंटल' यानी दुनिया से ऊपर माना है। हिंदू मानते हैं कि भगवान 'ट्रान्सेंडेंटल' है और 'इमॅनंट' यानी प्रत्येक वस्तु में भरा हुआ भी है। सबसे ऊपर भी है और सबमें व्याप्त भी है। [मै. 1976]

अल्लाह नूर है

अल्लाहु नूरुस्समावाति वल् अर्द्र... (कुसा 27) [कुरानशरीफ 24.35-40] । अल्लाह धरति-आकाश का प्रकाश है। छोटा-सा दीपक घर के एक कोने में रहता है; लेकिन पूरा घर उससे आलोकित हो उठता है। उसी प्रकार ईश्वर छोटे-से दिल में रहता है, लेकिन उसका प्रकाश सर्वत्र फैलता है। वह सर्वत्र प्रकाशित होता है। [पा. या. 22]

अल्लाह तुम्हारी देह की नाडी से भी तुम्हारे ज्यादा निकट है। **... व नह्नु अक्रबु इलैहि मिन् हब्लिल् वरीद्** (कुसा 33) [कुरानशरीफ 50.16] । इससे समान अर्थ की बात गीता शांकरभाष्य में मिलती है – अपनी देह का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए मनुष्य को किसी प्रमाण (सबूत) की जरूरत नहीं पडती। आत्मा का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए तो उससे भी कम प्रमाण की अपेक्षा है; क्योंकि देह हर हालत में बाहर की कही जायेगी, जबकि आत्मा तो अंतरतम है, हमारे अत्यंत नजदीक है, वह हमारा निजरूप है – 'यथा स्वदेहस्य परिच्छेदाय न प्रमाणान्तरापेक्षा ततोपि आत्मनः अन्तर-तमत्वात् तदवगतिं प्रति न प्रमाणान्तरापेक्षा' । [से. जुलाई 52; वि. चिं. 28-147]

कुरान में परमेश्वर के लिए 'वकील' शब्द का इस्तेमाल किया है। 'हे अल्लाह, तू मेरा वकील है।' वकील यानी सबके हितों को अच्छी तरह सम्हालनेवाला। एक जगह भगवान ने मुहम्मदसाहब को धमकाया है कि क्या तू वकील है ? वकील तो मैं हूं । तेरा काम है बलाग, मेरा काम हिसाब । **... अलैकल् बलागु व अलै नल् हिसाबु** (कुसा 338) [कुरानशरीफ 13.40] । इस तरह वकील शब्द के लिए इतना आदर था। आज तो वकील लोगों को झूठ सिखानेवाला हो गया है। वकील लोग मुझे क्षमा करें, लेकिन आज हकीकत यह है कि उनके द्वारा झूठ फैलाया जाता है। होना यह चाहिए कि वकील यानी सत्य की रक्षा करनेवाला। [वि. सा. खं. 8.402; वि. प्र. 11.5.59]

रहमान रहीम

कुरान में भगवान के लिए दो नाम बार-बार आये हैं रहमान और रहीम । कुरान के प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में अल्लाह के इन दो नामों का उच्चारण किया है। रहमान और रहीम यानी दयावान, कृपावान, करुणावान ।

पैगंबर हजरत के मुख से रहमान नाम बार-बार सुनने पर लोगों ने उनसे सवाल पूछा कि अल्लाह के अलावा और यह रहमान कौन है ? तब मुहम्मदसाहब ने जवाब दिया कि 'रहमान अल्लाह से भिन्न नहीं है। जो अल्लाह है वही रहमान है, जो रहमान है वही अल्लाह है।' कुरान में इस प्रसंग का भी वर्णन है। भोलेभाले लोगों ने कहा कि एक तरफ तो यह कहता है कि अल्लाह एक है और दूसरी तरफ दो-दो नाम लेता है। यह कैसे हो सकता है ? [वि. प्र. 11.5.369; मै. जन. 76]

दया गुण कोई साधारण गुण नहीं। मानवसमाज के लिए उसकी बहुत कीमत है। उसके बिना कोई भी समाज एक पल भी टिक नहीं सकता। धर्मशास्त्रकारों ने परमेश्वर का रूप ही दयामय माना है। सब धर्मों ने ईश्वर का यह गुण माना है। वैष्णवों ने बार-बार इसका स्मरण किया है। दया, क्षमा, करुणा, ये सारे दिव्य गुण मानव के लिए सदासर्वदा पूजनीय हैं। [मै. जन. 379; मै. 1980]

अल् किसास

'किसास' एक अरबी शब्द है, जो एक सिद्धांत से जुडा हुआ है। ईश्वर की सिद्धि के लिए यह पेश किया गया है। यह किसासवाला सिद्धांत ऐसा है कि "किसी मनुष्य ने जितना अपराध किया हो, उतनी ही सजा उसे होनी चाहिए।" कोई एक परमेश्वर अवश्य होना चाहिए, जो किसास करता है; क्योंकि आप किसास नहीं कर सकते । एक मनुष्य ने बीस कत्ल किये हों तो आप उसे बीस बार नहीं, एक ही बार फांसी दे सकते हैं; इसलिए किसास नहीं हो सकता। किसास के लिए परमेश्वर की हस्ती होनी चाहिए। बची हुई उन्नीस फांसियां वही देगा। यह विनोद लगता है; लेकिन विवरणकारों ने ईश्वर की सिद्धि के लिए इसे गंभीरता से पेश किया है। जैसे दया के लिए परमेश्वर की जरूरत होती है और क्षमायाचिका

के लिए राष्ट्रपति की आवश्यकता होती है, वैसे 'अल् किसास' – परिपूर्ण न्याययुक्त शासन के लिए परमेश्वर की जरूरत है। [मै. जन. 407]

जिस समाज को दसगुना दंड देने की आदत थी, उसके नियंत्रण के लिए यह प्रमेय कहा गया था कि एक दांत के बदले एक ही दांत निकालो। कोई भी धर्म-विचार प्रेरणा के लिए नहीं होता, नियंत्रण के लिए होता है। प्रेरणाएं तो मानव में अपनी ही होती हैं। उन प्रेरणाओं को मोडना, गलत दिशा में नहीं जाने देना, इतना ही शास्त्र का कार्य है। शंकराचार्य ने कहा कि शास्त्र प्रवर्तक नहीं होते, निवर्तक होते हैं। प्रवृत्तियां तो दुनिया में चल ही रही हैं। उन प्रवृत्तियों को कुछ नियंत्रित करना जरूरी है, उतना ही शास्त्रकारों का काम होता है। तात्पर्य यह कि दस गुना दंड की जगह 'एक दांत के लिए एक दांत' का सिद्धांत आया। ईसा मसीह के कारण तो विलक्षण परिवर्तन हुआ – बदल ही गया – 'लव दाय एनिमी', दंड देने का सवाल ही नहीं रहा। [अ. श. खो. पृ. 61]

रब्बिल् आलमीन

भगवान की भक्ति से मनुष्य विश्वात्मा बनता है। 'मैं देह हूं' इस देहभाव की जगह 'सारे विश्व में मेरा ही रूप है' ऐसी व्यापक भावना अर्थात् विश्वात्मभाव पैदा होता है। कुरान में बार-बार इस विश्वात्मभाव पर जोर दिया है – **रब्बिल् आलमीन** (कुसा 1) । भगवान कैसे हैं? पूरी दुनिया के प्रभु हैं। केवल मेरे नहीं, पूरी दुनिया के प्रभु । इससे बुद्धि व्यापक बनती है कि हम सब एक प्रभु की संतान हैं। 'यह एक विश्व और वही हम'; यानी विश्व और हममें कोई फर्क नहीं, यह भावना होती है। [वि. चिं. 39.72-73]

कुरानशरीफ में एक वाक्य ऐसा भी आता है – मुहम्मद पैगंबर ने ईसा मसीह का वचन पेश किया है – **वस्सलामु अलय्य** (कुसा 329) [कुरानशरीफ 19.30-34] - धन्य मैं, उस मुझे नमस्कार। यहां अद्वैत की भूमिका आती है। ईश्वर की तरफ ध्यान देते हुए उसमें

और हममें जो अंतर है वह खतम होता है, हम दोनों एक ही है ऐसा महसूस होने लगता है। फिर, उसको नमस्कार करना और खुदको नमस्कार करना, दोनों समान ही है। [वि.सा.खं. 8.394]

संत एकनाथ की कहानी है। उन्होंने लिख रखा है। मंदिर की मूर्ति की पूजा करने का काम उनके खानदान के पास था। एकनाथ ने पूरी जिंदगीभर यह काम किया। एक बार उनको अनुभव हुआ – 'आता कैसेनी पूजूं देवा, माझी मज घडे सेवा, तोडूं जाता तुलसीपान, तेथे उभा मधुसूदन ।' – हे भगवान, कैसे तुम्हारी पूजा करूं ? तुम्हारी पूजा करने जाता हूं, तो वह मेरी अपनी ही पूजा हो जाती है, पूजा के लिए तुलसी का पत्ता तोडने जाता हूं तो हर पत्ते पर मधुसूदन को खडा हुआ देखता हूं। मतलब भगवान, भगवान की पूजा करनेवाला और पूजा की सामग्री – सब एक हो गये ! [वि.सा.खं.5]

भक्ति और मुक्ति

भक्तिमार्ग में दो पंथ (मार्ग) हैं – एक मार्जारी पंथ और दूसरा वानरीपंथ । मार्जारी यानी बिल्ली और वानर यानी बंदर । बिल्ली क्या करती है ? अपने बच्चे को अपने मुंह से पकडकर ले जाती है। बच्चे को कुछ करना नहीं पडता। इस प्रकार एक भक्तिपंथ कहता है कि भगवान बिल्ली जैसा है; जहां ले जाना चाहता है, ले जायेगा, भक्त को कुछ करना नहीं है। दूसरा है वानरी पंथ । बंदरी बच्चे को अपनी छाती से चिपका लेती है। लेकिन मां को पकड रखने की जिम्मेवारी बच्चे की होती है। इस्लाम मार्जारी पंथ जैसा है। आपके हाथ में कुछ नहीं, भगवान को जो करवाना है वह करवा लेगा। जिसको जो पंथ स्वीकारना हो, स्वीकारे । आसान लगता है बिल्लीवाला पंथ – सबकुछ भगवान ही करेगा, हमें कुछ करना नहीं। यह मार्ग आसान दीखता है, परंतु इसके लिए परिपूर्ण निरहंकार बनना होगा – बिलकुल जड बनना पडता है ! आसान दीखता है, लेकिन है कठिन ! बंदरवाला मार्ग कठिन

लगता है, लेकिन आसान है। पकडकर रखने की जिम्मेवारी आपकी, बाकी सब भगवान संभाल लेगा।

वेदांत की तरह ही सूफी विचार में भी भक्त ईश्वर में मिल जायेगा या कुछ पृथक् (अलग) रहेगा, यह वाद है। मुक्ति की दो कल्पनाएं हैं। एक है 'बका बिल्लाह' यानी अल्लाह के साथ बैठकर बातें करना; उसके दरबार में हम सब हैं। और दूसरी है 'फना फिल्लाह' यानी परमात्मा में लीन हो जाना। **बका बिल्लाह** (ईश्वर-सादृश्य) और **फना फिल्लाह** (ईश्वर-तादात्म्य) – यह सूफी परिभाषा है। बका = बाकी रहना, बि = साथ – अल्लाह के साथ बाकी रहना = सादृश्य । फना = मिट जाना, फि = में – अल्लाह में मिट जाना = तादात्म्य । सूफी यानी कुरान का सूक्ष्म अर्थ करनेवाले । भारत में इस्लाम का प्रथम प्रचार सूफियों ने किया; इसलिए वह भारत में लोकप्रिय हुआ। शंकराचार्य का एक श्लोक है – 'सत्यपि भेदापगमे नाथ तवाहं न मामकीनस् त्वम् सामुद्रो हि तरंगः क्वचन समुद्रो न तारंगः' । इस्लाम की मुक्ति का विचार ऐसा है। रामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैत जैसा है। [वि.सा.खं. 8.404; जंगम विद्यापीठ 19.12.57]

जहां तक मेरा ताल्लुक है, मेरे चित्त में 'बका बिल्लाह' बैठा है। अल्लाह के दरबार में सब मित्र एक हो जायेंगे। मैंने कह रखा है कि जो विचारवश एक हो जायेंगे, कार्यवश एक हो जायेंगे, स्नेहवश एक हो जायेंगे – विचार, कार्य और स्नेह, तीनों में एकसाथ होंगे – वे परमात्मा के दरबार में एक हो जायेंगे। यह मेरा विचार है। [मै. मार्च 76]

अल्लाहु अकबर

मैं तो अपने को अल्लाह का अदना-सा खिदमतगार मानता हूं। यह भी एक भाषा ही है। दरअसल अल्लाह को खिदमत की जरूरत ही कहां है ? वह तो 'गनी' – बेपरवाह है। उसकी खिदमत के नाम से हम अपना ही भला करते हैं। इनसान की जबान में अल्लाह का

बयान करने की ताकत ही कहां है ? फिर भी वह उसकी कोशिश करता है और अपने दिल को तसल्ली देता है। कुरान में कहा है कि सारा दरिया स्याही बन जाये और सारे दरख्त कलम बन जाये तो भी खुदा का पूरा बयान नहीं हो सकता (कुसा 74) [कुरानशरीफ 31.27] । यही बात संस्कृत के एक श्लोक में भी कही है। फिर इनसान बयान करने की कोशिश करता है तो इतना ही कह पाता है कि "**अल्लाहु अकबर**" – तू सबसे बडा है। यहां उसकी जबान रुक जाती है। [शां. या. 14.5.48]

* *

6. इस्लाम: स्वरूप

प्रेषित – रसूल

मुहम्मद पैगंबर के अनुयायी (मुसलमान) मानते हैं कि मुहम्मद पूर्ण पुरुष थे और उनमें किसी तरह की पूर्णता का विकास बाकी नहीं रहा था। ईसा मसीह के अनुयायी (ईसाई) भी समझते हैं कि ईसा पूर्ण मानव थे। इस तरह भिन्न-भिन्न महापुरुषों के अनुयायियों में यह खयाल होता है कि वे महापुरुष परिपूर्ण थे, करीब-करीब परमेश्वरस्वरूप ही थे। इस तरह शिष्य के मन में गुरु के लिए पूर्णभाव रहता है, तो मैं उसका अर्थ समझ सकता हूं। छोटे लडके के मन में अपनी माता के लिए ऐसी ही परिपूर्णता का आभास होता है और उसके लिए वह शोभा भी देता है। लेकिन इस बारे में इस्लाम ने जो बातें कही हैं, वे मुझे बहुत महत्त्व की लगती हैं। इस्लाम कहता है कि मुहम्मद एक मानव थे, उन्हें ईश्वर की उपाधि लागू नहीं हो सकती। ईश्वर एक, अद्वितीय है। उसकी बराबरी में कोई मानव नहीं आ सकता। **ला इलाह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर् रसुलिल्लाह** । यानी अल्लाह एक ही है, उसकी जगह कोई नहीं ले सकता, मुहम्मद पैगंबर भी उनका पैगाम लानेवाले रसूलमात्र हैं, सेवकमात्र हैं। यहां भारत में जो गुरुपरंपराएं चलीं, उनमें ये मान्यताएं रहीं कि उस-उस परंपरा के गुरु सब तरह से परिपूर्ण और ईश्वर ही थे। यह भक्ति की भाषा है। इस्लाम में जो भाषा बोली गयी, वह विवेक की भाषा है। मैं उस विवेक की भाषा को प्रधानता देता हूं और भक्ति की भाषा को गौण स्थान । [वि.सा.खं. 8.367]

मुहम्मद पैगंबर ने यह कभी नहीं कहा कि मैं अल्लाह की जगह ले सकता हूं और मेरे साथ परिपूर्ण सत्य जुड गया है। उन्होंने यही कहा है कि पहले के रसूलों ने जो कहा, वही मैं आपके सामने कह रहा हूं। मुहम्मदसाहब ने जो कहा, उसका अर्थ यही है कि मुहम्मद अल्लाह का रसूलमात्र है, सेवकमात्र है। अल्लाह नहीं, उसका पैगाम पहुंचानेवाला रसूल

है। लेकिन आज उसका अर्थ ऐसा किया जाता है कि ‘मुहम्मद ही रसूल’ है। कुरान में तो इससे उलटा ही कहा है। [वि.प्र. 1.3.59]

कुरानशरीफ में कहा है कि अल्लाह ने हर कौम के लिए और हर जबान बोलनेवाले के लिए रसूल भेजे हैं (कुसा 310.311) [कुरानशरीफ 14.4.10.47] । और कहा कि हम रसूलों में कोई फर्क नहीं करते – **ला नुफ़र्रिकु बैन अहदिम्मिर्रसुलिह** (कुसा 189) [कुरानशरीफ 2.284-286] । दाऊद, नूह, मूसा, ईसा आदि कुछ रसूलों के नाम भी दिये हैं और आखिर में कहा है कि ‘इनके अलावा भी और बहुत रसूल हो गये हैं, जिनका नाम तक तुम नहीं जानते हो (कुसा 333) [कुरानशरीफ 40.78] ।’

पैगंबर ने अपने अनुयायियों को कहा, आपको आपकी अपनी भाषा में भगवान का संदेश पहुंचाने के लिए मुझे भेजा है। क्योंकि दूसरी भाषा में कहनेवाला कोई आये तो आप समझेंगे कि यह तो “अजमियु” – अरबी नहीं है।

‘हमने हर भाषा में, उस-उस भाषा में संदेश देनेवाला रसूल भेजा है’, यह वाक्य मैंने पढा तो सोचने लगा कि मराठी भाषा *(विनोबाजी की मातृभाषा मराठी थी – सं.)* के लिए संदेश देनेवाला कौन रसूल होगा ? तो ज्ञानेश्वरमहाराज की याद आयी। इस प्रकार सोचा जाये कि हिंदी भाषा के लिए कौनसा धर्मग्रंथ है, तो कोई भी सहजता से कहेगा, तुलसीदासजी की रामायण । इस तरह भगवान ने हर भाषा में वह भाषा बोलनेवाला रसूल भेज दिया। यह कुरान का बहुत ही उत्तम उद्गार है। कुरान का यह क्लेम नहीं कि वही एक कुल दुनिया के लिए है; बल्कि अल्लाह के दूत बोल रहे हैं – “ला नुफ़र्रिकु बैन....” [म. वि. 28.7.58]

“उन संदेशवाहकों में यानी प्रोफेटों में हम कुछ भी फर्क नहीं करते” – यह इस्लाम का आदर्श-वाक्य है। और इसको इस्लाम धर्म की श्रद्धा कहते हैं। यह इस्लाम का ‘फेथ’ है।

मैं समझता हूं कि हिंदुओं का भी यही 'फेथ' है। दुनिया के सारे रसूल या पैगंबर समान योग्यता के हैं। [म. वि. 28.4.36]

जितने भी अलग-अलग मजहब हैं, वे सब इबादत के अलग-अलग प्रकार हैं। इबादत के अनंत (लातादाद) तरीके हो सकते हैं। लेकिन अनंत तरीकों में चीज एक ही है। अनुभव एक ही आता है। सबके अनुभव इकट्ठा कर सकते हैं। कुरान में यह बात कही है। कहा है, **उम्मतुकुम् उम्मतव्वाहिदतव्व...** (कुसा 194) [कुरानशरीफ 23.52-53] – अरे रसूलो, तुम जिस किसी मुल्क में पैदा हुए हो, सभी एक जमात के हो। तुम्हारी इज्जत एक-सी है। इसका मतलब यह हुआ कि जितने अच्छे, भले, नेकी की राह पर चलनेवाले लोग है, सारे एक ही हैं। सचाई पर चलना, एक-दूसरे की मदद करना, दुखियों के लिए हमदर्दी रखना, ये बातें जिनकी जिंदगी में आयीं, वे सब एक ही जमात के हैं। इस तरह कुरानशरीफ में 'उम्मतुकुम् व्वाहिदत' की बात कही है। [वि.सा.खं. 8.395, 390]

इतना होने पर भी मुसलमानों ने मुहम्मद पैगंबर को 'लास्ट प्राफेट' – अंतिम पैगंबर माना और इसलिए उनकी बात को अंतिम वचन माना गया। लेकिन इस्लाम में भी ऐसा एक पंथ है, जो मानता है कि मुहम्मद पैगंबर के बाद पैगंबर आयेगा । [वि. चिं. 44.467]

धर्म-प्रचार का तरीका

जिस इस्लाम के लिए इतिहास में यह जाहिर है कि उसने करोडों का जबरदस्ती से परिवर्तन किया, उसी इस्लाम ने कहा है कि धर्म के बारे में कभी जबरदस्ती नहीं हो सकती – **ला इक्राह फ़िद्दीन** (कुसा 192) [कुरानशरीफ 2.256] । जो मनुष्य कोई चीज समझ नहीं रहा है, उसे अगर कोई ऐसी आज्ञा दे कि तुम मानो, तुम समझ गये, तो वह कहेगा कि 'आज्ञा से समझने की बात होती तौ तुम्हारे लिए मुझे इतना आदर है कि मैं वह बात फौरन समझ जाता। पर अब मैं नहीं समझ रहा हूं।' अगर हम किसी से कहें कि कुएं में कूदकर

मर जाओ, तो कोई श्रद्धा से इस आज्ञा का पालन कर सकता है। परंतु हम किसी से यह नहीं कह सकते कि फलानी चीज का ज्ञान न हो, तो भी 'ज्ञान है', मानो । ज्ञान के बारे में आज्ञा हो ही नहीं सकती, यानी वह असंभव वस्तु है। विचार के क्षेत्र में परिपूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए। फिर भी कुछ लोग धर्मांतर आदि जबरदस्ती से करते हैं। समाज के सामने सत्य और मिथ्या (झूठ) दोनों रखना चाहिए। और समाज पर ही छोड देना चाहिए कि वह क्या चाहता है। सत्य और मिथ्या, दोनों छिप नहीं सकते। इसलिए लोगों को जो सही मालूम होगा, उसे वे लेंगे और जो मिथ्या लगेगा, उसे छोडेंगे । [वि.सा.खं. 8.368]

विचार में पूरी आजादी होनी चाहिए। पहले के जमाने में हिंदुस्तान में इसका दर्शन होता था। एक ही परिवार में बाप हिंदू होता था, तो एक लडका बौद्ध और दूसरा जैन। इसमें किसी को विरोध नहीं मालूम होता था। फिर आज यह क्यों न हो कि एक ही घर में एक भाई हिंदू और दूसरा मुसलमान है, तो तीसरा ईसाई ? आचार दूसरी चीज है। आचरण के कुछ सामुदायिक नियम होते हैं, जिन पर सबको चलना चाहिए, पर विचार की आजादी क्यों नहीं होनी चाहिए ? इस पर हमें सोचना चाहिए। हम जानते हैं कि इस बात को लोग एकदम कबूल नहीं करेंगे, पर एक ही घर में अच्छा हिंदू, अच्छा मुसलमान और अच्छा ईसाई रहें तो क्या हर्ज है ? जिसकी जो श्रद्धा है उसको वह मानेगा। विश्वास जबरदस्ती से नहीं आ सकता। इसलिए एक ही घर में अनेक धर्म हो सकते हैं, इसे मानने के लिए हमें मानसिक तैयारी करनी चाहिए। धर्म के, समाज के और सब प्रकार के विचारों में इस प्रकार का विचार-स्वातंत्र्य होना चाहिए। [भू.गं. 6.313]

मेरी राय में धर्मांतर में कोई सार नहीं; क्योंकि मैं कहता हूं कि सब धर्म समान हैं। कोई इस धर्म से उस धर्म में जाता है, उससे खास फरक पडनेवाला नहीं है। जिसको जहां जाना हो, जायें। मान लें, सारे भारत के लोग मुसलमान बन जाते हैं, तो मुझे उसमें कोई नुकसान नहीं दीखता । मुस्लिम का अर्थ है करुणावान। सत्य, प्रेम, करुणा – तीन शब्द हैं।

सत्य है वैदिक धर्म । प्रेम ईसाई धर्म और करुणा इस्लाम । अगर सब लोग करुणावान बनते हैं तो उसमें कोई नुकसान नहीं। लेकिन अगर नाममात्र का धर्मांतर होता है तो वह निकम्मी चीज है। [वि. सा. खं. 8.355]

हिंदू वेदों को भगवान का शब्द मानते हैं। कुरानशरीफ या बाइबिल को माननेवाले भी उन ग्रंथों को भगवान का शब्द मानते हैं। यह श्रद्धा का विषय है। मेरी दृष्टि से यह ठीक ही है। लेकिन मेरी श्रद्धा जिस विषय पर है, वह मैं दूसरे पर जबरदस्ती लादना चाहूं, तो वह ठीक नहीं होगा। जिस पर मेरी श्रद्धा है, उसका आचरण स्वयं करना ही उस विषय का प्रचार है। [वि. सा. खं. 8.367]

यद्यपि कुरान में कहा है कि धर्म के बारे में जबरदस्ती नहीं हो सकती, मुसलमान राजाओं ने जबरदस्ती से ही धर्म का प्रसार किया। उससे तो द्वेष ही फैला। बडे-बडे राजा हुए जो इस्लाम का नाम लेते थे, तो प्रजा में से भी हजारों लोग मुसलमान बन गये। वह क्या कोई इस्लाम का प्रसार था ? क्या धर्म कोई खेल है कि लाख-लाख लोग एकसाथ दूसरे धर्म में शरीक हो ? जबसे राजसत्ता धर्म के साथ जुड गयी तबसे धर्म की अत्यंत हानि हुई। अगर आज मुहम्मद पैगंबर होते तो उन्हें संख्यावृद्धि में खुशी न होती। अवश्य ही सब धर्मों ने संख्या का ख्याल किया, पर संख्या में धर्म नहीं रहा करता। वह तो एक निर्मल परिशुद्ध तत्त्व है। मनुष्य की मनुष्यता बढाना ही सब धर्मों का कार्य है। आचार-विचार की जबरदस्ती करना अधर्म होता है।

आरंभ के जमाने में इस्लाम का प्रचार तो कसौटी और त्याग से ही हुआ। इस्लाम का प्रचार आत्मा के बल पर हुआ। प्रारंभ के खलीफा बहुत धर्मनिष्ठ थे और उनकी धर्मनिष्ठा के कारण ही इस्लाम का प्रचार हुआ। [वि. सा. खं. 8.369]

प्रार्थना

कुरान में पंच-नमाज की बात कही है (कुसा 203) [कुरानशरीफ 20.130] । उठते ही बिस्तर पर भगवान का नाम लें, फिर सूर्योदय के समय, फिर मध्याह्न में, शाम को और रात के समय । शुरुआत में, आखिर में और बीच में तीन बार, इस प्रकार पांच बार प्रार्थना करने को बताया है। [वि. सा. खं. 8.401]

पांच बार करने को क्यों बताया? इसलिए कि उससे एक चेकअप होता है। मनुष्य बीच-बीच में नीचे गिरता है, किसी के साथ झगडा होता है, कभी आसक्ति होती है, कभी अहंकार होता है, कभी मलिनता आती है, उसका भान हो और उसे छोड दें। शरीर को हम रोज धोते हैं, वैसे चित्त को भी बार-बार धोना चाहिए। हिंदुओं में तीन दफा संध्या की जाती है। संध्या और नमाज दोनों ही शास्त्रीय विधि हैं। एक दिन भी यह विधि टाल नहीं सकते । [वि.प्र. 8.12.65]

मुसलमान लोग प्रार्थना किस तरह करते हैं, यह भी देखने की बात है। जुम्मा मस्जिद में नमाज पढने के वक्त औरंगजेब बादशाह देरी से आता तो कोने में बैठ जाता था। वहां पर इमाम के लिए थोडी-सी ऊंची जगह होती है, जहां वह खडा रहता है, बाकी सब जहां जगह मिले, बैठ जाते हैं। किसी के लिए कोई आसन नहीं होता। हर कोई अपना आसन साथ ले आता है। इस तरह छोटे-बडे सब एकरूप होकर प्रार्थना करते हैं, नमाज पढते हैं। लोकतंत्र का यह विचार हम इस्लाम में पाते हैं, जो उसकी अपनी बहुत बडी चीज है। [वि.प्र. 28.10.58]

जुम्मा के दिन निश्चित समय पर सभी एकसाथ नमाज क्यों पढते हैं ? स्पष्ट है कि इस तरह समूहरूप में काम हो, तभी धर्म का विकास होता है। इससे धर्म व्यापक होता है। दूसरी बात, वे कहीं भी हो, ट्रेन में भी हो, नमाज का वक्त होते ही अपना आसन बिछाकर

नमाज पढते हैं। इस तरह सारे समाज में ऐसी एक चीज करेंगे, तो शक्ति पैदा होती है। परंतु सभी लोगों को वह करनी चाहिए। [वि.प्र. 15.11.58]

लेकिन मैंने देखा, नमाज में स्त्रियां नहीं आतीं। ऐसा नियम ही कर दिया है। मैंने पूछा था कि भाई, नमाज में स्त्रियों को क्यों नहीं आना है ? तो बताया गया कि वे आती हैं तो उनके साथ बच्चे आते हैं, चिल्लाहट होती है, तो प्रार्थना में शांति नहीं रहती, शांति खतम होती है। अब यह कैसे हो कि बहनें आयें और बच्चे न आयें ? एक हो सकता है। तय करें कि सात दिन में अमुक दिन बच्चों को संभालने का काम पुरुष करेंगे, तो स्त्रियां नमाज में जा सकती हैं। ऐसा इंतजाम हो, तभी शांति से बहनों की बैठक हो सकेगी। [वि.प्र. 24.6.66]

एक बार एक मुसलमान भाई ने मुझे पूछा कि हम घुटने टेककर प्रार्थना करते हैं, वैसा कुछ क्या आप लोगों में भी है ? मैंने कहा, घुटने टेककर प्रार्थना करने जैसी बात वेद में मिलती है, लेकिन उसमें थोडा फरक है। **संजानाना उप सीदन् अभिज्ञु पत्नीवन्तो नमस्यन्** (ऋसा 1.12.6)। ऋषि पत्नी को साथ लेकर परमेश्वर की पूजा करते हैं, तब **अभिज्ञु** यांनी ही 'अभिजानु' – घुटने टेंककर परिवार के साथ प्रार्थना करते हैं। [वि.प्र. 29.3.58]

पुरुषों के साथ स्त्रियां भी बैठकर भगवान का स्मरण करें, ऐसा रिवाज मुसलमानों में नहीं है। लेकिन हमेशा पुराने रिवाजों में ही रहना ठीक नहीं। हमें तो आगे बढना है। और ऐसा जमाना लाना है कि सबके सब भगवान के सामने खड़े होकर भेदों को भूल जायें। भगवान के सामने खडे होकर भी अगर दिल में भेद रखेंगे तो हम सच्चे अर्थ में भगवान के सामने खडे ही नहीं हुए। आखिर हमें भगवान में ही समा जाना है। दुनिया में वही एक है, दूसरा कुछ नहीं। [अजमेर 14.4.48]

लेकिन पांच दफा भगवान को याद किया और बीस दफा भूल गये तो नमाज का क्या उपयोग ? मुसलमान नमाज पढते हैं, हिंदू पूजा-अर्चा करते हैं। उस समय सभी भगवान को याद करते हैं, लेकिन व्यवहार की बात आते ही काम-क्रोध-लोभ में पड जाते हैं। तो भक्ति कहां रही ? इसलिए कहा, **जिक्रुल्लाहि अक्बर** (कुसा 92) [कुरानशरीफ 29.45]। [इंदौर 13.8.60]

भक्ति का परमश्रेष्ठ प्रकार कुरानशरीफ में है, **व ल जिक्रुल्लाहि अक्बर** (कुसा 92) – अल्लाह का जिक्र – याद – स्मरण अकबर – श्रेष्ठ है। सलात यानी प्रार्थना बुराई को रोकती है और अच्छे काम में मदद देती है। लेकिन सलात से भी अल्लाह का जिक्र बेहतर है। प्रार्थना अच्छी चीज है। उससे भलाई की प्रेरणा मिलती है। प्रार्थना सदाचार है। सदाचार का संग्रह करना चाहिए, उससे लाभ होता है। लेकिन प्रार्थना से भी बेहतर है अल्लाह का स्मरण । संस्कृत में शब्द है, 'अनुस्मरण' यानी नित्य स्मरण । भगवान का अखंड, लगातार स्मरण करें। यह भक्ति का परम श्रेष्ठ प्रकार है। इससे दूसरी स्मृतियां (यादें) हट जाती हैं। [वि.चिं. 42.271]

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर का एक गीत है कि सर्वत्र आनंदधारा बह रही है। उसमें गुरुदेव अपना दर्शन बयान करते हैं। यह सारी सृष्टि भगवान का नाम ले रही है। सूर्य, चंद्र, सितारें – सब भगवान का नाम ले रहे हैं। सूरज की तरफ से प्रेम बह रहा है। और ग्रहों की तरफ जा रहा है। फिर एक ग्रह से दूसरे ग्रह में जाता है। इस तरह सर्वत्र प्रेम का आदान-प्रदान होता है। यही विचार कुरानशरीफ में भी आया है। वहां कहा है कि सारी सृष्टि भगवान के सामने प्रणिपात करती है। सूरज, चांद, सब सितारे, सब पहाड, सब पेड, सब पत्थर, सबके सब भगवान का नाम ले रहे हैं (कुसा 98) [कुरानशरीफ 16.48]। भगवान के साथ अपना संबंध जोड रहे हैं और सिजदा करते हैं। लेकिन उसके साथ-साथ एक वाक्य यह भी जोड दिया है कि 'मनुष्यों में से बहुत-से' भगवान का नाम ले रहे हैं (कुसा 99) ।

[कुरानशरीफ 22.18] मतलब, सबके सब मनुष्य भगवान का नाम नहीं ले रहे हैं और प्रेम के आदान-प्रदान में शामिल नहीं होते हैं। जो प्रेम ग्रह ग्रहण करते हैं, चंद्र ग्रहण करता है, पृथ्वी ग्रहण करती है, वह प्रेम सभी मनुष्य ग्रहण नहीं करते। वे बोलना तो यही चाहते हैं कि 'सभी मनुष्य ग्रहण कर रहे हैं', पर वैसा नहीं कह सकते, क्योंकि वे देखते हैं कि मनुष्यों में से कुछ लोग इस प्रेम के आदान-प्रदान से अलग रहते हैं। भगवान ने मनुष्य को चॉइस दिया है कि तुम ऊपर भी चढ सकते हो और नीचे भी गिर सकते हो। यह कर्म-स्वातंत्र्य, इच्छा-स्वातंत्र्य भगवान ने मनुष्य को दे रखा है। [मै. नवं. 1970]

कुरान में एक सुंदर प्रसंग है। मुहम्मद पैगंबर ताजिरों (व्यापारी) के साथ बात कर रहे हैं। वे उनसे कहते हैं कि "आप लोग रोज अपने धंधों में लगे रहते हो, लेकिन हफ्ते में कम से कम एक दिन तो अपने धंधों को छोडकर भगवान की शरण में आइए। उससे आपकी तिजारत भी अच्छी चलेगी (कुसा 91) [कुरानशरीफ 62.9-11]।" शरीर की शक्ति कायम रखने के लिए हमको रोज खाना पडता है। आत्मा के लिए तो चौबीस घंटे प्रार्थना की जरूरत है। जो वैसी प्रार्थना करते हैं, वे महान हैं। उतनी योग्यता जिनमें नहीं है, वे दिन का कुछ समय तो प्रार्थना के लिए निकालें। और, कम से कम हफ्ते में एक दिन तो प्रार्थना के लिए इकट्ठा हों। भगवान की प्रार्थना में सारे भेदों को भूल जाने का अभ्यास हो जाता है। यह तो हमारी बदकिस्मती है कि प्रार्थना के कारण भी भेद बढ जाते हैं। एक पंथवाले को दूसरे की प्रार्थना के शब्द सहन नहीं होते। जहां अहंकार आया, वहां अच्छी चीज भी बिगड जाती है। भगवान के सामने हम खडे हो जाते हैं तो सब समान, सब शून्य हो जाना चाहिए। वहां कोई ज्ञानी नहीं, अज्ञानी नहीं, कोई श्रीमान नहीं, कोई गरीब नहीं, कोई ऊंचा नहीं, कोई नीचा नहीं। रात में चांद, तारे, आदि भेद चाहे दिखायी दें, सूरज निकलते ही सब साफ हो जाते हैं। [शां. या. पृ. 8]

मेरी पदयात्रा में सूर्योदय के समय हम लोग अक्सर रास्ते में थोडी देर बैठ जाते थे । उसमें सूर्य की उपासना करने की बात नहीं होती थी। सूर्य तो बेचारा हमारे जैसा ही है। उसको भी परमेश्वर ने ही पैदा किया है। सूर्य के द्वारा, जो उसका अंतर्यामी है और हम सबका अंतर्यामी है उसकी, उपासना करनी होती है। इस संबंध में यानी सूर्य की उपासना के विषय में कुरान में एक बहुत सुंदर वचन आया है। उसमें कहा है, "यदि आप भगवान की भक्ति करना चाहते हैं तो सूर्य-चंद्र की भक्ति न करें, जिसने सूर्य- चंद्र को पैदा किया है उसकी भक्ति करें। सीधी परमेश्वर की उपासना करें" (कुसा 20) [कुरानशरीफ 41.37]

महाराष्ट्र के संत स्वामी रामदास भी यही कहते हैं, "हे सूर्यनारायण, हमें निराकार दिखाओ, निराकार का दर्शन करा दो।" अद्भुत ही है ! सूर्य क्या दिखायेगा निराकार को ? वह तो जो साकार है उसी को दिखायेगा। उसके कारण ही समूचा विश्व प्रकाशित हुआ है। लेकिन रामदास उसी की प्रार्थना कर रहे हैं कि निराकार का दर्शन करा दे। वह निराकार तो अंतःकरण में है ही। वहां तक पहुंचना है। और जो साकार है, उसके कार्य का जो आकार है, उसको पहचानने में भी उसी से मदद मिलनेवाली है। इसलिए उसकी उपासना ! मुझे सूर्य जैसा दूसरा स्फूर्तिदायक मंदिर, आश्रम या काबा कोई भी नहीं दीखता । [24.3.58]

कुरान में स्पष्ट शब्दों में कहा है – **लैसल् बिर्र अन् तुवल्लू वुजूहकुम् क़िबलल् मश्रिक़ि वल् मग्रिबि व ला किन्नल् बिर्र...** (कुसा 186) [कुरानशरीफ 2.177] । - तुम अपना मुंह पूर्व की ओर करते हो या पश्चिम की ओर करते हो, इसमें धार्मिकता नहीं है। ये तो इबादत के तरीके हैं और इबादत के तरीकों में तो भेद होंगे ही। [मै. 69]

परमेश्वर अनंतनामी, अनंतरूपी, अनंतगुणी है। उसकी उपासना हम अपनी भावना के अनुसार अनंत प्रकार से करते हैं। जितने ज्यादा प्रकार होंगे उतना मानव का विकास सर्वांगीण होगा। इसलिए सारी दुनिया में भगवान की एक ही प्रकार की उपासना हो, ऐसा

आग्रह नहीं होना चाहिए। बल्कि आग्रह यह होना चाहिए कि उपासना किसी भी प्रकार की हो, एक की हो, और उसकी की जाये जो अंतर्यामी है, सबका परीक्षण करनेवाला है, सबका पालन करता है, सबमें समानरूप से रहता है, सब पर जिसका रहम है। [शां. या. 20.10.48]

परस्पर विचार-विमर्श भक्तिमार्ग की एक बहुत बडी विशेषता है। कुरान में कहा है, **अम्रुहुम् शूरा बैनहुम्** (कुसा 160) [कुरानशरीफ 42.38]। अम्र यानी काम, शूरा यानी मशविरा, बैनहुम् यानी आपस-आपस में। अल्लाह की इबादत करनेवाले, अल्लाह के प्यारे भक्तजन एक-दूसरे से सलाहमशविरा करके काम करते हैं। गीता में भी यही कहा है – **बोधयन्तः परस्परम्** (10.9) – एक-दूसरे को बोध देते हैं। यही सामुदायिक साधना है। कोई किसी को नीचे गिरने नहीं देता, फट् से ऊपर उठा लेता है। भक्तिमार्ग में कोई ऊंचा नहीं होता, कोई नीचा नहीं होता। सब भक्त ही होते हैं। [वि.सा.खं. 8.382 + गी.चिं. 10.9]

उपवास – रोजा

इस्लाम में उपवास का बहुत महत्त्व है। कुरान में रमजान के दिनों में रोजा रखने को कहा है। इस्लाम में चंद्र के भ्रमण के अनुसार महीना गिनते हैं। चंद्रमान पद्धति है। इसलिए रमजान माह कभी गरमी के दिनों में तो कभी बारिश के दिनों में आता है। मुसलमान लोग रमजान गरमी के दिनों में आने पर भी रोजे में दिनभर पानी नहीं पीते । 'ईद' अरबी शब्द है, लेकिन 'बीज' शब्द से आया है। बीज यानी द्वितीया । द्वितीया का चांद देखकर रोजे की समाप्ति करते हैं। [वि.सा.खं. 8.406]

दुनिया में कौनसा ऐसा प्राणी है, जिसका खाना छोडने से समाधान होता है ? इसका जवाब यही होगा कि केवल मनुष्य ही ऐसा प्राणी है। हिंदू एकादशी के नाम से खाना छोडता है। मुसलमान रोजा रखते हैं। उससे उनको समाधान होता है। अपनी इंद्रियों पर काबू रखने,

संयम रखने, भगवान का नाम लेने से मनुष्य को संतोष होता है। उसका अर्थ यह है कि सिर्फ खाने-पीने से मनुष्य को अपने जीवन की सार्थकता मालूम नहीं होती। वह उससे कुछ अधिक चाहता है। [मै. जन. 70]

एक बार मुहम्मद पैगंबर को सवाल पूछा गया किं जो भूख से पीडित हो जाते हैं, और फाका नहीं रख सकते, क्या वे जहन्नूम में जायेंगे, उन्हें धर्म के बाहर माना जायेगा ? क्या उनके लिए कोई राह नहीं है ? तो पैगंबर ने कहा, "नहीं। उस दिन वे एक भूखे को खिलायें तो उन्हें रोजा करने का पुण्य मिलेगा (कुसा 205) [कुरानशरीफ 2.183-184] ।" इसमें खूबी यह है कि जब तुम महसूस करते हो कि भूख का दुःख कैसा होता है, तो समझ लो कि दूसरे की भूख को बुझाना ही धर्म है। इसी को गीता ने 'आत्मौपम्य' कहा है। बल्कि यह बात सभी धर्मों ने कही है। इसी को सुवर्ण-नियम कहा गया है। अगर किसी को भूख का अनुभव ही नहीं होता, तो भूखे को खिलाने का उसका धर्म हो नहीं सकता। अगर किसी को प्यास का अनुभव नहीं है, तो प्यासे को पानी पिलाने का धर्म उसके लिए नहीं हो सकता। हमको जिसका अनुभव प्राप्त है, वह धर्म हमें प्राप्त है। कुरान का यह कलमा है। यतीम, अनाथ और गरीबों को खिलाते हैं, तो रोजे के जितना पुण्य मिलता है।

दान – जकात

कुरान-शरीफ में आता है, **... व आत ज़कात...** (कुसा 186) [कुरानशरीफ 2.177] – जकात (नियमित दान) देनी चाहिए। **... व मिम्मा रज़क़्नाहुम् युन्फिकून** (कुसा 2) [कुरानशरीफ 2.3] – जो भी थोडा है, उसी में से देना चाहिए। देना धर्म है और धर्म सब पर लागू होता है, इसलिए जकात गरीबों को भी देना चाहिए। देने का यह फर्ज हरएक को अदा करना चाहिए। जो भी थोडा मिलता है, उसी में से पेट काटकर देना चाहिए। किसान क्या करता है? फसल आती है, तो उसमें से अच्छा, उत्तम से उत्तम बीज निकालकर रखता है

अगले साल बोने के लिए। खाने के लिए न हो तो भी यह बीज के लिए निकालकर रखा हुआ खाता नहीं। यह एक तरह से उसकी कुर्बानी है। इसलिए अल्लाह खुश होते हैं और दसगुना देते हैं। इसलिए हर इनसान को चाहिए कि वह अपना फर्ज अदा करें। [वि.सा.खं. 8. 390, 91, 92]

पानी की सिफत हमें लेनी चाहिए। जैसे पानी हमेशा नीचान की तरफ दौडता है, वैसे हमें भी समाज में जो सबसे दुःखी हैं, गरीब हैं, उनकी इम्दाद (सहायता) में दौडना चाहिए। मुझे दो रोटी की भूख है और मेरे पास एक ही रोटी है, तब भी उसमें से एक टुकडा दूसरे को देना चाहिए; फिर बची हुई रोटी खानी चाहिए। यही इनसान का फर्ज है। इसी में इनसानियत है। अगर ऊपर देखा करोगे, तो दिल में खयाल आयेगा कि हमें और ज्यादा मिलना चाहिए। इस तरह हवस को बढाते जाना इनसानियत नहीं है। यह तो इनसान के जिस्म में छिपी हुई हैवानियत है। [मो. पै. पृ. 119]

एक बात और यह भी कही है कि आपने जो बडा भारी संग्रह इकट्ठा किया है, उसमें से देने की बात नहीं है। ऐसा बडा संग्रह पाप माना गया है। आप जिसको **रिज्क** – रोजी कहते हैं, भगवान की कृपा से अपने को हर दिन जो मिलता है, उसी में से देना है। यह बात सभी लोगों के लिए कही गयी है, सिर्फ श्रीमानों के लिए नहीं। और यह बात सभी धर्मों ने कही है। [15.12.56]

हम ग्रामदान की बात बताते हैं, तब कहते हैं कि हर कोई अपनी उपज का 40 वां हिस्सा ग्रामसभा को दे । तब मुसलमान लोग मुझे बताते हैं कि यह बात तो हमारे धर्म में बतायी है, नयी बात नहीं है। यह बात प्राचीन काल से चली आयी है कि 40 वां हिस्सा समाज के लिए देना चाहिए। इसी को मुसलमान लोग जकात कहते हैं। वह ग्रामसभा को देने से गांव के बच्चों, बूढों, बीमारों, बेवाओं और बेकारों की चिंता की जा सकेगी। यह बहुत

बडा त्याग है ऐसी बात नहीं। लेकिन यह ऐसा त्याग है कि इसे सब धर्मवालों ने माना है। हिंदुओं में भी है। लेकिन इस्लाम ने तो आज्ञा ही दी है कि जो यह नहीं करेगा, वह मुसलमान ही नहीं है।

एक जगह खैरात के बारे में कहा है। **... फ़स्तबिकुल् खैरात** (कुसा 197,241) [कुरानशरीफ 5.51,2.148] – खैरात में एक-दूसरे की होड करो। भिन्न-भिन्न मजहबवाले झगडा करते हैं। उनको कहा गया है कि ऐसे झगडते क्यों हो ? उससे तो यह करो कि खैरात में होड लगाओ, एक-दूसरे से आगे बढो । [14.7.66]

अल्लाह की कुदरत यही है। वह तफ्रका (भेद) नहीं करता, मसावत (समानता) करता है। वह बारिश बरसाता है तो सब पर बराबर बरसाता है। सूरज की धूप सबको मिलती है। हवा सबके लिए है। इसके मानी यह है कि अल्लाह की नियामतें सबको मिलें । हवा, पानी, सूरज की रोशनी जैसे ही जमीन भी अल्लाह की पैदाइश है। [24.7.59]

कुरान में कहा है कि जमीन परमेश्वर की है; मतलब मनुष्य उसका मालिक नहीं बन सकता। उसका लाभ सबको मिलना चाहिए। यही बात वेद कह रहा है कि यह पृथ्वी सबकी माता है और हम सब उसके पुत्र हैं। ईश्वर शब्द का अर्थ ही है प्रभु, मालिक या स्वामी। फिर यदि हम मालकियत का दावा करते हैं तो कुफ्र करते हैं। यह बात सभी धर्मों ने कही है। इसी आधार पर हमने जमीन का दान मांगा और सभी धर्मों के लोगों ने वह दिया। पहला सबसे बड़ा भूदान एक मुसलमान भाई से ही मिला था। मेरी (पूर्व) पाकिस्तान की यात्रा में भी पहले ही दिन भूदान मिला था। लेकिन अब विज्ञान का जमाना है, आज मालकियत हाथ में रखकर दूसरों पर थोड़ी दया करनेभर से न चलेगा। जब मालकियत मिटा देकर सामूहिक मालकियत मान लेंगे तब अधूरा भक्तिमार्ग पूरा होगा। ग्रामदान में यही विचार है। [14.2.56+ 15.1.57 +25.12.54]

पहले के जमाने में संत-फकीर घर-घर जाकर भिक्षा मांगते थे और समाज की सेवा करते थे। अब लोग पूछते हैं, ऐसे सेवक हैं कहां ? इस पर कुरान में जवाब दिया है, **अल् गैब** (कुसा 2) [कुरानशरीफ 2.3] । भगवान कहते हैं, जो अव्यक्त पर विश्वास रखते हैं वे मेरे भक्त हैं। जो सिर्फ व्यक्त पर ही विश्वास रखते हैं, देखने के बाद ही जो विश्वास करते हैं, वे मेरे भक्त नहीं हैं। इसलिए ऐसा न मानें कि कोई दयावान सेवक दिखायी दें तो ही यानी देखने के बाद ही अनाज देना चाहिए। अव्यक्त, जिनको आप देख नहीं सकते ऐसे सेवकों के लिए अनाज दें, ऐसी भक्ति करनी चाहिए। मैंने सर्वोदयपात्र की बात कही है, वह ऐसी ही है। घर-घर में सर्वोदयपात्र की स्थापना करें, घर में बच्चा होगा उसके हाथ से एक मुठ्ठी अनाज रोज उसमें डालें। उसका उपयोग ऐसे सेवकों के लिए होगा। [म.वि. 1.8.58]

दान देने में यह चाह नहीं रखनी है कि उसकी कोई कद्र करे। लेकिन, "वजु-हुल्लाह" की चाह रखें। कुरान में कहा है कि वे लोग सच्चे इबादत करनेवाले होते हैं, जो अल्लाह के बंदे होते हैं। एक जगह कहा है, **व मा उमिरू इल्ला लि यअबुदुल्लाह मुख्लिसीन लहुद्दीन हुनफ़ाअ, व युकीमुस्सलात व युअ्तु ज्जकात व जालिक दीनुल् क़य्यिमति** (कुसा 202) [कुरानशरीफ 98.5] – खालिस बनकर अल्लाह की इबादत करो। हम खिदमत करेंगे तो चुनाव में जीतेंगे, ओहदे पायेंगे ऐसी ख्वाहिश से नहीं, बल्कि **वजुहुल्लाह्** – अल्लाह का चेहरा देखने की ख्वाहिश से, हनीफ (एकाग्र) बनकर खिदमत कीजिए। इस आयत में तीन बातें बतायी हैं। ऐसे रुक्नेदीन (धर्म के आधार-स्तंभ) पांच कहलाते हैं। परंतु यहां उनमें से दो – फांका और हज – छोड दिये हैं। इसका मतलब यह नहीं कि वे खंबे नहीं; लेकिन अवाम के लिए क्या मजहब है, यह कहने का मौका आया, तब उन दोनों को छोड दिया। क्योंकि कई लोग ऐसे होते हैं, जो फाका नहीं कर सकते, हज नहीं जा सकते। इस तरह यहां तीन बातें बतायीं – (1) हनीफ बनकर सचाई से खिदमत करें, (2) जकात दें, (3) नमाज पढें । सबके लिए यही दीन है। [मो. पै. 164]

सूद

सूद का बहुत बडा निषेध मुहम्मदसाहब जैसे महापुरुष ने किया है। उनको दर्शन हुआ कि सूद लेना आत्मा के खिलाफ कार्य है। कुरान में यह वाक्य पांच-सात बार आया है कि "तुम संपत्ति बढाने के लिए सूद क्यों लेते हो ? संपत्ति व्याज से नहीं, दान से बढती है (कुसा 256,257) [कुरानशरीफ 2.275-76, 30.39] ।" दसों मर्तबा लिखा है कि व्याज लेना पाप है – हराम है। इस्लाम ने इस पर ऐसा प्रहार किया है, जैसे हम व्यभिचार या खून का निषेध करते हैं। लेकिन हम लोग व्याज को आर्थिक संस्था मानते हैं, सारा व्यापार इसी पर चलता है। मुनाफाखोरी, रिश्वतखोरी, यह सारा पाप है। व्याज लेने का अर्थ है, लोगों की अडचनों से लाभ उठाकर पैसा कमाना। इसकी गिनती हम लोग पाप में करते ही नहीं। दरअसल अपने पास आया हुआ पैसा तुरंत दूसरी ओर भेज देना चाहिए। फूटबॉल के खेल में अपने पास आयी हुई गेंद अपने ही पास रख लेंगे, तो खेल कैसे होगा? गेंद को अपने पास से दूसरे के, वहां से तीसरे के पास फेंकना पडता है, तब खेल चलता है। पैसा और इल्म दूसरों को देते चलो, तो दोनों बढेंगे। मैं मानता हूं कि सूद पर जितना प्रहार इस्लाम ने किया है उतना और किसी ने नहीं किया। यह जो ब्याज का आत्यंतिक निषेध किया है, समाज को उसको कभी न कभी मानना ही पडेगा। और वह दिन जल्दी आना चाहिए – उसे जल्दी लाना चाहिए। अगर ब्याज का निषेध हो जाये तो संग्रह की मात्रा काफी घट जायेगी। इस्लाम ने ब्याज न लेने की यह जो हिदायत दी है, उसका अमल किया जाये तो पूंजीवाद का खात्मा अपने आप हो जाता है। जिसको हम सच्चा अर्थशास्त्र कहते हैं, उसके बहुत नजदीक का यह विचार है। मेरा अभिप्राय है कि साम्यवाद की जड का बीज मुहम्मद पैगंबर के उपदेश में रहा है। वह ऐसा पुरुष निकला, जिसने सूद का निषेध किया और समानता का प्रचार किया। इस उसूल को उन्होंने केवल भारपूर्वक ही नहीं रखा, बल्कि इस उसूल

की बुनियाद पर संपूर्ण इस्लाम की रचना उन्होंने जिस प्रकार की वैसी और किसी ने नहीं की। [वि.चिं. 16.80 +14.9.53 + भू.पु. 6.7.59]

सूद लेने की बात पर सभी धर्मों ने प्रहार किया है। हिंदूधर्म ने सूद को 'कुसीद' नाम दिया है, यानी खराब हालत करनेवाला, मनुष्य की अवनति करनेवाला। इस नाम में ही पाप भरा है। सूद न लेने में चित्तशुद्धि का काम है, पापमोचन है। उसे छोडना ही चाहिए।

इसके लिए एक सादा-सा उपाय हो सकता है। आज जो सूद के नाम से लिया जाता है, वह न लें और इन्स्टॉलमेंट के रूप में कुछ न कुछ लिया जाये। दोनों पक्ष मिलकर इन्स्टॉलमेंट के बारे में तय करें। गरीब मनुष्य सबके सब रुपये एक साथ वापस नहीं कर सकता है। परंतु हर साल कुछ न कुछ हिस्सा दे सकता है। जहां सद्भावना है, वहां ये सारी युक्तियां ध्यान में आ सकती हैं। [16.4.63]

आजमाइश - परीक्षा

कुरान में बार-बार आया है कि तुम सबको मेरी तरफ आना है। तुम्हें थोडी देर के लिए दुनिया में भेजा है। क्यों भेजा है? आजमाइश के लिए यानी कसौटी करने के लिए भेजा है (कुसा 137,268) [कुरानशरीफ 21.35, 89, 15-20] ।

मनुष्य सुख चाहता है, दुःख नहीं चाहता। लेकिन सुखी होना हमेशा बहुत अच्छा नहीं होता। अगर मनुष्य विचार करेगा तो स्पष्ट दीख पडेगा कि जैसे दुःख मनुष्य का पतन करता है वैसे ही सुख भी करता है। इस बारे में कुरान में बहुत सुंदर बात कही है। (कुसा 114-116) [कुरानशरीफ 29.2-3, 43.31, 42.27] जैसे बच्चों के लिए गणित, भूगोल आदि की इम्तहान होती है, प्रश्नपत्र होते हैं, वैसे ही भगवान ने हमारे लिए सुख-दुःख का पेपर रखा है। [वि.प्र. 12.12.58]

मुहम्मद पैगंबर कहते हैं – हे अमीरो, तुमको अल्लाह ने अमीर क्यों बनाया ? आजमाइश के लिए। वह कसौटी करता है कि आप दयालु बनते हैं या नहीं। अपनी संपत्ति का इस्तेमाल सभी के लिए करते हो या नहीं ? जो अपनी दौलत का हिस्सा बांटेगा, वह उस आजमाइश में पास होगा। और अगर दूसरों को लूटेगा, चूसेगा तो फेल होगा। जो फेल होगा, उसे वह आग में ले जायेगा और जो पास होगा, उसे बाग में ले जायेगा। वह सब देख रहा है। हे गरीबो, तुमको गुर्बत क्यों दी ? तुम्हारी आजमाइश करने के लिए। गुर्बत के कारण तुम दीन-लाचार तो नहीं बन रहे हो ? शांति खो तो नहीं रहे हो ? मेहनत करते हो या नहीं ? जो कुछ मिला है, उसमें से कुछ हिस्सा भगवान को देते हो या नहीं ? वह यह देखना चाहता है। लोग समझते हैं कि जिसे अल्लाह ने गुर्बत दी उस पर वह नाराज है और जिसे दौलत दी उस पर राजी है; लेकिन यह ख्याल गलत है। हे बुद्धिमानो, तुम्हे बुद्धि देकर वह तुम्हारी आजमाइश कर रहा है। तुम अपनी बुद्धि का उपयोग उन लोगों के लिए, जिनके पास कम बुद्धि है, करते हो? दूसरों की चिंता करते हो ? और हे मंदबुद्धिवालो, बुद्धि कम है, फिर भी तुम प्रेम, करुणा, नम्रता, सेवावृत्ति, इन भावनाओं को बढा रहे हो या नहीं ? इस प्रकार वह सभी की कसौटी कर रहा है। मुहम्मद पैगंबर ने यह बात कि समूची जिंदगी आजमाइश है, बहुत अच्छी तरह से पेश की है। [27.4.58]

हिंदू, मुसलमान सब एक ही मिट्टी के पुतले हैं। मरने के बाद हिंदुओं का दहन होता है और मुसलमानों का दफन होता है। लेकिन आखिर होती है दोनों की एक ही मिट्टी। उस मिट्टी पर से कौन हिंदू थे, कौन मुसलमान थे, पहचाना नहीं जायेगा। यह जिंदगी क्या है ? जिंदगी खेल तमाशा है, चार दिन की चांदनी है। हम मिट्टी से पैदा हुए और मिट्टी में ही मिल जानेवाले हैं। बीच का चंद रोज का जीवन एक आजमाइश है। कुरान में इसको 'फितना' कहा है (कुसा 137) [कुरानशरीफ 21.35] । [शां. या. 82; वि.सा. खं. 8.387]

कुरान में एक सूरा है, जिसका नाम है हदीद, यानी लोहा (कुसा 289) [कुरानशरीफ 57.25] । उसमें उल्लेख है कि मनुष्य की परीक्षा के लिए भगवान की भेजी हुई यह चीज है। जबसे लोहे की खोज हुई, तबसे मनुष्य की परीक्षा शुरू हुई। और एकदम शुरू में ही हम उस परीक्षा में फेल हो गये; क्योंकि हमने हमारे रक्षण के लिए तलवार बनायी। कुरान में आता है कि इनसान की परीक्षा के लिए भगवान ने लोहा पैदा किया। क्योंकि उससे नुकसान और लाभ, दोनों हो सकते हैं। अक्लवाले मनुष्य को लोहे का लाभ होगा और बेवकूफ को उससे नुकसान होगा। उत्पादन के औजार लोहे से बनते हैं। लोहे के बिना किसान का काम नहीं चलेगा। लोहे के बिना बढई का काम नहीं चलेगा। इसलिए लोहा मनुष्य के जीवन के लिए बहुत मददगार है। लेकिन उससे शस्त्र भी बनता है। मानवजाति अपना नुकसान भी कर सकती है। [वि.सा.खं. 8.387]

कश्मीर की पदयात्रा में एक बार डेमोक्रेटिक कान्फ्रेन्स के लोग हमसे मिलने आये थे। उन्होंने कहा कि 'हम इस्लाम को माननेवाले हैं, इसलिए हम मानते हैं कि अभी यहां यह जो सैलाब आया था, वह हमारी बुराइयों का नतीजा है। यह इस्लाम का एक अकीदा (दृढ विश्वास) है कि जब हम खुदा को भूल जाते हैं, तभी ऐसी आफतें आती हैं।' उसके बाद एक सभा में बच्चों ने हमसे पूछा कि बाढ क्यों आयी, तो हमने यही जवाब दिया। हमारी बुराइयों के कारण अल्लाह का गजब हम पर उतरता है। जब हम यह बोलते हैं तब सिर्फ तोते की तरह बोलते ही हैं, इस पर एतबार (विश्वास) नहीं करते । सही माने में, यह बात हमारे जबान पर तो होती है, पर दिल में नहीं होती। [22.7.59]

ईमान और नेक काम

कुरानशरीफ में कहा है – भले लोग वे होते हैं, जो अल्लाह पर ईमान रखते हैं और नेक काम करते हैं। नेक काम न करें तो ईमान रखने के कोई मानी नहीं है। ... **लिम तकूलून**

मा ला तफ्अलून (कुसा 212) [कुरानशरीफ 61.2] – क्यों ऐसी बातें करते हों, जो करते नहीं हो ? इस्लाम का वर्णन है कि सच्चा मुसलमान वह है, जो ईमान रखता है। लेकिन सिर्फ ईमान से कुरान को तसल्ली नहीं है। जहां-जहां ईमान के लिए कहा है, वहां 'नेक काम' जोड दिया है। कुरान में बार-बार जिक्र आता है, "मेरे प्यारे वे हैं, जो ईमान रखते हैं और नेक काम करते हैं।" अल्लाह पर ईमान रखो और अल्लामियां ने दो हाथ दिये हैं, उनसे नेक काम करो। तो अल्लाह बरकत देगा। नहीं तो अल्लाह कहेगा कि तुम्हारा ईमान कोई कीमत नहीं रखता । तुम तंग हालत में हो, लेकिन हमने तो तुम्हारा इंतजाम कर दिया है दो हाथ देकर । [पा. या. पृ. 46]

आगे कहा है कि अगर बुरा काम करोगे, तो बुरा फल पाओगे और अच्छा काम करोगे तो अच्छा फल पाओगे। इसका अनुभव इस जिंदगी में न आया तो बाद में आयेगा, लेकिन आयेगा जरूर । यह जिंदगी एक कसौटी है। अल्लाह हमें उस पर कस लेता है। जो थोडा समय इनसान को इस जिंदगी में मिला है, उसमें नेक काम करके हम कसौटी पर खरे उतरते हैं तो भगवान की सच्ची भक्ति करते हैं। [वि.सा.खं. 8.383, 84]

फिर यह भी कहा है कि सब लोग घाटे में हैं सिवा कि वे जो एक-दूसरे को हक पर चलने की हिदायत देते रहते हैं, एक-दूसरे को जगाते रहते हैं, कहीं कोई गलत रास्ते पर जाये तो उसे बचाते हैं, एक-दूसरे को सब्र देते है। **इल्लजीन आमनू व अमिलुस्सालिहाति व तवासौ बिल् हक् व तवासौ बिस्सब्र** (कुसा 239) [कुरानशरीफ 103.2] । ईमान रखना, नेक काम करना और एक-दूसरे को सब्र रखने में मदद करना, इस्लाम है। [4.5.66]

मुहम्मदसाहब ने आखिरी दिनों में अपनी लडकी फातिमा को बुलाकर कहा, रे फातिमा, भगवान के सामने तेरा बचाव मैं नहीं कर सकता और न मेरा बचाव तू कर सकती

है। इसलिए अपना बचाव कर ले। भगवान के सामने सबको अपनी-अपनी जबानी देनी पडेगी। यह नहीं पूछा जायेगा कि तेरी बेटी ने क्या किया ? वहां तो पूछा जायेगा कि तुमने क्या किया ? वहां सारा बिलकुल आमने-सामने होगा। हमें जहन्नुम या जन्नत में ले जानेवाले हमारे सिवा दूसरा कोई शख्स नहीं हो सकता। इसलिए कुरान में कहा है कि 'कोई शख्स दूसरे की जिम्मेवारी नहीं उठा सकता। हरएक को अपना बोझ उठाना पडेगा।' क्या हमारा बोझ कोई मंत्री या कोई अधिकारी उठायेगा ? अल्लामियां के सामने मैं भी खडा रहूंगा और मंत्री भी। मुझे पूछे जायेंगे मेरे कारनामे । और मंत्री को पूछे जायेंगे उसके कारनामे । मुझे उसके और उसको मेरे नहीं पूछे जायेंगे। मैं देखता हूं कि मनुष्य में अपना निज का कोई बल नहीं है। अगर वह भगवान पर श्रद्धा रखकर चलता है तो भगवान कुछ बल देता ही है। [मै. 73+22.7.59]

समझने की मुख्य बात यह है कि जब हम अल्लाह के सामने खडे होंगे, उस वक्त न भाई काम आयेगा, न बाप, न बेटा, न पति, न पत्नी काम आयेगी । न किसी की ओर से कोई सिफारिश चलेगी (कुसा 387)। [कुरानशरीफ 2.123] सीधा सवाल किया जायेगा कि तूने क्या किया ? **फ़ मँय्यअ्मल् मिस्काल जर्रतिन् खैरँय्यरह** – जो जर्राभर भी नेक काम करेगा, उसे उसका फल मिलेगा। और, **मिस्काल जर्रतिन् शर्रय्यरह** (कुसा 381) [कुरानशरीफ 99.1-8] – जर्राभर भी बुरा काम करेगा तो उसका भी फल मिलेगा। हर आदमी अपना जिम्मा उठायेगा। [मै. 69]

तीन अवस्थाएं

इस्लाम में तीन प्रकार की अवस्थाएं बतायी हैं। सब्र (धीरज), रहम (करुणा), हक (सत्य) (कुसा 238, 239) [कुरानशरीफ 90.17, 103.3] । पहला अनुभव है सब्र का, जिसके बिना हम आगे बढ ही नहीं सकेंगे। कुरानशरीफ में आया है कि "जो सब्र नहीं रखेंगे,

जंजबा पैदा करेंगे, वे दुनिया में हार खायेंगे और मार भी खायेंगे।” उन्हें दोनों खाने को मिलेगा। इसका मतलब यह नहीं कि दो-चार साल राह देखें – राह देखने की बात नहीं। बल्कि मतलब इसका यह है कि दिमाग ठंडा रहे। अगर दिमाग गरम हो तो कुछ नहीं बनेगा। साइन्स के जमाने में तो यह बहुत ही जरूरी है कि दिमाग ठंडा रखें। साइन्स के जमाने में एतबार भी एक बहुत बडी ताकत है। हम हमेशा एतबार ही रखते हैं। एतबार रखकर ही हम समझें कि जो हमारे खिलाफ बोलते हैं, उनके क्या विचार हैं। अगर वे हमारे बारे में गलत समझे हो, तो सब्र करें। सब्र भी एक ताकत है। अगर हमारे साथ हक और सब्र हैं तो फिर हमें कोई नहीं जीत सकता। अगर हक हमारे साथ न हो, तो सब्र से काम नहीं बनेगा। फिर हम सब्र दिखा भी नहीं सकेंगे । [वि.प्र. 10.8.59]

दूसरा अनुभव है रहम का। अल्लाह ने इनसान को सबसे बडी जो चीज बख्शी है, वह है इनसानियत । उसी को हम रहम, हमदर्दी या करुणा कहते हैं। यह चीज जितनी जिस शख्स में होगी, उतना ही उसकी जिंदगी में, अंतःकरण में इतमीनान होगा, सुकून होगा। उतनी ही उसे शांति मिलेगी । [14.7.59]

तीसरा आखिरी अनुभव है हक का, जहां सब पूरा एक हो जाता है, एक ही रहता है। आखिरी अवस्था है वहदत – अद्वैत – हक ! योगी के लिए करुणा की अवस्था नीचे की अवस्था होगी, जबकि करुणा की कक्षा हमारे लिए ऊंची कक्षा होती है, जहां मैं आपसे अलग हूं और आप मुझसे अलग हैं। आपका दुःख देखकर मेरा दिल पिघलता है। लेकिन आखिरी जो कक्षा है वहदत की, उसमें तेरा-मेरा-भेद रहता नहीं। हम एक हो जाते हैं। एक-दूसरे के लिए करुणा रखने की बात ही वहां आयेगी नहीं। [18.8.59]

जिहाद

कुरानशरीफ में एक वाक्य आया है – “अरे, तुम लोगों को जिहाद के लिए घर छोडकर निकलना चाहिए।” लेकिन उसके साथ-साथ और एक आज्ञा दी है कि “हर जमात में कुछ लोग धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, विचार के अध्ययन के लिए पीछे रहे। जब वे लोग युद्ध से लौटकर आयेंगे तब उनको धर्म की शिक्षा कौन देगा ? जो लोग पीछे रहकर धर्म का ज्ञान प्राप्त करेंगे, वे ही देंगे (कुसा 130) [कुरानशरीफ 9.122] ।” इसी दृष्टि से हमने आश्रमों की योजना की है। इन आश्रमों में भगवद्भक्ति होगी, व्रतनिष्ठा होगी और अध्ययनशीलता होगी, साथ-साथ काम का माद्दा भी होगा। [वि. सा.खं. 8.391]

यद्यपि कुरानशरीफ में अन्याय-प्रतिकार की स्पष्ट आज्ञा दी है, वह व्यावहारिक या सामान्य अन्याय के विषय में नहीं है। वहां अन्याय के माने हैं हमारे धार्मिक विचार या आचार की पद्धति पर किया आक्रमण । जैसे, संध्या-उपासना को मैं धार्मिक या आध्यात्मिक समझता हूं, उस पर आक्रमण होता है तो उसका प्रतिकार अहिंसा से करें; और, अहिंसा से प्रतिकार करना अगर हमारे लिए असंभव हो तो हिंसा से प्रतिकार कर सकते हैं। इस प्रकार वह आज्ञा धर्मविषयक अत्यंत सीमित है। वह आज्ञा इतनी व्यापक नहीं है कि जीवन के किसी भी विषय में कुछ भी अन्याय होता हो, तो उसका प्रतिकार करना हमारा धर्म है। कुरान की वह व्याख्या अत्यंत सीमित – मर्यादित है। जब बाहर से नास्तिकों का हल्ला होता होगा तब धार्मिक बचाव के लिए वह आज्ञा दी है। जिहाद की प्रत्यक्ष आज्ञा धार्मिक – आध्यात्मिक मामले में ही लागू पडती है (कुसा 243) [कुरानशरीफ 22,39-40]। [26.6.41]

तीन लोक

कुरान में तीन लोकों का वर्णन है। एक है जन्नत (बहिश्त) यानी स्वर्ग। दूसरा है जहन्नुम यानी नरक, इसको दोजख भी कहते हैं। कहा जाता है कि स्वर्ग में जाओगे तो मेवे

चखने को मिलेंगे और नरक में जाओगे तो दुःख भुगतना पडेगा (कुसा अध्याय 88) [कुरानशरीफ 76.4,41.19-22, 24.83,47.15, 7.46-47,17.19, 56.7-11,84.6-14, 11.106-108] । इस तरह इधर आग, उधर बाग – इधर जहन्नुम, उधर जन्नत । आग का डर, बाग का लालच । यह सब क्या अब चलेगा ? कुरान में कहा है कि अच्छा काम करनेवाले, सबाब (पुण्य) हासिल करनेवाले लोग जन्नत में जाते हैं, तो वहां जाने पर कहते हैं, अरे, हमें यहां वही चीज मिली, जो दुनिया में मिली थी। हमें समझना चाहिए कि हमने जिस अक्ल से यहां पर जिंदगी बितायी, उसी अक्ल को लेकर जन्नत या जहन्नुम में जायेंगे। अगर यहां बेवकूफ साबित हुए होंगे, अपने गांव को नरक बनाया होगा, गंदगी वैसी ही रहने दी होगी, तो मरने के बाद जहां जायेंगे वहां क्या साफ-सुथरे रह पायेंगे ? वहां भी वैसा ही नरक मिलेगा, क्योंकि आपकी अक्ल ही वैसी थी ! लेकिन यहां पर साफ-सुथरी जिंदगी बितायी होगी तो मरने के बाद स्वर्ग में जायेंगे और वहां साफ-सुथरी जिंदगी मिलेगी। [वि. प्र. 22.9.59]

स्वर्ग और नरक, ये दोनों तो हिंदू पुराणों में भी मिलते हैं। लेकिन कुरान में तीसरी गति बतायी है, बरजख । बरजख बीच में है। जो इनसान बरजख में जाता है, उसके चेहरे का आधा हिस्सा रोता हुआ होता है और आधा हिस्सा मुस्कुराता हुआ । वह जन्नत की तरफ देखता है तो उसकी एक आंख रोती है और दूसरी आंख दोजख की तरफ होती है, वह हंसती है। वहां से स्वर्ग का भी दर्शन होता है और नरक का भी होता है। जब वह स्वर्ग की तरफ देखता है तब रोता है और दोजख की तरफ देखता है तो खुश होता है, क्योंकि वह बीच की हालत में है (कुसा 393) [कुरानशरीफ 7.46-47] । दरअसल दुनिया में जितने भी प्राणी हैं, वे बरजख में है – न कोई दोजख में है, न कोई जन्नत में ही। यानी हमसे ज्यादा दुःखी कोई न कोई है ही, वैसे ही ज्यादा सुखी भी कोई है। कोई मनुष्य ऐसा नहीं, कोई प्राणी ऐसा नहीं जिससे ज्यादा दुःखी दुनिया में कोई न हो। हम सब बीच की हालत में हैं। इसवास्ते

जो हमसे दुःखी हैं उनके लिए कुछ न कुछ करने की जिम्मेवारी हम पर आती है। यह धर्मभावना रूढ करनी चाहिए।

जहां बडे-बडे तालाब हैं, पहाड हैं, गुल हैं, वह स्वर्ग नहीं है; जहां दिल की उदारता है, दिल बाग है, वहीं स्वर्ग है। [वि.सा.खं. 8. 386 + 18.4.54]

गैब – अज्ञात

आत्मा यानी जीवात्मा को कुरान में रूह कहा है। मुहम्मद पैगंबर से पूछा गया कि क्या आप रूह जानते हैं ? तो उन्होंने जवाब दिया, “यदि मैं जानता तो कुल दुनिया पर मेरी सत्ता चलती।” इसका अर्थ है, जीवात्मा का विषय हमारे हाथ में नहीं है।

मुहम्मदसाहब से कहा गया कि ‘गैब’ यानी ‘अज्ञात’ की बात बताइए, उस समय भी उन्होंने यही कहा, “अगर मैं जानता तो सारी सृष्टि पर मेरी सत्ता चलती।” मृत्यु के बाद जीवन कायम रहता है। वह नया शरीर धारण नहीं करता, लेकिन सूक्ष्म लिंगदेह में पड़ा रहता है। नया शरीर, स्थूल शरीर धारण करता है या नहीं, स्पष्ट नहीं कह सकते। इसलिए कब्रस्तान में पड़े रहते हैं। इस तरह मुसलमान लोग भी मानते हैं कि मृत्यु के बाद जीवन है। सवाल यही है कि वह सूक्ष्मरूप में है या स्थूलरूप में ?

एक दफा एक मुसलमानभाई से चर्चा चल रही थी। मैंने उनसे कहा, “एक लड़का पैदा होता है और दो मिनट में ही मर जाता है। तो क्या आखिरी दिन न्याय करते समय अल्लाह उसके दो मिनटों के पाप-पुण्य को देखकर न्याय करेगा ?” एक जीव अनंतकाल तक अव्यक्त रहता है, फिर दो मिनटों के लिए व्यक्त हो जाता है और अनंतकाल तक अव्यक्त रहता है। यह बात तर्कसंगत नहीं मालूम होती। [वि.सा.खं. 8.389]

सृष्टि का एक हेतु यह भी कहा जाता है कि परमेश्वर को लीला करने की इच्छा हुई और उसने सृष्टि निर्माण की। यह लीलावाद है। कुरानशरीफ में इसका खंडन किया है। कहा

है कि यह विचार गलत है कि सृष्टि यानी परमेश्वर का रचा हुआ खेल है; परंतु सृष्टि का हेतु मनुष्य को मालूम नहीं है। [वि.सा.खं. 8.402]

अक्सर उत्तम पुरुषों में दो प्रकार की वृत्ति देखने को मिलती है। वासना-क्षय की वृत्ति जिनमें होती है और जो कर भी पाते हैं, वे विश्वाभिमुख नहीं होते हैं, लेकिन ध्यानमग्न रहते हैं। वे अक्सर निवृत्ति की ओर झुकते हैं; क्योंकि उन्होंने तृष्णा-क्षय को प्रमुख सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया है। उत्तम पुरुष वासना में लिप्त नहीं रहेगा। जिन्होंने करुणा को प्रधान माना, उन्होंने तृष्णा-क्षय को गौण माना। उनकी करुणा चली दुनिया पर आक्रमण करते हुए। जैसे इस्लाम है। उन्होंने तृष्णा का क्षय करने को नहीं, तृष्णा को सीमित करने को माना। तृष्णा को आगे नहीं बढ़ने देना चाहिए, दुनिया के काम के लिए समतोल रखना चाहिए। भगवान करुणावान है और हमको भी करुणा का काम करना चाहिए। लेकिन इस्लाम में सूफी फकीर हुए, उन्होंने तृष्णा-क्षय की बात मानी। जहां तृष्णाक्षय होता है वहां आत्मा-परमात्मा-भेद मिट जाता है। परमात्मा वासनारहित है और हम वासनायुक्त। वासना का भेद मिट जाता है तो भेद रहता नहीं। इसलिए सूफियों ने कहा – "अनल्हक" यानी मैं सत्य – परमात्मा हूं। वेदांत ने जो बात मानी, वह लगभग पूरी सूफियों में है। हिंदुस्तान के मध्ययुगीन संतों पर सूफियों का असर था। ख्रिश्चनों में व्यक्तिगत वासना खत्म करना चाहा, कॅथोलिकों ने ब्रह्मचर्य को माना; लेकिन अपनी करुणा को मानव तक सीमित रखा। सर्विस ऑफ ह्यूमॅनिटी । हिंदुओं ने कहा, 'सर्वभूतहिते रताः'। यह शब्द व्यापक पड़ा इसलिए मानवसेवा को भूल गये, चींटी-मकोडों को याद रखा। [मै. सितं. 79]

परंतु मैंने एक शब्द ढूंढ लिया है – 'अभिध्यान'— (विश्व के) अभिमुख होकर ध्यान । तृष्णा-क्षयवालों का झुकाव विश्व के अभिमुख रहता नहीं। करुणावालों को – बाढ, भूकंप, अकाल वगैरह के कारण – बाहर का देखते-देखते अंदर देखने को समय नहीं मिलता।

करुणावाले करुणाग्रस्त होकर बहिर्मुख होंगे, अंतर्मुख होंगे नहीं। और, जो अंतर्मुख हैं, वे उसी आनंद में मग्न रहेंगे, बाहर देखेंगे नहीं। अभिध्यान से दोनों सधता है।

* *

7. समन्वय की कला

नया रसायन दाखिल हुआ

बारह सौ साल से भी ज्यादा अरसा हुआ, जब इस्लाम धर्म यहां आया। इस्लाम के जनम के चंद दिनों बाद ताजीरों के जरिये हिंदुस्तान में खबरें पहुंचने लगीं। मुस्लिम फकीर भी हिंदुस्तान में आते थे। वे गांव-गांव घूमकर एक ही अल्लाह की इबादत करने का पैगाम लोगों को देते थे। इस्लाम का प्रचार मुसलमान राजाओं ने नहीं, फकीरों ने किया। उस समय हिंदुस्तान की जनता पर फकीरों का कितना असर था, इसका ख्याल छत्रपति शिवाजी के उस कथन से आता है, जिसमें उन्होंने कहा है – 'हिंदूधर्म की रक्षा के लिए मैंने फकीरी अपनायी है।' इतना आदर फकीरों के लिए था। फकीरों ने यहां समानता का प्रचार किया। [वि. चिं. 55.261 + 29.6.58]

मुसलमानों ने अपनी संस्कृति के विकास के लिए, दीखता है, दो मार्ग अपनाये। एक हिंसा का और दूसरा प्रेम का। ये दो मार्ग दो धाराओं की तरह एकसाथ चले । हिंसा के साथ हम गजनी, औरंगजेब आदि के नाम ले सकते हैं; तो दूसरी तरफ प्रेममार्ग के लिए अकबर का, फकीरों के नाम ले सकते हैं। यहां जो कमी थी, वह इस्लाम ने पूरी की। इस्लाम सबको समान मानता था। यद्यपि उपनिषद आदि में समानता का विचार मिलता है, यहां की सामाजिक व्यवस्था में इस समानता की अनुभूति नहीं मिलती थी। यहां के लोगों ने उस पर अमल नहीं किया था। व्यावहारिक समानता का विचार इस्लाम के साथ आया। इस्लाम के

आगमन के समय यहां अनेक जातियां थीं। एक जाति दूसरी जाति के साथ न शादी-ब्याह करती थी, न रोटी-पानी। इस तरह जहां देखो वहां चौखटें बनी हुई थीं। लेकिन धीरे-धीरे दो संस्कृतियां नजदीक आयीं। दोनों के गुणों का लाभ देश को मिला। इस सिलसिले में जो लडाई-झगडें हुए और जो संघर्ष हुआ, उसका इतिहास हम जानते ही हैं। यह तो कोई नहीं कह सकता कि जो लोग यहां आये उन्होंने तलवार से हिंदुस्तान को जीता या हिंदुस्तान के लोग लडाई में हार गये। [भू. य. 29.5.51]

अक्सर यह जो माना जाता है कि मुसलमानों ने तलवार के सहारे धर्मप्रचार किया, यह संपूर्ण सत्य नहीं है। बल्कि अति अल्प सत्य है। केवल तलवार के बल पर दुनिया में कुछ नहीं हो सकता । तलवार के आधार से निबाह हो सकता है मानना ठीक वैसा ही है कि कोई कहे कि रेत की नींव पर बडा मकान बांध सकते हैं। अंकुर उसी बीज से फूटता है, जिसमें सत्त्व होता है। हम कचरे को घूरे में फेंक देते हैं, उसके साथ एकाध ज्वार का दाना भी चला जाता है। कचरा तो सड जाता है, पर वह जो दाना होता है, उसमें से अंकुर ऊपर आता है। इस बात को हम पहचानते नहीं। पश्चिम की संस्कृति के बारे में भी हम यही सोचते हैं कि वह संस्कृति पशुबल के आधार से विजयी हुई है। लेकिन यह बहुत ही स्थूल दृष्टि है। उनको जो सफलता मिली है, वह उनके उद्योगशीलता, सहकार्य की वृत्ति, कष्ट सहन करने की, संकटों को झेलने की हिम्मत, एक-एक विषय के पीछे पागल बनकर पूरी जिंदगी उसके पीछे दे देने की तैयारी इत्यादि गुणों के कारण मिली है। हमें तलवार दीखती है, लेकिन तलवार लंगडी होती है; नींव में गुणों की राशि होती है। इस्लाम का प्रचार भी तलवार से नहीं हुआ। सैकडों मुसलमान संत हो गये, औलिया हो गये। और उस धर्म का ज्ञान दुनिया में सर्वत्र फैला। जैसे बुद्ध के अनुयायी दुनिया में चारों ओर गये वैसे ही इस्लामी संत गये – हिंदुस्तान में आये। हिंदू लोग अपने बच्चों के नाम इस्लामी संतों के नाम पर से रखते थे। शहाजी (छत्रपति शिवाजी के पिता) मुसलमान संत का नाम है। [मै. सितं. 2005]

इस्लाम कैसे फैला यह जरा देखिए। मुहम्मद पैगंबर के साथी, शिष्य पहले बडी सादगी से रहते थे। बाद में जब मुहम्मदसाहब के हाथ में राज्य आ गया, तब उनके वे शिष्य सरदार बनकर जगह-जगह काम करने लगे। एक दिन किसी शिष्य की शिकायत मुहम्मदसाहब के पास आयी – जबसे वह सरदार बना है, तबसे महीन आटा खाने लगा है। मुहम्मदसाहब ने उसे बुलवाया। जब वे आये, मुहम्मदसाहब ने उनसे कहा 'क्यों बेटा, तुम्हारे बारे में कहा जाता है कि जबसे सरदार बने हो, तबसे महीन आटा खाने लगे हो ?' उन्होंने कहा, 'ऐसी कोई बात नहीं है। मोटा आटा मिलता है तो मोटा खा लेता हूं, महीन मिलता है तो महीन खाता हूं।' मुहम्मदसाहब ने कहा, 'ठीक है, फिर भी साधारण लोग तो मोटा आटा ही खाते हैं। तो हमें भी मोटा आटा खाना चाहिए।' इस तरह इस्लाम फैला।

बीच के जमाने में हिंदुस्तान में बहुत-से भक्त हुए, जिन्होंने जातिभेद के खिलाफ प्रचार किया और एक परमेश्वर की उपासना पर जोर दिया। इसमें इस्लाम का बहुत बडा हिस्सा था। हिंदुस्तान को इस्लाम की यह बडी देन है। इस तरह पहले ही जो संस्कृति द्रविड और आर्यों की अच्छाइयों के मिश्रण से बनी थी, उसमें यह नया रसायन दाखिल हुआ। [खा. वि. पृ. 4]

भारत महामानव-सागर

भारत में हिंदू-मुसलमान पिछले हजार सालों से एक हुए हैं। उन्होंने परस्परों से झगडे, लडाइयां भी कीं; परंतु उसमें से वे एकता की संस्कृति का ही निर्माण कर रहे थे । परस्पर संबंध प्रेम का बनाना चाहते थे। मुसलमान राजाओं ने अनेक हिंदू कवियों को आश्रय दिया। गुणीजनों का गौरव किया। बाबर आत्मचरित्र में लिखता है, 'हिंदुस्तान में रहना हो, तो गोहत्या नहीं करनी चाहिए। हिंदुओं की भावनाओं को दुःख नहीं पहुंचाना चाहिए।' टिपू

सुलतान को दुष्ट माना जाता है। परंतु टिपू ने बडा ग्रंथ-संग्रह किया था, जिसमें संस्कृत ग्रंथ भी थे। टिपू हिंदू देवताओं की मनौती करता था ।

दरअसल दोनों समाजों के विचारवान लोगों ने ऐसे रिवाज बनाये, जिससे दोनों नजदीक आयें, प्रेम से एक हों। चिंचवड (पुणे) के देवस्थान को निजाम सरकार से दान मिलता था। पेशवाओं के गुरु कामगांवकर दीक्षित को दिल्ली के मुसलमान मानते थे और निजाम सरकार से उन्हें भी इनाम मिलता था। इसी प्रकार मुसलमानों की मस्जिदों को, पीरों को मराठों ने संभाला। अमलनेर (महाराष्ट्र) में सखारामबुआ नाम के सत्पुरुष हो गये। उनकी रथयात्रा निकलती थी तब उसको पहला नारियल मुसलमानों की ओर से चढाया जाता था। मुसलमानों के ताबूतों को हिंदू लोग इसी प्रकार मानते हैं। कितनी उदार दृष्टि और समन्वय है यह ! दोनों समाजों के विचारवान लोग यह समझ गये थे कि दोनों को मिलजुल कर प्रेम से रहना है।

इतिहास में हमें यह बातें पढायी नहीं जातीं। एकांगी इतिहास पढाया जाता है। अंग्रेजों ने जो इतिहास लिखा, उतना ही हम पढते हैं। इसी इतिहास के अनुवाद हमने किये। उन्होंने जो कल्पनाएं फैलायीं, उन्हीं को हिंदू-मुसलमानों ने पकडकर रखा। और उन्होंने ऐसे ही इतिहास लिखे, जिससे हिंदू-मुसलमानों के मन परस्पर विरोधी बनें। ऐसे प्रसंग, जिनसे दोनों के मन जुड जायेंगे, उन्होंने दिये ही नहीं। स्कूलों में अंग्रेजों ने जो पढाया, उसी को सत्य मानकर हम तोते जैसे बोलने लगे ।

इससे पढे-लिखे लोगों की दृष्टि विकृत हो गयी। वे एक-दूसरे के दोष देखने लगे। हिंदुओं को अभी तक लगता है कि हिंदुस्तान हिंदुओं का है, मुसलमान बाहर के हैं। परंतु तिलकमहाराज कहते हैं कि हिंदू भी बाहर के ही हैं। मुसलमानों को हिंदुस्तान में आकर 1300 साल हुए, तो उनसे हजार-दो हजार साल पहले हिंदू यहां आये। सभी बाहर के हैं।

हिंदुस्तान हिंदुओं का है वैसे अब मुसलमानों का भी है। ईसाइयों का भी है। जिन्होंने हिंदुस्तान को अपना देश माना, हिंदुस्तान उनका है। रवींद्रनाथ ठाकुर कहते हैं – "अनेक धर्मों को यहां एकत्र लाकर भगवान एक प्रयोग करना चाहता है। भगवान यह दिखाना चाहता है कि सर्व धर्म इकट्ठा होकर कैसे प्रेम से रह सकते हैं, भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के सम्मिश्रण से एक मधुर और अंतरंग संस्कृति कैसे निर्माण हो सकती है। इसलिए वह इस भूमि पर सब लोगों को ला रहा है। नाना प्रकार के लोगों को लाकर इस महामानव-सागर में मिला रहा है।" इतिहास की इस दृष्टि का स्वीकार करें, इस सूत्र को पकडें, तो सभी अलग दीखने लगेगा । [मै. सितं. 2005]

यहां अनेक जमातें रहती हैं, अनेक मजहब, पंथ हैं, जिनसे सुंदर संगीत बन सकता है। केवल एक ही सुर हो, तो संगीत नहीं बनता। संगीत के लिए मुख्तलिफ सुर हों, यह निहायत जरूरी है। लेकिन वे सुर एक-दूसरे के खिलाफ न हों। अनेक मजहबों, अनेक जमातों का होना हिंदुस्तान का ऐब नहीं, बल्कि वैभव है, गुण है। दुनियाभर के लोग यहां आये और यहां के लोगों ने उन्हें जज्ब कर लिया। प्रेम से सबको हजम कर लिया। यहां ईसाई, मुसलमान जो भी आये, उन पर यहां की हवा का रंग चढा। उनमें हिंदुस्तान की सिफत आयी। परंतु अंग्रेजों ने यहां आकर 'फूट डालो और शासन करो' का रवैया अपनाया, इससे तमाम राजनैतिक झगडे पैदा हुए। जहां सियासी बातें आती हैं, वहां दिमाग के टुकडे हो जाते हैं।

जब तक अंग्रेजों ने यहां आकर फूट नहीं डाली तब तक हिंदू-मुसलमान यहां बहुत प्यार से रहते थे। एक-दूसरे को भाई-भाई मानते थे। एक-दूसरे के मोहर्रम- दिवाली जैसे त्यौहारों में हिस्सा लेते थे। उनके नाम भी मिलेजुले होते थे। फिर नानक-कबीर जैसे संतों ने, सूफी संतों ने धर्म का विचार सबके सामने रखा। 'ना मंदिर में, ना मस्जिद में, ना काबे में', वह तो घर-घर में है, ऐसा विचार उन्होंने लोगों को समझाया। संत नामदेव ने कह दिया

– 'हिंदू उसकी पूजा मंदिर में करते हैं और मुसलमान मस्जिद में; लेकिन नामदेव उसकी पूजा करता है, जो घर-घर में रहता है।' हिंदू और मुसलमानों की कारीगरी, दस्तकारी आदि सब मिलीजुली बन गयी। हिंदू मंदिरों की बनावट में मुस्लिम बनावट आ गयी। इस प्रकार इंद्रधनुष के समान हिंदुस्तान में अनेक रंग हैं और वे एक-दूसरे से इस तरह मिले हैं कि पता ही नहीं चलता कि एक कहां खतम होता है और दूसरा कहां से शुरू होता है, इस तरह हिंदुस्तान एक खूबसूरत नजारा बन गया है। [मो. पै. 46-48]

मजहब और रूहानियत

मुहम्मद पैगंबर ने कहा है, "मजहब तो दुनिया में अनेक चलेंगे, परंतु दीन एक ही रहेगा। इस्लाम दीन है। वह मेरे पहले भी था।" दीन यानी ईश्वरशरणता । 'दा' पर से दीन बना है, यानी स्थिर सिद्धांत । मजहब का अर्थ है चलना, अमल करना। मजहब तो लोगों ने अपने-अपने ख्यालों के अनुसार अलग-अलग बनाये हैं। लेकिन असली 'दीन' जिसको कहते हैं, वह एक ही है। जैसे लिबास अलग-अलग पहने जाते हैं, लेकिन उसका मकसद एक ही होता है – हवा से शरीर को बचाना, वैसे ही मजहबों की बात है। रस्म और रिवाज के फर्क के कारण ही भेद हुए हैं। उनका कोई महत्त्व नहीं। [11.4.48]

अल्लाह को न भूलना, अल्लाह पर प्यार करना, झूठ न बोलना, सच बोलना – यह रूहानियत है। रूहानियत सबके लिए एक ही है। मजहब गलत हो सकते हैं, अच्छे भी हो सकते हैं, अलग-अलग भी हो सकते हैं। लेकिन रूहानियत में फर्क नहीं होता, वह सबके लिए एक ही होती है।

कुछ लोग रात को फांका करते हैं, कुछ लोग दिन में करते हैं। जैन लोग शाम को सूरज डूबने के पहले खा लेंगे। उनका कहना है कि रात को चूल्हा जलाने से जंतु, कीडे आदि जीव मरते हैं। मुसलमान रोजा रखते हैं, वे रात को खाते हैं, दिन में नहीं। इस सबका

नाम है मजहब । लेकिन अपने पर जब्त रखने के लिए फांका करना रूहानियत है। जियारत (यात्रा) के लिए मक्का जाना, अजमेर जाना या काशी, अमरनाथ जाना, यह है मजहब; लेकिन कभी-कभी घर छोडकर खिदमत के लिए बाहर निकलना है रूहानियत । मैं काशी गया, वहां मुझे खुशी हुई। अजमेर गया था, वहां भी खुशी हुई। जहां-जहां जियारत की जगहें हैं, वहां-वहां मैं जाता हूं और वहां मुझे खुशी होती है, बहुत ताकत मिलती है। जहां-जहां ऐसी जगह है, सब जगहों पर जाना चाहिए। बुजुर्गों ने जो राह बतायी, उस पर चलें, उनकी सेवा करें, उनकी बातें सुनें – यह सब रूहानियत है। मजहब बाहरी बातों के लिए आदेश देता है; रूहानियत अंदर की ताकत बढाती है। [वि.सा.खं. 8.356, 57]

आज क्या होता है ? खाने के लिए होटलों में तो हम इकट्ठा हो सकते हैं, और कामों में भी इकट्ठा हो जाते हैं; लेकिन अल्लाह की इबादत के नाम पर अलग हो जाते हैं। एक अल्लाह ही ऐसा कम्बख्त निकला, जिसके नाम से हम अलग-अलग हो जाते हैं। इसके मानी यह है कि हम अल्लाह को पहचानते ही नहीं। अल्लाह के नाम पर तो एक होना चाहिए। अन्य कामों में हम बंट जाते हैं, यह बात तो समझ में आती है। लेकिन भगवान का नाम लेने में इकट्ठा हों, और उस वक्त कुरानशरीफ, गीता, ग्रंथसाहब, धम्मपद, बाइबिल वगैरह किताबों का मुताला (अध्ययन) मिलकर करें । एक मिलाजुला समाज बनायें । कुरानशरीफ में कहा है, "उम्मतुं वाहिदत्" – तुम सब एक उम्मत हो । जितने भी पैगंबर, नबी, वली, ऋषि, मुनि, साधु, महापुरुष हो गये, उन सबकी एक ही जमात है, एक ही कौम है। यह इजहार कुरानशरीफ में दिया है। गीता में कहा है – 'मम वर्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः' (कुरानशरीफ 4.11) – सब इनसान सब बाजुओं से मेरी तरफ आ रहे हैं। यानी बिलकुल कुरानशरीफ ने जो बात कही, **कुल्लुन् इलैना राजीऊन**, वही बात गीता कहती है। सब अच्छे-अच्छे धर्मग्रंथ एक ही बात कहते हैं। हम सब प्यार से एकसाथ बैठकर उन धर्मग्रंथों का मुताला करें। हमें अंदर से यकीन होना चाहिए कि हम अल्लाह के हुक्मबरदार

हैं, उनके पैरों की खिदमत करने की हमने कोशिश की है, इसलिए हमें कोई खौफ नहीं है, कोई डर नहीं है। जैसा कि कुरानशरीफ में कहा है, **ला खौफु अलैहिम वला हुम् यह जनून** – बिलकुल बेखौफ, बेडर होकर हंसते-हंसते परमात्मा के पास पहुंच जायेंगे। [मो. पै. 391, 92]

मजहब का मतलब है, इनसान को रूहानियत की तरफ ले जाना। दोनों एक ही चीज की तरफ जाते हैं। लेकिन कुछ लोग रास्ता नहीं जानते हैं, इसलिए मजहब उनको आहिस्ता-आहिस्ता ले जाता है। रूहानियत एकदम रोशनी डालती है। सही चीज क्या है, क्या नहीं, रूहानियत बताती है। मजहब इनसान को अंधा समझकर हाथ पकडकर धीरे-धीरे ले जाता है। 'इधर चलो', 'उधर चलो' ऐसे रास्ता बताता है। यह मुल्ला है, यह पंडित है, यह गुरु है, इनके पीछे चलो – यह सब मजहब सिखाता है। रूहानियत एकदम रोशनी देती है। वह कहती है, देखो, तुम्हारे और अल्लाह के बीच कोई नहीं है। मजहब कहता है, अल्लाह के पास पहुंचना है तो बीच में एजंट चाहिए। फिर चाहे वह पुरानी किताब हो, या पुरानी मूर्ति हो। मंदिर में जाना हो, या मस्जिद में जाना हो। गुरु की बात सुनो या किताब की सुनो। मजहब में किताब, मंदिर, मस्जिद, सब आता है तो अल्लाह और इनसान के बीच परदा खडा हो जाता है।

परमात्मा का फजल (कृपा) है कि हर देश में ऐसे लोग आये हैं कि उन्होंने जो किताबें लिखी हैं, उन्हें लोग पढते है। कोई कुरान पढता है, तो कोई बाइबिल, कोई वेद, कोई रामायण, गीता या ग्रंथसाहब पढता है। सब लोग सब किताबें नहीं पढते। लेकिन मैं इनमें से हर किताब पढता हूं। सब किताबों का मुताला मैं कई बार कर चुका हूं। इन सभी किताबों में मुझे एक ही चीज मिलती है – रूहानियत! फिर भी इन किताबवालों ने इन किताबों को झगडा करने का एक जरिया बना लिया है। किताबों के नाम से ही झगडे होते हैं। क्योंकि लोग सब किताबें पढते नहीं, इसलिए किताबों में क्या है, जानते नहीं। मैंने कुरानशरीफ

पढा है, और उसमें अनमोल रत्न पाये हैं। गीता में गोता लगाया है और वहां से जवाहर पाये हैं। बाइबिल पढी है और उसमें बहुत अच्छी नसीहत पायी है। पंजाब में मैंने गुरु नानक की किताबें पढीं। झगडा करनेवाले झगडा करें; लेकिन मैंने देखा कि गुरु नानक, मुहम्मद पैगंबर, ईसामसीह, मूसा, गौतम बुद्ध, राम, कृष्ण – ये कोई भी लडनेवाले नहीं थे। फिर भी उनके भगत कहलानेवाले आपस में लडते रहते हैं, एक-दूसरे को उभाडते रहते हैं। एक शायर का मशहूर जुम्ला (वाक्य) है, 'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना'। मैं इसे बहुत ज्यादा अहमियत नहीं देना चाहता। बल्कि मैं कहना चाहता हूं कि 'मजहब हमें सिखाता आपस में प्यार करना।' सिर्फ वैर मत करना, इतना ही काफी नहीं है; प्यार भी करना चाहिए। [मो. पै. 125-129]

धर्मग्रंथों में जो कुछ भी लिखा हुआ होता है उसमें कुछ अंश तात्कालिक होता है और कुछ अंश सार्वकालीन होता है। इन दो अंशों में विवेक करना पडता है। यह विवेक ही सबसे श्रेष्ठ वस्तु है। कुरान में कहा है – जिस पर ईश्वर की कृपा होती है उसको विवेक (discrimination)-लाभ होता है। यह परमात्मा का सबसे श्रेष्ठ लाभ मानव को होता है, ऐसा कुरान में कहा है। [17.1.63]

'सुरे जुमा' में गधे की मिसाल दी है, जिस पर किताबें लादी हुई हैं। जो किताबों का बोझ उठाता है, लेकिन उस पर अमल नहीं करता, उसको गधे की मिसाल लागू होती है (कुसा 179) [कुरानशरीफ 62.5] । इन्सान को किताब की मदद जरूर होती है, लेकिन उस मदद की भी हद होती है। उस हद से ज्यादा उसमें फंस गये, तो खत्म हो जाता है। फिर तो यही कहना पडता है, **किताबें डाल पानी में, पकड दस्त तू फरिश्तों का** । [वि. सा. खं. 8.391]

श्रीनगर में तो मैंने यहां तक कहा था कि मैं कोई भी किताब सिर पर उठाने के लिए राजी नहीं हूं – न वेद, न कुरान, न बाइबिल । हमारे मित्र यह सुनकर डर गये कि इसका क्या असर होगा ? लेकिन लोगों पर इसका खराब नहीं, अच्छा ही असर हुआ। मैं कहता हूं कि 'वेद ग्रंथ सिर पर चढाने के लिए हम बंधे हुए नहीं है', इसका क्या अर्थ ? वेदों ने, धर्म के शास्त्रों ने कुछ मिनिमम नीति सिखलायी है। उससे नीचे गिरने का आपको हक नहीं; उससे ऊपर चढने का हक है और वह सुरक्षित है। ऊपर चढने के लिए उन किताबों को लपेटकर फेंकना पडे तो फेंक सकते हैं। इतना ही नहीं, फेंकने का हक है। वे किताबें ही कहती हैं, **पलालमिव धान्यार्थी त्यजेद् ग्रंथमशेषतः (ब्रह्मबिंदु उपनिषद 7)। वेदों का अर्थ ही यह है। वेदांत यानी वेदों का अंत, वेदांत यानी कुराणांत, वेदांत यानी बाइबिलांत, वेदांत यानी पुराणांत। सब ग्रंथों का खात्मा ! ग्रंथों से ऊपर उठे बिना सत्य समझ में नहीं आयेगा। [**वि.चिं. 36.585]

समझना चाहिए कि किताब और धर्म-शास्त्र इनसान के लिए होते हैं या इन्सान उनके लिए ? किताब में से ऐसी ही चीज लेनी चाहिए जो अपने लिए मुफीद हो, उपयोगी हो। मान लीजिए, दवा की किताब है। उसमें हर तरह की बीमारी की, अनेक मर्जों की दवा लिखी रहती है। पर क्या वह सभी दवाएं मुझे लेनी ही चाहिए ? नहीं। किताब में पचासों चीजें होती हैं, जिनमें से कुछ ऐसी होती हैं, जो सबके लिए होती हैं। और जो सबके लिए होती हैं, उन्हीं चीजों का नाम होता है रूहानियत । एक-दूसरे को हक (सत्य) पर चलने के लिए हिदायत दो, मदद करो, एक-दूसरे को रहम रखने के लिए सिखाओ । हक, सब्र, मुहब्बत, ये बातें सबको लागू होती हैं। पारसी, यहूदी, ईसाई, हिंदू, मुसलमान – सभी धर्मवालों पर लागू होती हैं। इसी का नाम है रूहानियत । [वि.सा. खं. 8.356]

वयं श्रेष्ठाः

मुसलमान लोग यह जो कहते हैं कि मुहम्मद आखिरी पैगंबर हो गये, इसके आगे अब कोई पैगंबर नहीं होगा; आगे अच्छे भले मनुष्य पैदा होंगे, पर पैगंबर नहीं, उसका मतलब यह होता है कि परमेश्वर आगे क्या करेगा, यह सब उन्हें मालूम है ! एक बार एक मुसलमान मित्र से इस विषय पर बातें हो रही थीं तब मैंने कहा कि "आगे पैगंबर नहीं होगा, यह मानना कुफ्र है। ईश्वर या उसकी कुदरत की शक्ति की मर्यादा मानना और कहना कि ईश्वर 'यही करेगा, वह नहीं करेगा' नास्तिकता है। मनुष्य, ईश्वर को इस तरह का फतवा नहीं दे सकता है कि इसके आगे तुम बडे-बडे आदमी पैदा करो, पर पैगंबर मत पैदा करो।" इस पर उस भाई ने पूछा कि फिर कुरान में यह जो कहा है कि आखिरी नबी मुहम्मद पैगंबर है, इसका क्या अर्थ है ? मैंने कहा कि मैंने कुरान के इस वाक्य का जो अर्थ किया है, वह इस प्रकार है – मुहम्मदसाहब आखिरी नबी हुए यानी आज तक जो नबी हुए उनमें वे आखिरी नबी हैं। उस वाक्य का अर्थ यह नहीं कि इसके आगे अब नबी होंगे ही नहीं। मुहम्मदसाहब ने कहा है कि मैं कुछ नया कहने के लिए नहीं आया हूं; बल्कि पुराने नबियों ने, महापुरुषों ने जो कहा है, उसी की सत्यता की गवाही देने और उसकी पुष्टि करने के लिए आया हूं। उनके कथन का मैं यही मतलब समझा हूं।

यह बात मुसलमान मान्य नहीं करेंगे। क्यों नहीं करेंगे, यह जानने में बड़ा मजा है। वेदों का भी ऐसा ही है। वेदों से पहले का कोई ग्रंथ मिले और वेद उसके बाद का है यह सिद्ध हो जाये, तो हिंदुओं के लिए बड़ी मुश्किल की बात हो जायेगी। क्योंकि हिंदुओं का सारा दारोमदार इसी बात पर है कि वेद दुनिया का पहला ग्रंथ है। अगर वेद से पहले का ग्रंथ मिला तो फिर उनका धर्म सनातन नहीं रहेगा। उस किताब का धर्म ही सनातन हो जायेगा। इसलिए हिंदुओं के अभिमान के लिए यह जरूरी है कि वेद ही सनातन ग्रंथ है। इस्लाम धर्म बाद में आया है, इसलिए मुसलमानों के अभिमान के लिए यह जरूरी है कि मुहम्मद पैगंबर के बाद कोई पैगंबर न निकले। इस तरह हिंदूधर्म में जहां प्राचीनता का

महत्त्व है, वहां इस्लाम में अर्वाचीनता का है। ईसाई लोग भी इसी तरह कहते हैं कि ईसा मसीह की शरण गये बिना मुक्ति नहीं मिल सकती। मैं पूछता हूं, दो-ढाई हजार साल के पहले जो लोग हो गये, क्या वे मोक्ष के अधिकारी नहीं थे ? कितनी अजीब बात है ! साधारण मनुष्य के घर के भी दो-तीन दरवाजे होते हैं, लेकिन इन्होंने ईश्वर के घर में एक ही दरवाजा रखा है। क्या उस दरवाजे से गये बिना अंदर प्रवेश नहीं होगा ? इस तरह **वयं श्रेष्ठाः** – हम श्रेष्ठ हैं !

यह सारा सहज विनोद में कहा है। परंतु इस विनोद के द्वारा मैं कहना चाहता हूं कि हम केवल अभिमानी रहना चाहते हैं, वक्त का यथार्थ दर्शन करना नहीं चाहते हैं। हिंदुओं को समझना चाहिए कि हिंदूधर्म के सत्य का आधार प्राचीनता या प्रथमता नहीं है। इसी तरह आखिरीपन इस्लाम धर्म के सत्य का आधार नहीं है। सारांश, यह मानना बिलकुल गलत है कि परमेश्वर ने आज तक जो महापुरुष पैदा किये, उनसे अधिक बड़े महापुरुष वह पैदा नहीं करेगा। विकासक्रम में तो एक से बढ़कर एक महापुरुष पैदा होते जायेंगे । [वि.प्र. 30.10.58+ भू. गं. 7. 39]

जब ईसाई या मुसलमान लोगों के साथ बात होती है, तब मैं उनसे कहता हूं कि आप लोग जो मान बैठे हो कि ईसा की अनुभूति पूर्ण है, मुहम्मद पैगंबर की अनुभूति पूर्ण है, वह मैं नहीं मान सकता। ईश्वर की पूर्ण अनुभूति ईश्वर को ही है। दूसरों को उसकी अंशानुभूति ही हो सकती है। इसलिए आप लोगों को दूसरे धर्मों का अनुभव शेअर करना चाहिए। उसका लाभ लेना चाहिए। उससे अपूर्ण पूर्ण होगा। सोचना चाहिए कि ईश्वरी ज्ञान का एक अंश इस्लाम में आया है। बहुत अच्छा अंश है। लेकिन एक दूसरा भी अंश है, जो हिंदूधर्म में पडा है। एक तीसरा भी है, जो ईसाई धर्म में पडा है। और अन्य धर्मों में भी भिन्न-भिन्न अनुभव हैं। उनको ग्रहण करना होगा और उसके लिए अपने-अपने अभिमान छोड़ने होंगे । [मै. 67.12]

इस्लाम के एक अध्येता मौ. मुहम्मदअली का 'कुरान के अध्ययन' पर एक भाषण हुआ था, उसमें उन्होंने जो विचार व्यक्त किये थे, वे आजकल के असहिष्णु युग में बहुत उपयोगी हैं। उन्होंने कहा था – "कुरान के उपदेश के संबंध में हिंदुओं या ईसाइयों के दिलों में होनेवाली विपरीत भावनाओं की जिम्मेवारी मुसलमानों की है। परधर्मों के विषय में जो वृत्ति कुरान की मानी जाती है, उसके लिए वस्तुतः कुरान जिम्मेवार नहीं, बल्कि वे चंद मुसलमान हैं, जो कुरान के आदेश के खिलाफ आचरण कर रहे हैं। कुरान का उचित रीति से आचरण करने से मालूम होगा कि कुरान की रूह से जहां-जहां ईश्वरशरणता है वहां-वहां इस्लाम है। मैं खुद किसी समय नास्तिक और ऊपरी – अर्थात् हिंदूविरोधी या ईसाईविरोधी के अर्थ में – मुसलमान था। पर कुरान पढने पर इस्लाम का असली अर्थ मेरी समझ में आ गया और आज मैं एक सच्चे हिंदू या सच्चे ईसाई को असली मुसलमान समझ सकता हूं।"

यह दृष्टि शुद्ध है। सच्चे हिंदू में मुसलमान है और सच्चे मुसलमान में हिंदू है। हममें पहचाननेभर की शक्ति होनी चाहिए। जैसे कोई हिंदू विठ्ठल का उपासक है, लेकिन वह राम की उपासना का विरोध नहीं करेगा। वह विठ्ठल में भी राम देख सकता है और राम की मूर्ति में विठ्ठल के दर्शन कर सकता है। वैसे ही दो धर्मों के बीच है। धर्माचरण एक उपासना है। उपासना में विरोध की गुंजाइश नहीं। जैसे राम और विठ्ठल एक ही परमेश्वर की मूर्तियां हैं और इसलिए उनमें विशिष्टता होते हुए भी उनका विरोध नहीं है, वैसे ही हिंदूधर्म, मुस्लिमधर्म इत्यादि एक ही सत्यधर्म की मूर्तियां हैं, इसलिए उनमें विशिष्टता होते हुए भी विरोध नहीं है। जो ऐसा देखता है, वही वास्तव में देखता है। [वि. विचार 2.207,8]

आज एक कहता है कि सूर्य पूरब में उगता है, प्रार्थना पूर्व की ओर मुंह करके करना है। दूसरा कहता है कि प्रार्थना में पश्चिम की ओर मुंह करके बैठना है; क्योंकि काबा पश्चिम में है। परमात्मा संस्कृत ही जानता है इसलिए प्रार्थना संस्कृत में ही करनी है। भगवान को

अरबी भाषा ही आती है, इसलिए प्रार्थना अरबी में ही करनी चाहिए। अब इसमें क्या सही, क्या गलत कौन बताये ! इस तरह के छोटे-छोटे झगडे चलते हैं। कुरान में कहा है – "कुछ फिरके अपने-अपने रिवाजों पर फख्र करते हैं। वे सब अपने-अपने धर्म को आगे बढाना चाहते हैं।" लेकिन मैं कहता हूं कि धर्म को बढाने का यह तरीका उचित नहीं है। ऐसे जो तरह-तरह के मजहब हैं, उनको मिटना ही होगा। जो अपने धर्म का निष्ठा से आचरण करेगा, उसे स्वभावतः ही दूसरे धर्मों के लिए आदर रहेगा। जिसे परधर्म के लिए अनादर हो, उसके बारे में समझ लीजिए कि वह स्वधर्म का आचरण नहीं कर रहा। [वि.प्र. 17.4.60 + भू.य. 10.6.60]

दरअसल धर्म का रहस्य जानने के लिए न कुरान पढने की जरूरत है, न पुराण पढने की । सारे धर्म भगवान के चरण हैं, इतनी ही बात जान लेना बस है। [27.3.64]

समन्वय की कला

हरएक संप्रदाय में बुराइयां होती हैं। लेकिन हमारे चित्त में यह सफाई होनी चाहिए कि वे धर्म की नहीं होतीं। हिंदुओं की ऐसी स्थिति है कि उनका तत्त्वज्ञान तो अद्वैत का है, परंतु आचरण अद्वैत का नहीं। गीता में कहा है कि सबको समदृष्टि से देखना चाहिए; लेकिन हिंदूधर्म में अनेक जातियां हैं और छूत-अछूत-भेद है। तो क्या इसका जवाब गीता देगी ? ईसा मसीह ने अपने शत्रु पर प्रेम करने का उपदेश दिया है; परंतु ईसाइयों की अनेकों लडाइयां हुईं और होती रहती हैं। यही हाल इस्लाम का है। इस्लाम यानी शांति, इस्लाम यानी शरणता । परंतु मुसलमानों का इतिहास कहता है कि वे जिस-जिस स्थान पर गये वहां राज्यतृष्णा लेकर गये, अत्याचार लेकर गये। इस तरह धर्म के आचरण करनेवालों में अच्छे भी निकले हैं और बुरे भी निकले हैं। इसलिए किसी धर्म के बारे में सोचना है तो

उसका मूल ग्रंथ क्या कहता है और उसके अच्छे लोग क्या कहते हैं, यही देखना चाहिए। [5.5.57]

कुरानशरीफ में एक आयत है, उसमें आता है कि किताब के दो हिस्से होते हैं। एक होता है 'उम्मुल किताब' यानी मूल किताब, किताब का मुख्य हिस्सा, धर्म के मूलभूत उसूल – आध्यात्मिकता। और दूसरा होता है, 'मुतशाबिहात', वह बदलनेवाला हिस्सा – पांथिकता। धर्म में कुछ चीजें बदलती रहेंगी जमाने के मुताबिक, मुल्क के मुताबिक । लेकिन कुछ चीजें कॉमन रहेंगी और कायम रहेंगी। जैसे भगवान का स्वरूप, भक्ति, सचाई, रहम। इसी को उम्मुल किताब कहेंगे। मूल पुस्तक सब पुस्तकों की माता है, यानी सबका साररूप अंश है। उसे कुरान ने दीन और हक कहा है, उपनिषदों ने सत्य और धर्म कहा है। 'मुतशाबिहात' बदलता रहेगा और उसके बारे में मुख्तलिफ रायें हो सकती हैं। इसलिए 'उम्मुल किताब' पर जोर देना चाहिए। [वि.प्र. 17.1.59]

जो लोग सच्चे धर्म पर श्रद्धा रखते हैं, उन्होंने माना है कि सब धर्मों का सार सत्य, प्रेम, करुणा में है। यही हमें वेद ने सिखाया। यही हमें राम, कृष्ण ने सिखाया, यही हमें बुद्ध, महावीर ने सिखाया। ईसा मसीह और मुहम्मद पैगंबर ने यही सिखाया। लाओत्से और साक्रेटीस ने यही सिखाया। इस जमाने में टालस्टाय, गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने यही सिखाया। और इसी का आधार लेकर हम भारत में काम कर रहे हैं। मैं सभी धर्मों का प्रचारक हूं। क्या इस्लाम, क्या बौद्ध, क्या ईसाई, क्या वैदिक, सभी धर्मों का सार है हकपरस्ती, मुहब्बत, रहम। धर्म के साथ धर्म का विरोध नहीं। धर्म का विरोध बदनीयत से है। [वि.प्र. 14.8.59]

उपासना-भेद और दार्शनिक भेद, जो वैचारिक चिंतन के भेद हैं, वे सब इकट्ठा कर एक परिपूर्ण दर्शन बनाया जा सकता है। इसलिए धर्म के मानी होने चाहिए **मानवता +**

और कुछ भी । मानवता कम पडेगी तो एक भी धर्म टिकेगा नहीं। हिंदुस्तान के सब धर्मों को, जो मानवता को मानते हैं उन सब लोगों को यह स्टैंड लेना चाहिए कि हम सब एक हैं और यह मानकर कि सब एक हैं, विचार-विनिमय करना चाहिए। तब, "तुटे वाद संवाद तो हितकारी" – जहां सब वाद खतम होते हैं ऐसा हितकर संवाद हम चलायेंगे। आज कम से कम इतना तो करें कि मानवता को माननेवाले हम सब एक हैं। हिंदू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, बौद्ध, यहूदी, ये सारे हिंदुस्तान के मुख्तलिफ जुज (अवयव) हैं। हम एक ही जिस्म के जुज हैं, जिन्हें काटकर अलग रखा जायें तो जिस्म की क्या हालत होगी ? [वि.चिं. 55-266-67]

आज दुनिया में नास्तिकता बहुत बढ गयी है। उसका मुकाबला तभी होगा, जब सारे आस्तिक आपस-आपस में मिल जायेंगे। जब प्रार्थना का सवाल आता है तब सारे एक जगह बैठ नहीं पाते। यानी आज ईश्वर ही उन्हें तोडनेवाला बन गया, जो कभी सभी को जोडनेवाला था। आज एक-एक धर्म में भी अनेक पंथ बन गये हैं। जैसे मुसलमानों में शिया और सुन्नी, ईसाई धर्म में प्रोटेस्टंट, रोमन कॅथोलिक आदि । वे एक-दूसरे की प्रार्थना में शामिल नहीं होते। लेकिन सोचने की बात है कि जब ये आस्तिक कहलानेवाले ही आपस में झगडेंगे, तो नास्तिकों का मुकाबला कैसे होगा ? इसलिए बहुत जरूरी है कि विभिन्न धर्मों में जो अलग-अलग अंश हैं उन पर जोर न दें और उन धर्मों के जो समान अंश हैं, जो सभी धर्म मानते हैं, उन्हीं पर जोर दें। [वि.प्र. 1.5.59 + 12.6.57]

भारत की यह एक अपनी विशेषता है कि यहां सभी विचारों का समन्वय किया जाता है। जिन विचारों में एकांगीपन होता है, उन्हें छोड दिया जाता है और जिनमें गुण होता है, वह ग्रहण कर लिया जाता है। इससे हर विचार के गुण का लाभ मिल जाता है और हम क्रमशः परिपूर्ण विचार बनाते हुए आगे बढते हैं। हम किसी भी विचार को अपूर्ण नहीं मानते। सभी को पूर्ण मानते हैं। अपूर्ण के योग से पूर्ण बनाना हमें इष्ट नहीं है। पूर्णों के संयोग से

परिपूर्ण बनाना ही हमारी दृष्टि है। सभी धर्मों ने सभी के लिए अच्छी ही बात कही है। ईसाई धर्म में सेवाभावना है। इस्लाम में बंधुभावना है। हिंदूधर्म का आत्मज्ञान गहरा है। बौद्धों का नीतिशास्त्र मजबूत है। परंतु इनको जोडने की कला नहीं सधती है तो झगडे पैदा होते हैं। [वि.चिं. 55.266-67]

इसलिए सोचने की मुख्य बात यह कि मजहबों की उपाधि से मुक्त कैसे हो ? एकदम सीधा-सादा उपाय है। एक उपाय तो गांधीजी ने बताया। गांधीजी ने यह तय किया कि प्रार्थना में सब धर्मों से थोडा-थोडा लेकर समन्वय किया जाये। उन्होंने वैसा किया भी। उसी संदर्भ में यह प्रश्न भी उठा कि पहले नंबर में किसे लें, दूसरे में किसे, कम सामग्री किसकी जाये, और ज्यादा किसकी जाये आदि। फिर भी कुछ न कुछ करके उन्होंने वह खिचडी बना ली। मैंने दूसरा उपाय किया, प्रार्थना में मौन शुरू किया। मौन में सब एक हो जायेंगे। मुझे लगता है कि समन्वय के लिए मौन ज्यादा अनुकूल है, और मेरी पदयात्रा में मैंने सर्वत्र वही चलाया। पाकिस्तान की पदयात्रा में भी सब जगह मौन प्रार्थना होती थी। भले ही ईश्वर के नाम से हम एक न हो सकते हों, जहां चिंतन और ध्यान का सवाल आता है वहा तो सभी धर्म एक हो सकते हैं। जब तक यह नहीं करते तब तक नास्तिकता का मुकाबला नहीं किया जा सकता।

इसके अलावा मेरे मन में यह भी आता है कि एक-एक धर्मग्रंथ का सार निकाल कर, परस्परों के ग्रंथ-सार पढे जायें, यह समन्वय के लिए कैसा रहेगा ? या ये सारी बातें एक ओर रखकर केवल “मौनमाश्रयेत्” – मौन का आश्रय लेना ठीक रहेगा ? या सभी धर्मग्रंथों का समन्वय करें ? किसकी खास जरूरत है ? मुझे लगता है कि मौन तो रहे ही, लेकिन साथ में समन्वय भी चाहिए; क्योंकि करोडों लोगों की बुद्धि पर जिसका सत्प्रभाव पडता है (बुरा प्रभाव भी होता है, लेकिन अच्छा भी होता है), उसे छोड देने के लिए कहना

ठीक नहीं। इसलिए उन ग्रंथों का सार लेकर उनका समन्वय करने की आवश्यकता है ।* [वि. चिं. 18.303-305 + वि.चिं. 16.180]

'यह सारा छोड दें' कहकर अलग होंगे, तो लगता है, मुक्त हो जायेंगे। लेकिन वह व्यक्तिगत मुक्ति होगी। परंतु यदि हम सामाजिक मुक्ति की आवश्यकता मानते हैं तो धर्मों का समन्वय होना जरूरी है। सब धर्मों की अपनी-अपनी खूबियां प्रकट होती हैं, उन सब खूबियों को लेकर हमें परम मानव धर्म बनाना चाहिए। सब धर्मों की जीवन-निष्ठा लेकर समन्वय करना चाहिए। इसको शास्त्र में 'समाहार' कहते हैं। वह समन्वय मैंने अपनेभर के लिए कर रखा है। मैंने पांच बातें बतायी हैं – वे कुरान-सार में शीर्षकों के रूप में आयी हैं। अर्थात् वे शीर्षक मेरे दिये हुए हैं। वे हैं –

1. निरपेक्ष मूल्यों पर निष्ठा
2. जीवन की एकता और पवित्रता
3. मृत्यु के बाद भी जीवन की अखंडता
4. कर्म-विपाक, जिसे टाला नहीं जा सकता
5. विश्व में एक रचना है – व्यवस्था है

अंग्रेजी में उन्हें निम्न प्रकार से कह सकते हैं

1. फेथ इन आब्सोल्यूट मॉरल व्ह्याल्यूज
2. युनिटी एंड सैंक्टिटी ऑफ लाईफ
3. कंटिन्यूइटी ऑफ लाइफ आफ्टर डेथ
4. ॲक्शन्स हैव देअर रिजल्ट्स – लॉ ऑफ कर्म
5. देअर इज ॲन ऑर्डर इन द युनिवर्स

इन पांच बातों के आधार पर सबका समन्वय किया जा सकता है। [मै. सितं. 2005]

आज सभी धर्म तराजू में रखे गये है। धर्मों को तौला जा रहा है। जो धर्म सबको प्रेम देगा, जिस धर्म में समानता, सहिष्णुता, सेवा ज्यादा होगी, वह धर्म टिकेगा। धर्म की कीमत संगठनों से नहीं आंकी जाती। धर्म की कीमत तो तब बढती है, जब धर्म में तेजस्वी महापुरुष पैदा होते हैं। धर्म संख्या पर निर्भर नहीं होता। जिस धर्म में उदार, उदात्त विचार होंगे, उसका प्रभाव पडेगा। आखिर दुनिया में विचार ही अमर होंगे। विचारों को पानी पिलाकर विकसित करना होता है। उसी के लिए हमारा जीवन है। महान पुरुषों से प्राप्त हुए उदात्त विचारों को अपने जीवन-घट का पानी पिलाकर विकसित करना है। [वि.चिं. 18.298]

विज्ञान के जमाने में राजनीति और धर्मपंथों का जमाना बीत गया है – आऊट डेटेड – हो गया है। दोनों चीजें टिकनेवाली नहीं हैं। उनकी जगह अब विज्ञान और रूहानियत ने ली है। इसके आगे ये ही दो चीजें चलेंगी। कश्मीर में मैंने विशेषरूप से कहना शुरू कर दिया कि अब पंथों को जाना है। इसके लिए मैं 'रिलिजन' और 'मजहब' शब्द का इस्तेमाल करता हूं। 'धर्म' या 'दीन' नहीं। 'दीन' तो ईश्वरनिष्ठा है और 'धर्म' है धारणार्थक, इसलिए उनका निषेध नहीं करता। लेकिन मजहबों को जाना है। [मो.पै. 297, 98]

कश्मीर में मैंने कुरानशरीफ की बात कहते हुए कहा था कि यह खूब समझने की बात है कि हिंदुस्तान के लोग कितने आगे बढे हुए हैं। श्रीनगर में शंकराचार्य के नाम से एक पहाड है। शंकराचार्य केरल का याने बिलकुल जुनूबी (दक्षिण के) सिरे का शख्स था। 1200 साल पहले वे यात्रा करने के लिए श्रीनगर आये। वे पैदा हुए केरल में और उनकी वफात हुई हिमालय में। इस तरह सारे हिंदुस्तान को हमने एक माना था। इसी लिए जगह-जगह जियारत की जगहें बनीं। लेकिन अब सिर्फ किसी एक देश के या द्वीप के लोग एक हो जायें इतनेभर से दुनिया का काम नहीं चलेगा। सभी देशों के हम सारे एक हैं, हम सब

इनसान हैं ऐसा करना होगा। कुरानशरीफ ने एक बात सिखायी है – **हुवल्लाहु अहदुन्** – यानी अल्लाह एक है। अब इसी तरह नयी तालीम देनी होगी – **इनसान अहदुन्** । पुरानी तौहिद (अद्वैतवाद) है कि अल्लाह एक है, नयी तौहिद है कि इनसान एक है। इस्लाम का पैगाम कुल दुनिया को एक बनानेवाला है। जब इनसान समझता है कि अल्लाह एक है तो वह यह भी समझें कि सारे इनसान एक हैं। यह बात हिंदू, बौद्ध, ईसाई वगैरह सभी मजहबों की किताबों में मिलेगी।

एक भाई ने सवाल पूछा कि आखिर आपका मजहब क्या है? मैंने कहा, मेरा धर्म है सब पर प्यार करना, दुःखी और गरीबों के लिए रहम रखना, सचाई पर चलना । इसमें जहां ताकत की जरूरत हो वहां ताकत देना और जरूरत पडने पर ताकत लेना । मुहब्बत, रहम और सचाई, यह मैं अपनी जिंदगी में लाना चाहता हूं। इसमें दूसरों को मदद पहुंचाना चाहता हूं। यही मेरा धर्म है। [मो.पै. 277]

सचाई, मुहब्बत, रहम (सत्यं, प्रेम, करुणा) – यह तीन बातें मुख्तलिफ मजहबों के नबियों ने और संत-सत्पुरुषों ने बतायी हैं। यही इनसानियत है। इनसानियत ही धर्म है – रूहानियत है।

मजहब के पांच अकरान

मजहब में अक्सर पांच बातें हुआ करती हैं – (1) परमात्मा का दर्शन (2) इबादत का तरीका (3) कसस या कहानी (4) कानून (5) नीति ।

पहली बात, जो सभी मजहबों में होती है, वह है परमात्मा का दर्शन। हर मजहब में चंद लोग ऐसे होते हैं, जो दुनिया में रहते हुए भी दिल और दिमाग से दुनिया से अलग रहते हैं। वे अपना दिल और दिमाग अल्लाह की तरफ लगाते हैं और उन्हें परमात्मा के दर्शन के तजरबे होते हैं। परमात्मा कोई छोटी चीज नहीं है कि इधर- उधर देखकर कहा जा सके कि

यही उसका रूप है। अपना तय किया हुआ हो अल्लाह का रूप है, ऐसा कोई नहीं कह सकता। इसी लिए जिस किसी को अल्लाह का दर्शन हुआ, उसे परमेश्वर के एक हिस्से, वह भी बहुत छोटे हिस्से का दर्शन हुआ, ऐसा कहा जा सकता है। लेकिन उतने से इल्म (ज्ञान) से भी बिलकुल जिंदगी ही बदल जाती है। यानी एक ही क्षण में इनसान बदल जाता है। आज तक दुनिया में मुख्तलिफ (भिन्न-भिन्न) महापुरुषों को परमात्मा का ऐसा तजरबा हुआ है। और परमात्मा के दर्शन का तजरबा मुख्तलिफ हो सकता है। यानी हरएक को जो दर्शन होता है, वह भिन्न-भिन्न हो सकता है और वैसा होना लाजमी भी है। जिन्हें परमात्मा का तजरबा हुआ है, उनका फर्ज है कि वे अपना-अपना तजरबा दुनिया के सामने पेश करें। उसमें मजहब का कोई सवाल नहीं है। मैं परमात्मा का एक रूप देखता हूं, दूसरा दूसरा रूप देखेगा, तीसरा तीसरा रूप देखेगा। यह सारा मिलाना होगा। मिलाकर जो तसवीर सामने आयेगी, उससे परमेश्वर-दर्शन का एक हिस्सा सामने आयेगा। गुरु नानक, मीरा, लल्लेश्वरी, कबीर, ऐसे कई नबी और फकीर हो गये। उनमें से हरएक को तजरबा हासिल हुआ, वह एक-दूसरे से मुख्तलिफ जरूर हुआ, लेकिन एक-दूसरे के खिलाफ नहीं है। वे एक-दूसरे की ताईद (अनुमोदन) करते हैं। उनके तजरबों को इकट्ठा करेंगे, तो भी परमेश्वर-दर्शन का एक हिस्सा, एक अंश मिलेगा। फिर भी अल्लाह बाकी रहेगा; क्योंकि वह बाकी रहनेवाला ही है।

हिंदू, इस्लाम, ईसाई वगैरह धर्मों में यह जो परमेश्वर के दर्शन का हिस्सा आता है, वह सब धर्मों की शामिलात (साझा) इस्टेट है। फिर चाहे वह हिंदूधर्म का तजरबा हो, चाहे ईसाइयों का हो या मुसलमानों का हो। परमेश्वर-दर्शन की बातें 'कॉमन प्रापर्टी' है।

दूसरी बात है – परमेश्वर की इबादत कैसे की जाये, उसका तरीका है, तरीकत (आचरण) भी है। इबादत किस तरह करें ? तसवीर रखें या न रखें? नमाज कैसे पढ़ें? घुटने टेककर बैठें या किसी दूसरी तरह ? इबादत का तरीका भी मजहब का एक हिस्सा है।

अल्लाह एक ही है, मगर उसके नाम अनेक हो सकते हैं। इसलिए भारतीय संस्कृति मानती है कि इबादत के अलग-अलग तरीके – उपासना की भिन्न-भिन्न पद्धतियां अयोग्य नहीं हैं; उनका होना अच्छा ही है। हर कोई अपने पसंद के मुताबिक इबादत करें। इसी लिए भारत ने दुनिया के सभी मजहबों का स्वागत किया है और इसके आगे भी इस भूमि में सभी मजहब एकसाथ रहेंगे और अपनी तरक्की करेंगे।

इबादत के तरीकों में थोडा-थोडा फर्क जरूर रहेगा। मिसाल के तौर पर, सुबह का वक्त है, तो हिंदू पूरब की तरफ मुंह करके इबादत करेगा; और मुसलमान जिधर काबा है उधर, यानी मगरिब (पश्चिम) की तरफ मुंह करके इबादत करेगा। ऐसे अपने-अपने तरीके तो ठीक ही हैं। लेकिन इबादत का ऐसा भी तरीका ढूंढना चाहिए, जिसमें सब एक हो सकें। इबादत का जाती (व्यक्तिगत) तरीका अलग-अलग हो सकता है। अपनी-अपनी जमात का तरीका भी अलग-अलग हो सकता है। लेकिन कुल जमातें इकट्ठा होकर इबादत करती हैं, ऐसा भी तरीका ढूंढ निकालना चाहिए।

मजहब का तीसरा हिस्सा, जिसे कुरानशरीफ में 'कसस' कहा है, यानी 'कहानी' का है। जैसे इब्राहीम की कहानी, मूसा की कहानी, यूसुफ और जुलेखा की कहानी, नल-दमयंती की कहानी, हरिश्चंद्र की कहानी। इसी तरह सभी मजहबों के ग्रंथों में ऐसी ही कहानियां हैं। तो यह 'कसस' वाला हिस्सा भी हरएक मजहब में होता है।

कससवाली बात भी सबकी इस्टेट हो सकती है। इब्राहीम की कहानी, हरिश्चंद्र की कहानी – ये कहानियां सब धर्मवाले पढें । उनसे नसीहत लेनी है। राम की कहानी से हिंदू नसीहत ले सकता है, वैसे मुसलमान भी ले सकता है और दूसरा भी ले सकता है। वैसे ही हजरत पैगंबर की कहानी से सब धर्मवाले नसीहत ले सकते हैं। और वैसे ही अन्य धर्मों

की कहानियों से। जो नसीहत उनसे मिलती है, वह हम सबके लिए हैं। हम सब धर्मवाले उसके हकदार हैं। इसलिए वह भी शामिलात इस्टेट है।

नूह पैगंबर को 20,000 साल की जिंदगी मिली थी। वे एक छोटी-सी झोंपडी में रहते थे। लोग उनसे पूछते कि आप झोंपडी में क्यों रहते हैं, अच्छा पक्का मकान क्यों नहीं बनाते ? इस पर वे कहते, मुझे इस दुनिया में आकर सिर्फ 20,000 साल ही तो जीना है। उतनेभर के लिए पक्का मकान क्यों बनायें ? यानी 20,000 साल की जिंदगी में भोग भोगने की इच्छा नहीं हुई। उन्होंने सोचा, यह सब निस्सार है, जिंदगी फनाह होनेवाली है, फिर एक क्षण भी वह नहीं टिकेगी। ये समझकर पैगंबर नूह ने अपना जीवन अल्लाह और जनता की सेवा में बिताया। कुरान में कहा है, **व मा हाजिहिल् हयातुद्दुन्या इल्ला ल्हवुव्व लअिबुन** ... (कुसा 139) [कुरानशरीफ 29.64] – दुनिया के इस जीवन को एक खेल-तमाशा ही मानो। ऐसे महापुरुषों की कहानियां हर देश में और हर युग में होती हैं।

अब बात रही कानून की। चौथा हिस्सा कानून का है। उसमें विरासत वगैरह के कानून होते हैं। बाप की जायदाद में से बेटे को कितना मिलेगा, बेटी को कितना मिलना चाहिए आदि। शादी कैसे हो ? मरने के बाद दफनाया कैसे जाये या दहन किया जाये ? यह कानून का हिस्सा सभी मजहबों में होता है। ये कानून उस जमाने के लिए, उस-उस मुल्क के लिए थे, यह समझना चाहिए। अरबस्तान के, कश्मीर के, पंजाब के और दुसरे स्थानों के कानून अलग-अलग हैं और हर जगह हालात के मुताबिक होते हैं। इसके आगे हिंदू लॉ अलग, मुसलमानों का लॉ अलग, ईसाइयों का लॉ अलग, ऐसा नहीं चलेगा। क्योंकि लॉ को सेक्यूलर (धर्म-निरपेक्ष) माना जायेगा। आज उसे सेक्यूलर नहीं माना जाता है।

मुसलमानों में एक आदमी तीन-चार पत्नियां कर सकता है। हमारा राज्य धर्म-निरपेक्ष कहलाया जाने पर भी ऐसा अजीब कानून यहां चलता है। बहनों को तकलीफ

देनेवाला कानून ! एक ही आदमी की तीन-चार पत्नियां हो तो घर में शांति कैसे रहेगी, हम ख्याल कर सकते हैं। इसका कारण बताया जाता है, मुस्लिम लॉ । लेकिन मैं इतना बेवकूफ नहीं हूं कि इसे मान लूं। कुरान का मैंने बहुत अच्छा अध्ययन किया है। कुरानशरीफ में कही हुई 'उम्मुल किताब' और 'मुतशाबिहात' की बात मैं कह चुका हूं। कानून – 'शरियत' उम्मुल किताब नहीं है, वह उत्तरोत्तर बदलती रही है। मुहम्मद पैगंबर के जमाने में भी बदली थी, बाद में भी बदली है। मुसलमानों को समझना होगा और समझाना होगा कि सभी पत्नियों के साथ समान व्यवहार करना असंभव बात है। इसलिए इस प्रथा को जाना ही चाहिए। तभी स्त्रियों की शक्ति बढेगी। कानून को लेकर झगडे हो इसमें सार नहीं।

पांचवा और बहुत बडा हिस्सा है नीति। हमेशा सच बोलना, प्यार करना, एक-दूसरे के दुःख में हिस्सा लेना, मेहनत-मशक्कत करके खाना, आलस न करना, चोरी न करना, दूसरों के लिए दिल में हमदर्दी रखना – ये अखलाकी (नैतिक) चीजें हर धर्म की, मजहब की किताब में होती हैं। ये बातें मैंने कुरानशरीफ में, गीता में, बाइबिल में, धम्मपद में पढी हैं और दूसरे ग्रंथों में भी पढी हैं। इन सबने एक ही बात बतायी है। किसी केस में एक ही गवाह होने के बजाय ज्यादा गवाह हो तो केस पक्का बनता हैं। वैसे ही सचाई की जो बात हिंदू मजहब की किताब में पढूंगा, वही धम्मपद में और वही सिक्खों की तथा इस्लाम, इसाइयों की किताबों में पढूंगा, तो मेरा सच पक्का हो जायेगा। ऐसी जो बुनियादी बातें हैं, उनमें मुखालिफत (विरोध) करने की जरूरत ही नहीं है। और, जहां तक इन पर अमल करने की बात है, इनमें मुख्तलिफ राय नहीं है। [मो.पै. 272-276]

इस प्रकार मजहब के ये पांच जुज (हिस्से) हैं।

---

* विनोबाजी के तैयार किये भिन्न-भिन्न धर्मों के सार-ग्रंथ प्रकाशित किये गये हैं।

* *

8. सूरे-हश्र

अल्लाह के नाम

मैंने मेवों में काम किया तब और कश्मीर की मेरी पदयात्रा में कुरानशरीफ की तिलावत (पठन) सुनने का क्रम रखा था। तब देखा था कि हर मजलिस में ‘सूरे-हश्र’ का जिक्र हुआ ही है। इस बात की मुझे बेहद खुशी होती है। इससे यह जाहिर होता कि कौनसी चीज लोगों के दिलों को प्यारी लगती है। पैगंबरों, नबियों ने दूसरी जगह नसीहतें दी हैं, वे सब भलाई के लिए ही दी हैं। इसलिए किसी की कीमत कम, किसी की ज्यादा, ऐसा तौल नहीं कर सकते। कुछ बातें किसी के काम आती हैं, तो कुछ बातें किसी दूसरे के काम आती हैं। इसके मानी यह है कि कुछ बातें मेरी गरज के लिए होती हैं और कुछ दूसरे की गरज के लिए होती हैं। कुछ ऐसी भी होती हैं, जो सबके काम की होती हैं और वे सबको प्यारी होती हैं।

सूरे-हश्र में अल्लाह का नाम बार-बार आता है। उसमें अल्लाह की जितनी सिफतें (गुण) हैं, उतने ही नाम हैं। पर अल्लाह की सिफतें गिनी नहीं जा सकतीं। वे लातादाद (अनंत) हैं। उनकी गिनती हो ही नहीं सकतीं। उसके गुण, उसकी सिफतें जबान पे भी नहीं ला सकते। उनको हम नाप नहीं सकते। महाभारत में विष्णुसहस्रनाम यानी भगवान के हजार नाम हैं। मुसलमानों ने अल्लाह के 99 नाम माने हैं। तो क्या वाकई अल्लाह के नाम 99 तक या हजार तक ही महदूद हैं ? नहीं। लेकिन वह केवल एक गिनती मान रखी है। 'सूरे-हश्र' में अल्लाह के नाम इकट्ठा किये हैं और वह फिक्रा लोगों को बहुत ही प्यारा है। हर तिलावत के कार्यक्रम में उसे पढनेवाला कोई न कोई निकल ही आता है। इससे यह साफ जाहिर होता है कि हिंदुस्तान के लोगों में अक्ल है। किस चीज की क्या कीमत है, इसे वे अच्छी तरह जानते हैं। [वि.सा. खं. 8.377, 78]

इस्लाम के 99 नाम कुल के कुल विष्णुसहस्रनाम में आये हैं। कुछ नाम चार दफा, कुछ तीन दफा, कुछ दो दफा । इस तरह से 114 जगहों पर ये सारे आये हैं और 69 श्लोकों में आये हैं। विष्णुसहस्रनाम के कुल 107 श्लोक हैं, उनमें से 69 श्लोकों में ये नाम संकलित हैं। तात्पर्य भगवान एक ही है। चाहे इस्लाम हो, चाहे हिंदू हो, चाहे ख्रिश्चन हो, सभी धर्मों ने यही माना है कि भगवान एक ही है। उसके नाम अनेक हैं। [कुसुमबहन की डायरी]

परमात्मा के नाम की अहमियत सब धर्मों में गायी गयी है। आखिर इनसान को बचानेवाला है कौन ? नाम ही है। इसके सिवा दूसरी चीज इनसान के पास नहीं है, जो उसे खौफ से बचा सके। हर समय हम खुदा का नाम लें। [वि. सा. खं. 8.378]

अल्लाह ने इनसान को अक्ल और मुहब्बत दी है। अल्लाह का यह फज्ल है। उसने जो नियामतें दी हैं, वे सूरे हश्र में आती हैं। उसमें बताया है कि अल्लाह की कौनसी ऐसी नियामतें हैं, जो आप कबूल नहीं करते। अल्लाह की नियामतें गिनायी गयी हैं। वैसे उनकी गिनती तो हो नहीं सकती, लेकिन कुछ फेहरिस्त दी है, जिसमें एक है मीजान ।

मीज़ान

अल्लाह ने जो कुछ पैदा किया है, उसका जिक्र करते हुए यह कहा है कि अल्लाह ने इनसान को 'मीज़ान' यानी तराजू दिया है। और उसके द्वारा वह ठीक-ठीक वजन, नाप, तौल करता है। अल्लाह ने जो चीजें पैदा कीं, उनमें जमीन, आसमान, पहाड, दरख्त, फूल, फल, अनाज आदि कई तरह की चीजों के नाम आते हैं। और अजीब बात यह है कि उन चीजों में 'तराजू' का भी नाम आता है (कुसा 42) [कुरानशरीफ 55.1-13]।

अल्लाह ने आपको नसीहत दी है, नियामत दी है। उसका पूरा फायदा उठाना हो तो आप तराजू जरा ठीक रखें। उसमें कम-बेशी न होने दें। तराजू इसलिए रखा है कि न्याय में कभी भी फर्क न हो। न्याय ठीक-ठीक दे सकें। तराजू से भी बढकर कोई चीज हो सकती

है। लेकिन तराजू इसलिए है कि जिंदगी में हम तौलकर काम करें। जीने के लिए हमें अच्छी चीज मिले, लेकिन हमारा नापना-तौलना कम न हो। तराजू बिलकुल समान रहता है।

दुनिया का व्यापार-व्यवहार तराजू से चलता है। तराजू यानी समत्व । सारे व्यवहार के मूल में समत्व रहा है। कोर्ट में जो न्याय चलता है, वह भी समत्व के आधार पर चलता है। ये सारे न्याय-मंदिर टूट जायेंगे, अगर समत्व न रहे। सूर्य गरीब की झोंपडी में जाता है और अमीर के महल में भी। हिंदू के घर में जाता है और मुसलमान के घर में भी। वह भेद-भाव नहीं करता। सबके साथ समान बरतता है। कल अगर वह किसी के घर में ज्यादा जाये और किसी के घर में कम, तो दुनिया खतम ही हो जायेगी। उसका सब पर समान प्यार है। परमेश्वर का पानी समत्व रखता है। वह गाय और शेर में फर्क नहीं करता। सारांश, जो समानता पानी में, सूर्यनारायण में और तराजू में है, वही हमारे जीवन में भी आनी चाहिए।

अल्लाह का सबसे बडा नाम है 'रहमान' । यानी रहम करनेवाला। अल्लाह हम पर रहम करता है तो हमारा फर्ज क्या होता है ? अल्लाह ने हमको तराजू दिया है, इसलिए जितना उसने दिया उतना ही हम वापस करें, यह तो कम से कम बात हुई। अगर मैं इससे भी कम करूं तो मैं इनसानियत से भी नीचे गिर जाऊं। लेकिन अल्लाह ने अगरचे हमारे सामने एक मिसाल रखी है, आप जितना देते हैं, उससे ज्यादा ही वह देता है। वह तौलकर नहीं देता। वह एक के बदले में एक नहीं देता; वह तो एक के बदले में सौ-सौ देता है। आपके प्यार के बदले में भर-भरकर देता है। कुरानशरीफ में एक जगह पूछा भी है कि "कोई शख्स अच्छा काम करेगा तो अल्लाह उसे दसगुना देगा और अगर बुरा काम करेगा तो उसे उतना ही देगा, तो इसमें मीजान कहां रह गयी?" अल्लाह तो मीजान का इस्तेमाल ही नहीं करेगा। जहां बुरा काम किया वहां वह उतना ही देगा, जहां अच्छा काम किया वहां वह दसगुना देगा। यानी प्यार बरसाने के लिए वह तैयार बैठा है। आखिर में अल्लाह की हमारे लिए

सबसे बडी मिसाल है, ‘रहम’। क्या वह रहम आज इनसान की जिंदगी में है? तराजू भी नहीं रहा है। जितना दिया उससे ज्यादा पाने की नीयत है। [वि. सा. खं. 8.379-381]

लोग अल्लाह को भी ठगना चाहते हैं। वह एक बीज के बदले सौ देता है। तो लोग उसे कहते हैं कि ‘हम जब एक देते हैं तब तू 100 देता है; तो हम कुछ भी न दें, सिर्फ सिफर (शून्य) दें तो तुम हमें 99 दो।’ अल्लाह कहता है, ‘तुम मुझे बेवकूफ मत बनाओ। प्यार की अलामत (निशानी) तुम्हे मिलनी चाहिए इसलिए मैं तुम्हें सौगुना देता हूं। यह ध्यान में रखो कि 1 का सौगुना 100 होता है। लेकिन सिफर का सौगुना सिफर ही होता है। 0×100=0; 1×100=100 होता है। ऐसी दया, रहम अल्लाह ने सब पर चलायी। [वि. सा. खं. 392, 93]

जो ईमान रखते हैं, वे नेक अमल भी करें, इसके मानी ये हैं कि ईमान की कसौटी अमल ही है। इसलिए यह मानना कि तिलावत करेंगे और जन्नत में जायेंगे, गलत है। संस्कृत में कहावत है, ‘श्रुतं हरति पापानि’ – सुन लिया और पाप मिट गये; लेकिन सुननेभर से पाप खत्म नहीं होते। उसके लिए तो अमल करना पडेगा। अल्लाह से हमने भर-भरकर रहम पायी है; इसलिए हमारा फर्ज है कि हम भी रहम करें और इन्साफ करें। यह सूझ सूझती है अल्लाह का नाम लेने से ही। इसलिए ‘सूरे-हश्र’ की तिलावत करते हैं। अल्लाह ‘**अनल्हक**’ है, तो हमें भी सचाई से चलना चाहिए। वह ‘**अल्रहमान**’ है, तो हमें भी रहम करना चाहिए। जो-जो गुण, जो-जो नाम अल्लाह के हम गायें, उसका अमल हमें हमारी अपनी जिंदगी में भी करना है। हमें उन सिफतों को अपनी जिंदगी में लाना है। इसलिए अल्लाह का नाम लिया करें। उससे इनसान जरूर ऊपर उठता है।

* *

9. नसीहत की बूंदें

कुरान में कहा है,

“जिससे तुम्हारी अदावत या दुश्मनी है उसके साथ दोस्ती करके आजमाइश करो, तो एक दिन यह अनुभव आयेगा कि वह तुम्हारा दुश्मन नहीं, दिलीदोस्त बन गया है (कुसा 235) [कुरानशरीफ 41.34-35]।” बुद्ध ने भी यही कहा है, “वैर से वैर शमन नहीं होता, अवैर से ही उसका शमन हो सकता है।” ऐसे यह कोई नयी बात नहीं है। वेदों ने भी कहा है – “तितिक्षन्ते अभिशस्तिर् जनानाम्” [कुरानशरीफ 3.3] अर्थात् दुर्जनों के आक्रमण का प्रतिकार सज्जन तितिक्षा से करते हैं। ईसा ने बहुत ही साफ बता दिया – “शत्रु से प्रेम करो।” [वि.प्र. 25.12.46 + क्रां. द. 120, 21]

*

ला तकूलूलि मय्युक्तलु फ़ी सबीलिल्लाहि अम्वातुन् बल् अहयाअुव्व लाकिल्ला तश्‌अुरून (कुसा 157) [कुरानशरीफ 2.153-57]। जो ईश्वर के मार्ग पर चलते हैं, उनके लिए यह न सोचें कि वे मर गये । वे तो निरंतर जिंदा हैं, यद्यपि आप उन्हें देख नहीं सकते हैं। ईश्वर के रास्ते पर चलते समय आयी मृत्यु भी जीवन है। और शैतान के रास्ते पर जिंदा रहना भी मृत्यु है। [मै. 82]

*

ला ख़ौफुन् अलैहिम् व ला हुम् यह्जनून (कुसा 155) [कुरानशरीफ 10.62-64] – जो परमात्मा के मित्र हैं, उनको न भय है, न शोक ही। जो भगवान की भक्ति करता है उसको डर किसका होगा ? हम अगर किसी को तकलीफ नहीं पहुंचाते हैं, तो डर किसका रहेगा ? हम अगर डरने लगेंगे तो हमारी इबादत सही नहीं मानी जायेगी। कुरान में पढा है,

"जो अल्लाह से डरता है वह और किसी से भी डरता नहीं।" भगवद्गीता में भी "अभयं सत्त्वसंशुद्धि" वगैरह वचन आते हैं। [वि. चिं. 40 + 20.1.41]

*

"खुदा कभी दिन देता है, कभी रात।" वह कायम के लिए दिन ही दिन या रात ही रात दे तो क्या अच्छा लगेगा? लेकिन दिन के बाद रात और रात के बाद दिन देता है तो वह हमारे लिए अच्छा है। इनसान को जितनी जरूरत रोशनी की है, उतनी ही अंधेरे की भी है। लेकिन हम इसे महसूस नहीं करते और रात में भी चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश करते हैं। तो क्या वह स्वर्ग की निशानी है ? कोई भी सायंटिफिक माइंड यह कबूल नहीं करेगा कि रात को सोते समय दिये जले हों। उस समय अंधेरा ही चाहिए। परमात्मा ने सुंदर अंधेरा पैदा किया है, जिससे हमें आनंद, शांति, सुकून महसूस हो, हम आसमान के चमकीले सितारें देख सकें । लेकिन लोगों ने तो अंधेरे को आग लगा दी है।

*

न हन् नफ्स । अनिल हवा – बडे-बडे नबी, बडे बडे संत, सभी ने प्यार किया है। और खिदमत की है। प्यार गंगा का पानी है। वह भी खिदमत करता है। उनमें प्यार था, इसलिए उन्होंने दुनिया की खिदमत की। लेकिन प्यार को रोका जाये तो जिंदगी बरबाद होगी।

*

कुरान-शरीफ में,

ऐसी पांच वस्तुएं बतायी हैं, जिन पर सिर्फ परमात्मा की ही सत्ता है। मनुष्यप्राणी की सत्ता बिलकुल नहीं। उनमें एक है, भविष्य का ज्ञान । हम अंदाज जरूर लगाते हैं, परंतु अंदाज का अर्थ ज्ञान नहीं है।

*

एक जगह पर मुसलमानों को उपदेश दिया है कि “अरे, तुम लोग उन लोगों की निंदा न करो, जो देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। तुम उनकी निंदा करोगे, तो वे तुम्हारे अल्लाह की निंदा करेंगे (कुसा 196) [कुरानशरीफ 6.108]।” इसका अर्थ क्या हुआ? जिस नाप से देंगे उसी नाप से मिलेगा। इसलिए सावधान होइए और निंदा मत करिए। [वि.सा.खं. 8.385, 86, 87, 88]

*

तीन बातों पर बहुत जोर दिया है –

1 परमात्मा पर इमान रखो,

2 नेक काम करो,

3 एक-दूसरे को सत्य व सब्र की राह पर चलने में मदद करो ।

कुल का कुल इस्लाम धर्म इसमें आ गया। अब वैदिक धर्मवालों से पूछिए कि आप क्या बताते हैं, तो वे भी कहेंगे

1 ईश्वर पर निष्ठा रखें,

2 सत्य काम करें,

3 एक-दूसरे को सत्य तथा धीरज सिखायें ।

इससे ज्यादा वे और क्या बतायेंगे ? [7.3.63]

*

लुकमान की कहानी आती है। लुकमान कोई सैंकडों साल तक जीया था। उससे पूछा गया कि तू कितने रोज जीया ? वह बोला, चंद रोज ही जीया हूं –

पूछा गया लुकमाँ से जिया तू कितने रोज

दस्ते हसरत मलके बोला चंद रोज

इस दुनिया में हमें चंद रोज ही रहना है, यह समझकर जो बरतते हैं, वे महापुरुष होते हैं। उनको इस दुनिया के विषयभोग में रस नहीं रहता है। [12.2.58]

*

यह विचार रखा है कि गृहस्थ-धर्म ही पूर्ण आदर्श है। बाकी आदर्श, जैसे ब्रह्मचारी का, गौण आदर्श है। ईसा ब्रह्मचारी थे, आदरणीय थे, लेकिन उनका जीवन परिपूर्ण जीवन नहीं माना जायेगा। मुहम्मद पैगंबर का आदर्श पूर्ण है। गृहस्थ थे। वैसे ब्रह्मचारी को एक्सपर्ट जैसा माना जायेगा। विशेषज्ञ एकांगी हो हैं, परंतु समाज को उनकी भी जरूरत होती है। पर इस तरह जिन्होंने शुरू से आखिर तक ब्रह्मचारी का जीवन बिताया, उनका आदर्श पूर्ण नहीं है, पूर्ण आदर्श तो गृहस्थ ही है, स्त्री और पुरुष, दोनों के लिए गृहस्थ का ही आदर्श है, इस दृष्टि से मुसलमानों का चिंतन चलता है। [20.1.55; का. पा. पृ. 33]

*

रुक्न यानी स्तंभ और दीन यानी धर्म । रुक्नेदीन – धर्म के स्तंभ । कुरान में कहा है कि रुक्नेदीन पांच हैं – (1) पुण्ययात्रा – पैदल यात्रा, (2) उपवास, (3) दान, (4) नमाज और (5) अल्लाह एक है, इस पर श्रद्धा। [मै. सितं. 82]

*

अच्छाई ग्रहण करने के लिए अपना धर्म छोडने की जरूरत नहीं होती; बल्कि हर जगह से अच्छाई ले ही सकते हैं। गोश्त खाना मुसलमान का धर्म नहीं है; अगरचे वह गोश्त

खा सकता है, उसका तीव्र निषेध नहीं है। यह (गोश्त न खाने की) अच्छा मुसलमान रहकर भी ली जा सकती है। [वि. सा. खं. 8.402]

*

एक दफा मुहम्मद पैगंबर लंबा कमीज पहनकर बैठे थे। एक बिल्ली आकर उनके कमीज पर सो गयी। अब मुहम्मदसाहब को किसी काम के लिए उठकर जाना था। बिल्ली गहरी शांत निद्रा में थी। तो बिल्ली की नींद में खलल न पहुंचे, वह जग न जाये, इसलिए बिल्ली जिस पर सोयी थी उतना कमीज का हिस्सा काटा और फिर वे उठे। बिल्ली के लिए इतना प्यार रखनेवाले पैगंबर मांसाहार के लिए अनुकूल होंगे क्या, यह सोचने की बात है। [कुसुमबहन डायरी 6.4.78]

*

मुहम्मद पैगंबर कहते हैं, कमबख्तो, तुम कैसे हो गये हो कि जब नाव मंझधार में होती है तब तो खुदा की बात करते हो, पर वह किनारे लग जाते ही भूल जाते हो। किश्ती में याद, किनारे पर भूल। यह क्यों ? हमेशा ही याद रखो तो क्या बिगडेगा ? (कुसा 307) [कुरानशरीफ 10.22-23] [26.8.54]

*

जहां-जहां इस्लाम पहुंचा, उसने संदेश सुनाया –

– परमात्मा एक है।

– कोई भी शख्स कितना भी बडा क्यों न हो, परमात्मा के साथ उसकी बराबरी नहीं हो सकती।

– अपने व्यवहार में किसी प्रकार का भेद नहीं करना चाहिए।

– सबका नाता बराबरी का है। [वि. सा. खं. 8.393]

*   *

10. सवाल-जवाब

प्रश्न : सूफियत में तसव्वुर (साक्षात्कार) के कितने स्टेजेस हैं ?

विनोबाजी : उसके तजरबे मुख्तलिफ होते हैं। अक्सर सूफियों ने चार स्टेजेस बताये हैं। शरीयत (शास्त्रमार्ग), तरीकत (साधनमार्ग), हकीकत (सत्य-दर्शन, सत्यज्ञान) और मार्फत (मारीफत = पहचान, समरसता)। इसमें वे सबकुछ बिठा देते हैं। लेकिन जहां मार्फत का सवाल आता है, वहां वह मार्फत एक ही किस्म की नहीं होती, विविध किस्म की होती है। मूसा को आग और पहाड में परमेश्वर का साक्षात्कार हुआ था । इब्राहीम को यह तजरबा हुआ कि चांद, सूरज, सितारे तो डूब जाते हैं, इसलिए डूबनेवाला अल्लाह नहीं हो सकता है। इस तरह मार्फत के तजरबे मुख्तलिफ होते हैं। वेदांत में उसकी आठ किस्म की स्टेजेस बयान की जाती हैं। अक्सर सात आसमानों की बात की जाती है। ये आसमान यानी भौतिक भूगोल की बात नहीं है। मनुष्य की रूह ऊपर उठती है, तो ऊपर चढते-चढते आसमान में पहुंचती है, फिर और ऊपर चढते-चढते सात आसमान चढ जाती है। ये सात स्टेजेस कौनसी हैं, इसका जिक्र नहीं किया गया है।

अक्सर यह माना गया है कि जो आखिरी स्टेज है, वह है सत्य – हक । वहां पर रहम वगैरह कुछ नहीं है। कुरानशरीफ में तीन किस्म के यकीनों की बात की जाती है। ‘इलमुल यकीन’ (निश्चित ज्ञान), ‘अयनुल यकीन’ (निश्चित दर्शन) और ‘हक्कुल यकीन’ (निश्चित अद्वैतानुभव) ।

मैंने कुरानशरीफ का जो मुताला किया है, वह सरसरी तौर पर नहीं किया है। बल्कि मैंने उसके ‘मिस्टीक एक्स्पीरियन्सेस’ देखे हैं। अक्सर लोग मॉरल टीचिंग्स और कानून-किस्से वगैरह देखते हैं। लेकिन उसमें क्या होता है देखने का ? झूठ मत बोलो, रहम करो, यह कौन नहीं कहता है ? सब यही बात कहते हैं। इसलिए वही चीज कुरान में मिली तो

क्या मिला ? अरबी सीखकर इतना वक्त जाया (बरबाद) करके अगर सच बोलो, इतना ही हम सीखें तो हमने वाकई वक्त जाया किया। वह तो हमारी मां ने हमें मराठी में ही सिखा दिया था। इसलिए कुरान के गूढ अनुभव देखने चाहिए। उसमें दो जुमले आते हैं (कुसा 239 [कुरानशरीफ 103.1-3] (कुसा 238) [कुरानशरीफ 90.8-17]। सूरे बलद में यह आता है। एक दफा हक के साथ सब्र है और दूसरी दफा हक के साथ रहम है। ये तीन तजरबे हैं। पहले तजरबे में सब्र है। उसके बिना हम आगे नहीं बढ सकते। इसलिए ध्यान में पहली चीज है सब्र । फिर उसके बाद रहम, करुणा। बुद्ध भगवान को 40 फांके करने के बाद करुणा का दर्शन हुआ। उन्होंने चारों तरफ देखा तो करुणा दिखायी दी। मूसा ने और ईसा ने भी इसी तरह 40 फांके किये थे। बुद्ध भगवान ने यह उसूल बताया कि वैर से वैर घटेगा नहीं, बल्कि बढेगा। इसमें उन्हें जो दर्शन हुआ, वह रहम का था। लेकिन आखिरी हालत में रहम भी नहीं है, हक है। क्योंकि वहां दो चीजें नहीं रहती हैं, एक ही चीज रहती है।

मन्सूर कहता था कि '**अनलहक्**' – मैं ही हक हूं। खुदा हक है, यह कहने में किसी को उज्र नहीं है। लेकिन जब इनसान कहता है कि मैं हक हूं, तो वह ज्यादती मानी जाती है। लेकिन शंकराचार्य ने भी ऐसा ही कहा है कि खुदा और हम एक ही हैं। अक्सर यह सवाल उठाया गया है कि खुदा और हम एक हैं या अलग हैं। उसका जवाब यह है कि हम एक भी हैं और अलग भी हैं। आदम खुदा नहीं है, लेकिन खुदा के नूर से जुदा नहीं है। कुरान में यह भी बात है। यह जो तजरबा होता है, वह चाहे नशे में भी हो, लेकिन उसका इन्कार नहीं किया जा सकता। मन्सूर को नशे में तजरबा हुआ, ऐसा कहा जाता है। मुझे आज भूख लगी तो उसका इन्कार कोई नहीं कर सकता। इस तरह नशे में भी किसी को यह तजरबा हो कि 'मैं वह हूं' तो वह 'इमेजिनेशन' की 'फ्लाइट' (उडान) है। फिर चाहे नशे के बाद वह इबादत भी करे, लेकिन उसको वह जो तजरबा हुआ, वह सच है। मन्सूर इतनी ऊंची हालत

में था कि इबादत से भी ऊंचा था। उसका नशा निचली हालत पर नहीं था, बल्कि ऊंची हालत पर था। कहा गया है कि अल्लाह का जिक्र नमाज से भी बढकर है। इसके मानी यह है कि अंदर से उसकी जो याददाश्त सहज ही होती है, वह बहुत बडी चीज है। ऐसे बैठो, ऐसे उठो, यहां रुको – यह सारा नाटक नहीं करना पडता है और चलते-बोलते, खाते-पीते वह जिक्र अंदर पडा ही है, तो वह बहुत बडी बात है। हम चलते हैं तो सांस लेने का काम चलता ही है। हर काम के साथ हम सांस लेते हैं। वैसे ही हर काम के साथ अल्लाह का जिक्र हो, यह है असली चीज । लेकिन यह सबको सधती नहीं, इसलिए मश्क (अभ्यास) के तौर पर पांच दफा नमाज की बात कही है। लेकिन जब इनसान उतनी ऊंची हालत में पहुंचेगा तो एक लमहा (क्षण) ऐसा होगा, जब उसे यह तजरबा होगा कि 'अनलहक्' मैं वह हूं।

आप यह पूछ सकते हैं कि इसका व्यावहारिक मूल्य क्या है ? लेकिन भूमिति में जहां आप बिंदु की व्याख्या करने बैठते हैं, वहां यह कहते हैं कि बिंदु वह है, जिसे लंबाई, चौडाई और ऊंचाई नहीं है; फिर भी जब आप बोर्ड पर बिंदु की शक्ल दिखाते हैं, तो वहां तीनों चीजें होती हैं। व्याख्या में हम यह कबूल करने के लिए तैयार नहीं हैं कि बिंदु वह है, जिसे कुछ लंबाई, चौडाई और ऊंचाई है; क्योंकि वह कबूल करेंगे तो भूमिति खत्म हो जायेगी। इसलिए जहां हम व्याख्या करने बैठते हैं, वहां यह कहेंगे कि अल्लाह और हम एक हैं। लेकिन व्यवहार में तो वह और हम अलग-अलग हैं। फिर भी व्याख्या में वह और मैं एक हूं। चाहे ऐसी चीज दुनिया को देखने को न मिले, तो भी वह दुनिया की बुनियाद है। कुरानशरीफ में कहा है – **युअमिनून् बिल् गैबि** (कुसा 2 [कुरानशरीफ 2.1-5] – जो दीखता नहीं है, उस पर यकीन रखो। यह बहुत बडी बात है। यकीन का अर्थ अनुभूति नहीं। यकीन यानी निष्ठा – 'कन्व्हिक्शन', जो बुद्धिगत चीज नहीं है। बुद्धिगत तो 'डिटरमिनेशन'

(निश्चय) है। यकीन यानी ज्ञान का विज्ञान होना। सूफी और वेदांत बिलकुल नजदीक आते हैं। आप दोनों का लफ्ज-ब-लफ्ज तरजुमा कर सकते हैं।

मैंने कई दफा भारत के मुसलमानों के साथ बात करते हुए समझाया है कि आप लोग जरा समझो कि आपका 'ओल्ड टेस्टामेंट' क्या है, तो आप हिंदुस्तान की खूबियों को हजम करोगे। आपका 'न्यू टेस्टामेंट' कुरानशरीफ है; लेकिन 'ओल्ड टेस्टामेंट' वेद और उपनिषद है। यह सारा जो पुराना अनुभव चला आया है, उसी का जिक्र करते हुए कुरान-शरीफ में कहा है कि 'कुछ रसूलों के नाम मैंने तुझको सुनाये हैं और कुछ रसूलों के नहीं सुनाये हैं।' यानी ऐसे कई रसूल हैं, जिनके नाम तू नहीं जानता। लेकिन ऐसे 'सब रसूलों की एक जमात है।' अल्लाह रसूलों को संबोधित कर रहा है कि 'ऐ रसूलो, तुम सब एक जमात हो।' इनसान की एकता के लिए यह बहुत बडी चीज है। यह चीज हमारे ध्यान में आये तो बहुत सारे झगडे मिट जायेंगे। फिर हम एक-दूसरे के तजरबे 'शेअर' करेंगे। जैसे आज साइन्स में होता है।

साइन्स 'इन्फिनिट प्रोसेस' है। साइन्स कभी यह नहीं कहता है कि अब यहां समाप्त है। बल्कि वह कहता है कि अनंत का एक अंश ही हम समझे हैं। अभी बहुत समझने का बाकी है। वैसे ही रूहानियत में भी अभी बहुत समझने का बाकी है।

इबादत के लिए छोटी-छोटी चीजें रिवाज के तौर पर आ जाती हैं और फिर उसी को मजहब मानकर उसका उसूल बनाया जाता है और झगडे चलते हैं। मुहम्मद पैगंबर के बाद उनके रक्त-संबंधी (दामाद अली) और दूसरे शिष्यों (खलीफा) में झगडा हुआ। जिससे 'तबर्रा' और 'मद्देसाहबा', ये दो पंथ बने । मद्देसाहबा यानी साथी की स्तुति और तबर्रा यानी साथी की निंदा। एक ही दिन स्तुति और निंदा गाने का कार्यक्रम होता है। फिर जुलूस निकालते हैं। एक निंदा करता है, दूसरा स्तुति करता जाता है। दोनों में लडाइयां भी हुई हैं,

ऐसा इतिहास कहता है। मद्देसाहबा और तबर्रा, ये झगड़े – यह भी कोई धर्म है ? क्या निंदा और स्तुति करना कोई धर्म है ? एक ही दिन मैं निंदा करता चला जाऊं, आप स्तुति करते चले जायें – यह सब क्या है ? साइन्स के जमाने में यह सब नहीं टिकेगा। साइन्स एक ऐसी चीज है, जो हमें ऐसे छोटे-छोटे खयालात छोडने के लिए मजबूर करेगी। यह साइन्स का बडा उपकार है। मैंने देखा है कि कुरान में जहां-जहां कुदरत कैसे बनी इसका जिक्र आया है, वहां साइन्स के खिलाफ बात नहीं आयी। कुरान में कहा है कि अल्लाह ने जोडे पैदा किये (कुसा 59) [कुरानशरीफ 30.20-25] । सिर्फ इनसान में ही नहीं, बल्कि हर चीज में पैदा किये। यह बिलकुल वैज्ञानिक चीज है। निगेटिव और पॉजिटिव बिजली को यह बात लागू होती है। अब तक मुझे कुरान में ऐसी चीज नहीं दीखी, जो साइन्स के खिलाफ हो । [मै. 89]

प्रश्न : बिस्मिल्ला और ॐ में क्या फरक है ?

विनोबाजी : 'बिस्मिल्ला' पद में तीन शब्द हैं। बि, इस्मि, अल्ला, यानी अल्लाह के नाम से । ॐ यानी परमेश्वर का नाम । अच्छे काम शुरू करने का संकल्प कर अल्लाह के नाम से आरंभ होता है। इसलिए जितने भी अच्छे और धार्मिक कार्य करने होते हैं उन्हें हिंदू 'ॐ' से प्रारंभ करते हैं और मुसलमान 'बिस्मिल्ला' से । ॐ और बिस्मिल्ला दोनों निराकारवाचक शब्द हैं। ईश्वर और अल्लाह दोनों एक ही निराकार ईश्वर के लिए कहे गये शब्द हैं। ईश्वर को संस्कृत में ॐ कहते हैं और अरबी में अल्लाह; दोनों एक ही हैं। यह हम समझते नहीं, इसलिए हमें लगता है कि ये दोनों अलग-अलग पंथ हैं। वास्तव में दोनों का रहस्य एक ही है।

प्रश्न : आप भगवद्गीता और कुरान की तुलना कर सकते हैं ?

विनोबाजी : हमारे लिए यह तो बहुत आसान बात है। गीता का सार एक वाक्य में है – **मामेकं शरणं व्रज** – एक परमेश्वर की शरण आ। ठीक यही सार कुरान में कहा है। जो ईश्वर की शरण आयेगा, वह सत्कार्य करता रहेगा, वह सदाचार करेगा। भक्ति के साथ सदाचार होना ही चाहिए। यह गीता की ध्वनि है। कुरान में भी कहा है – **अल् लजीन आमनू व अमिलुस्सलिहाति** । जो ईश्वर पर ईमान रखते हैं और नेक काम करते हैं। यही मुसलमान की व्याख्या है। ईश्वर पर विश्वास रखो, परोपकार में लगे रहो । सारा भार परमेश्वर पर छोड दो। किसी की आसक्ति मत रखो। यही गीता और यही कुरान का उपदेश है। अबुल कलाम आजाद ने कुरान पर जो सुंदर पुस्तक लिखी है, उसकी प्रस्तावना में इसी तरह समझाया है।

दूसरी बात, गीता अन्यदेवता-भक्ति (देवताओं की पूजा) का साफ इन्कार नहीं करती। गीता का कहना है कि उसे कनिष्ठ क्यों न कहा जाये, पर वह भी एक मार्ग है। कुरान को अन्य देवता-भक्ति मान्य नहीं। इस्लाम अन्यदेवता-भक्ति का निषेध करके उसका पूरा छेद उडा देता है। सत्य कहना, पूरा छेद उडा देना, यह एक पद्धति । जबकि गीता व्यक्ति की भूमिका पर जाकर, उसकी श्रद्धा देखकर देवता-पूजन को मान्यता देती है। कहती स्पष्ट है, परंतु तोडती नहीं। हिंदू, ईसाई, इस्लाम आदि सभी धर्मों में किसी-न-किसी रूप में मूर्तिपूजा प्रचलित है। भले ही वह नीचे दर्जे की मानी गयी हो ! [भू. गं. 7.73, 74; स. से. सं. प्रका. 1962]

प्रश्न : कुरानशरीफ में कहा है, **कुल्लुन् आमन बिल्लाहि व मलाअिकतिही व कुतुबिही व रुसुलिही** (कुसा 189) [कुरानशरीफ 2.284-86] – पैगंबरों पर विश्वास कर ! व लि कुल्लि उम्मतिरसूलुन् (कुसा 311) [कुरानशरीफ 10.47] – हरएक कौम के लिए हिदायत देनेवाला भेजा गया है। इस्लाम का मानना है कि पैगंबरों की जरूरत नहीं। अब जो आयेगा वह रिफॉर्मर – सुधारक होगा। इस बारे में आपकी राय मुबारक क्या है ?

विनोबाजी : यह हरएक के अपने-अपने मानने की बात है। कुरान ने 'खातिमुन् नबीयुन्' कहा। यानी अब तक के नबियों ने जो कहा उनके कहने पर मैं सील लगानेवाला हूं। इसका अर्थ यह करना कि अब आगे कोई नबी आयेगा ही नहीं, नास्तिकता होगी। हम यह कह सकते हैं कि हमारे लिए फलाना नबी काफी है। लेकिन दुनिया तो करोडों बरस चलनेवाली है। उसके बारे में यह कहना कि आगे कोई पैगाम सुनानेवाला आयेगा ही नहीं, खुदा की कुदरत को महदूद (सीमित) कर देना है। यह एक ऐसा बयान है, जो इनसान की मर्यादा के बाहर का है।

प्रश्न : यह तो लफ्जी मतभेद है। पहले लोग बादशाह कहते थे, अब प्रेसिडेन्ट कहते हैं। खुदा की कुदरत को कौन महदूद कर सकता है ? लेकिन कहने की मन्शा यह है कि तरक्की के सिलसिले में आखिरी कडी है।

विनोबाजी : यह भी मानने की बात है, आप ऐसा मान सकते हैं। मैं ऐसा नहीं मानूंगा। गांधीजी के भी कुछ अनुयायी मैंने देखे, जो मानते हैं कि उनसे अधिक पूर्णपुरुष होनेवाला नहीं है। यह भी नास्तिकता है। आप खुद देखते हैं कि कुरान में एक आयत आयी और फिर वह मन्सूख (रद्द) कर दी गयी।

प्रश्न : लेकिन बुनियादी बातों में कोई फर्क नहीं हुआ। तफसील में फर्क जरूर हुआ। यह हम कैसे कहें कि दूसरा आनेवाला कोई विरुद्ध बात कहेगा।

विनोबाजी : मैं कहां कहता हूं ? वह भी तसदीक (पुष्टि) ही करेगा। पैगंबर ने भी तो तसदीक ही की। पैगंबर ने कहा, सच बोलो, तो क्या दूसरा आनेवाला कोई यह कहेगा कि सच मत बोलो ? सूरे रहमान में एक फिकरा बार-बार आता है कि कौन ऐसा है, जो खुदा की नियामत झुठलायेगा ? सर सैयद ने इसे कम कर दिया। वह कहीं तो वाक्य को भी तोडते हैं। इस वाक्य को निकाल दिया तो मुसलमानों ने उन्हें काफिर कहा। 'अनलहक्'

कहनेवाले को पत्थर मारकर मार डाला। बाइबिल के बारे में भी ऐसा ही हुआ है। मैथ्यु छापना है तो पूरा छापना चाहिए। उसका हिस्सा चुनकर कोई छापे तो वह अधार्मिक कार्य माना जाता था। यह सब लफ्जपरस्ती (शब्दपूजा) यानी बुत्परस्ती (पत्थरपूजा) ही है। इसलिए पैगाम सुनानेवाला आयेगा ही नहीं, ऐसा नहीं मानना चाहिए।

प्रश्न : जनाबे आला, जैसा कि मैंने कहा, हम उसे पैगंबर नहीं कहेंगे, मुसलिह (सुधारक) कहेंगे।

विनोबाजी : हां, गाय पहले दूध देती थी। अब भी दूध देगी। लेकिन पहले आप दूध कहते थे, अब आप तूद कहेंगे !

बात ऐसी है कि क्या हिंदू, क्या मुसलमान, क्या दूसरे मजहबवाले, जिनकी दृष्टि अंधश्रद्धा से महदूद हुई है, अपने-अपने ग्रंथों के अक्षर के उपासक बन गये हैं। वेद कोई दस-बीस हजार साल पहले के हो सकते हैं, इस तरह का जिक्र जब मैंने अपने एक व्याख्यान में किया था तब एक आर्यसमाजी भाई ने मेरे साथ बहस करते हुए कहा, यह तो नास्तिकवाद है। हम इसे नहीं मानते। हम मानते हैं कि सृष्टि के आरंभ के पहले से वेद हैं। उनके बाद सृष्टि हुई है। मैंने कहा, वेद यानी ज्ञान या अव्यक्त शब्द, इस अर्थ में मैं आपकी बात मान सकता हूं। जैसे, जॉन के गॉस्पेल के आरंभ में कहा गया है। लेकिन किताब के लिए यह कैसे माना जाये ? मैंने देखा कि इस जवाब से उस भाई का समाधान नहीं हुआ।

लेकिन अगर आगे केवल मुसलिह या सुधारक आनेवाले हैं तो पहले जो आये, वे भी मुसलिह या सुधारक क्यों न माने जायें ? और वे अगर पैगंबर थे तो इसके आगे भी पैगंबर का आना क्यों असंभव माना जाये ? ईश्वर की कर्तुं अकर्तुम् (करने, न करने की) शक्ति पर हम हमारी मर्जी का अंकुश क्यों रखें ? सारांश, वेद के पहले का ईश्वरी वचन नहीं हो सकता और मुहम्मद पैगंबर के बाद ईश्वरी वचन कोई निकलनेवाला नहीं है, इन दोनों

का फलितार्थ एक ही है, अंधश्रद्धा या मूढ आग्रह । सर्वधर्मसमभाव माननेवालों को इस दोष से बचना है।

हां, कोई यह जरूर कह सकते हैं कि हमारे लिए वेद काफी हैं, या कुरान काफी है। वेद तो क्या, लेकिन और भी कोई ग्रंथ, जिससे चित्त की शुद्धि में मदद मिलती हो और चित्त का समाधान होता हो, अपने लिए काफी है ऐसा मान सकते हैं। लेकिन वहबिल्कुल दूसरी बात है।

प्रश्न : इस्लामधर्म के बारे में आपके क्या विचार हैं ?

विनोबाजी : इस्लामधर्म करुणामूलक है। वैदिक धर्म सत्यमूलक है। ईसाईधर्म प्रेममूलक है।

प्रश्न : हिंदू और इस्लामधर्मवालों के बीच सामंजस्य का आपका कोई कार्यक्रम है ?

विनोबाजी : दोनों एक-दूसरे के धर्मग्रंथों का अध्ययन करें।

प्रश्न : हिंदुओं की कोई किताब है, जिसका हम अध्ययन करें ?

विनोबाजी : अष्टादशी (उपनिषद-सार) पढिए।

प्रश्न : आपके अध्ययन के अनुसार इस्लामधर्म में इतनी क्षमता है कि वह देश की समस्याओं को पूर्णरूप से हल कर सके ? यदि नहीं तो क्यों ?

विनोबाजी : इस्लामधर्म सचाई से चले तो वह समर्थ है। वह क्षमता रखता है। नाम इस्लाम का और सचाई नहीं ऐसा हो तो क्या लाभ होगा? इसलिए आप सच्चे मुसलमान बनें । [मै. 81]

प्रश्न : मुंबई कार्पोरेशन के एक मुस्लिम सदस्य ने कहा कि सात बकरों को काटने से जो पुण्य मिलता है वह एक गाय को काटने से मिलता है। क्या यह बात कुरान में है ?

विनोबाजी : कुरान में ऐसी बात नहीं है। बल्कि मुहम्मद पैगंबर ने कहा है –गाय का गोश्त बीमारी पैदा करता है और गाय का दूध दवा है।

मेरी यात्रा में एक जगह गाय कटी थी। उसका बहुत हो-हल्ला हुआ था। यह गलती से हुआ था। 'जमीयत-उल-उलेमा' ने कहा था कि गाय मत काटो, परंतु सरकार ने तो गोहत्या बंदी नहीं की थी। मैं अचानक उस स्थान पर पहुंच गया। शुक्रवार का दिन था। मीटिंग मस्जिद में हो सकती थी, क्योंकि मस्जिद में दस-बीस गांव के लोग इकट्ठा हुए थे। मैंने वहां मीटिंग ली और उन दोनों से कहा कि जरा सोचो तो, अगर ईश्वर गाय-बकरे के बलिदान से संतुष्ट होता, तो पैगंबर को क्यों भेजता, उसके लिए तो कसाई ही काफी था। कुरान में साफ कहा है कि अल्लाह प्रेम का भूखा है, बलिदान का नहीं। वैसे अल्लाह तो मांस ही क्या, केला भी नहीं खाता। लेकिन हम उसे वे चीजें देते हैं; क्योंकि हम जो खाते हैं, वह भगवान को देकर खाते हैं। इसलिए लोगों को मांस खाने से छुडाना चाहिए। अल्लाह तो धर्मनिष्ठा और प्रेम चाहता है।

मैं इस नतीजे पर आया हूं कि हिंदुस्तान की अभी की परिस्थिति में, सब बातें सोचते हुए, गोहत्या-बंदी में ही सबका भला है। मुसलमानों की रक्षा भी मैं उसमें देखता हूं। मैंने देखा है कि समझदार मुसलमान गोहत्या बंदी में कुशल समझते हैं।

बहुसंख्या की भावना की कदर करने का भी अल्पसंख्या का धर्म होता है। खास करके जब उसमें अल्पसंख्या की धर्म-भावना में कोई क्षति नहीं पहुंचती। सनातनियों के मसविदे में मुसलमानों की धार्मिक दृष्टि से गोहत्या बंदी में उतना अपवाद रखा गया है। मैंने वह भी नहीं रखा है, क्योंकि उसमें मैं इस्लाम का अपमान मानता हूं। ध्येयवादी दृष्टि रखते हुए भी वास्तविकता को भूलना मैं उचित नहीं मानता । [मै. 82]

इस विषय में आर्थिक दृष्टि से अभी कुछ नहीं कह रहा हूं। उस बारे में मैंने सोचा तो है। लेकिन वह विचार मैं यहां अप्रस्तुत मानता हूं। असमर्थ गाय-बैलों को बेखटके काटनेवाले देश की तुलना में उनकी आखिर तक हिफाजत करने की जिम्मेवारी उठानेवाले देश को निःसंशय अधिक वैज्ञानिक बनना पडेगा। तिसपर भी संभव है कि वह फायदे में न रहे। नुकसान में न रहे इतना ही हो सकता है। और दयाधर्मी के लिए इतना बस है।

प्रश्न : बाबाजी, रूहानियत के मुताबिक़ कुछ नसीहत दीजिए । क्या खुदा और इल्म एक ही चीज है ?

विनोबाजी : हम रूहानियत के बारे में किसी को नसीहत नहीं देते हैं । जिसकी हस्ती के बारे में आपको शक है, उसके बारे में आप सवाल कैसे पूछते हैं ? खुदा की गरज आपको क्यों पैदा हुई ? क्या किताब पढने से जिज्ञासा पैदा हुई ? या अपनी जिंदगी में ही इसकी तलाश की गरज पैदा हुई ? क्या उस तलाश के बिना आपका काम रुका है ? अगर किताबें पढने से यह सवाल उठा हो तो समझ लीजिए कि किताबें पढ-पढकर उलझनें ही पैदा होती हैं।

प्रश्न : हमारे वलियों ने, फकीरों ने और संतों ने यह बात समझायी है। उसकी एक फिजा है, जिसका हर दिल पर असर होता है।

विनोबाजी : यानी संत और फकीरों को देखकर यह सवाल पैदा हुआ। मतलब यह जिज्ञासा है। लेकिन आपकी जिंदगी में ही खुदा की गरज पैदा हुई हो, तो उस बारे में मैं कुछ कहूंगा। [मै. 74]

हमने देखा है कि मानव-मन में ये सवाल उठे हैं। मानव ने उस पर सोचा है और उसे कुछ तजुरबे भी मिले हैं। पहले सवाल उठते हैं। मनुष्य की जिंदगी में एक ऐसा मौका आता है, जबकि खुदा की तलाश के बिना मामला रुका रहता है। सवाल पैदा होने पर अंदाज

चलता है। फिर तजुरबे होते हैं। जैसे विज्ञान में चलता है, वैसे यहां भी चलता है। उपनिषदों में अंदाज है। उसमें अलग-अलग विचार पेश किये हैं। हर ऋषि ने अपने-अपने तजुरबे बताये हैं। उसके बाद उलझने पैदा हुई और हिंदूधर्म तितर-बितर होने की हालत में आया। श्रद्धा के लिए आधार नहीं रहा, इसलिए उपनिषदों को पिरोनेवाले 'ब्रह्मसूत्र' निकले, जिनमें उपनिषद-सार अनुस्यूत हैं। उसके बाद मिस्टिक आये, जिन्होंने तजुरबे लिये । [पा. या. पृ. 104]

प्रश्न : इसमें तजुरबे ही हैं या सब कल्पना है ?

विनोबाजी : कुछ अनुभव है और कुछ कल्पना है। अनुभव से दिशा मालूम होती है और उस दिशा में कल्पना आगे बढती है। भक्तों में एक बडी बात है **बोधयन्तः परस्परम्** - एक-दूसरे के अनुभव से सीखना। फिलसूफी में जिस तरह खंडन-मंडन चलता है, वैसा भक्तों में नहीं होता।

प्रश्न : आप सब धर्मों से मधु लेते हैं, तो क्या आपका कोई नया धर्म – संप्रदाय चलाने का इरादा है ?

विनोबाजी : नहीं, आजकल अनेक लोगों की यह मनोवृत्ति हो गयी है कि मेरा धर्म और मेरा धर्मग्रंथ ही श्रेष्ठ है – मैं ही सबसे उत्तम हूं। मैं इस मनोवृत्ति को पसंद नहीं करता, न ही ऐसा मानता हूं। किसी भी धर्म को ऊंचा-नीचा नहीं मानता। मैं सभी धर्मों से अपनी जरूरत की चीज, अच्छी चीज लेता हूं। इसका अर्थ यह नहीं है कि बाकी सब चीजें अर्थहीन हैं। परंतु हां, उनसे मेरा कोई सरोकार नहीं है। [अ. द. (गुज.) पृ. 57]

प्रश्न : हजरत मुहम्मद की महत्ता ठीक समझ में नहीं आती। आपके मन में उनके लिए गहरा आदर है; कृपया, इस विषय में कुछ समझाइए ।

विनोबाजी : यह हमारी आधुनिक शिक्षा का दोष है। वर्डस्वर्थ, होमर, कीट्स, बायरन, शेक्सपीअर वगैरह के बारे में हम अच्छी तरह जानते हैं; लेकिन मुसलमान 800 सालों से हमारे साथ रह रहे हैं, फिर भी उनके धर्म के विषय में और पैगंबर के विषय में अंग्रेजों ने हमें जो पढाया-सिखाया, उससे ज्यादा जानने की जरूरत नहीं मानते ।

मेरी दृष्टि से आज के साम्यवाद का मूल बीज मुहम्मद पैगंबर के उपदेश में पडा है। वह ऐसा पुरुष निकला जिसने व्याज लेने का निषेध किया। और यह भी बताया कि छोटा-बडा, गरीब-अमीर वगैरह सब प्रकार के भेदों को भूल जाना चाहिए। सब समान है। उन्होंने इन उसूलों को भारपूर्वक रखा, इतना ही नहीं, उस बुनियाद पर इस्लाम की रचना जिस तरह की; वैसी और किसी ने नहीं की। [पा. या. पृ. 51]

प्रश्न : रूहुल कुरान के देश में आने पर क्या पाकिस्तान सरकार ने रोक लगायी ?

विनोबाजी : यदि पुस्तक इस्लाम-विरोधी होगी, तब तो भारत सरकार भी उस पर रोक लगा देगी, क्योंकि भारत में भी पांच करोड मुसलमान हैं। और अगर पुस्तक इस्लाम-विरोधी न हो, तो दुनियाभर में चलेगी। कुरान-सार का तो खूब ही प्रचार हो गया है।

प्रकाशन के पहले, बिना पुस्तक देखे ही पाकिस्तान के कुछ समाचार-पत्रों ने उसकी आलोचना की थी। लेकिन पुस्तक के प्रकाशित होने पर वे इसमें दो-एक वचन अधिक जोडने की बात ही सुझा सकते थे। मुझे वे वचन विशेष महत्त्व के नहीं लगे, इसलिए मैंने उन्हें छोड दिया था। हिंदुस्तान के मशहूर मौलाना मसूदी ने कुरान-सार को पसंद किया, उसकी प्रशंसा की। एक प्रसिद्ध मुसलमान सज्जन को कुरान-सार इतना पसंद आया कि उन्होंने खुद-ब-खुद उसके शब्दों की सूचि तैयार करने का काम उठा लिया।

* *

11. कुरान-सार: एक विहंगावलोकन

[मै. 92 सितं]

- पूर्व पाकिस्तान (बंगला देश) की पदयात्रा पूरी होने के बाद विनोबाजी की यात्रा पश्चिम बंगाल में चल रही थी। एक दिन पदयात्रा में ही सुबह की शांत वेला में उन्होंने साथियों को 'कुरान-सार' का परिचय देना शुरू किया। यह सिलसिला रोज बीस मिनट, इस प्रकार पांच दिन चला। कुरान-सार के खंडों और प्रकरणों के शीर्षकों को उन्होंने संस्कृत श्लोकों में गूंथा है। उन श्लोकों के आधार से उन्होंने बहुत ही थोडे में पूरे कुरान-सार की एक झलक यहां करायी है। यह उडनेवाले पक्षी की नजर का अवलोकन है – विहंगावलोकन ! o-

हमने नामघोषा का चयन किया, वह इतनी कठिन बात नहीं थी। लेकिन कुरानशरीफ के चयन का काम इतना आसान नहीं था। कुरान धर्मग्रंथ है। नामघोषा साधक के लिए साधन है। उसमें भगवन्नाम है और चित्तशुद्धि की एक प्रक्रिया बतायी है। इतना ही विषय उसमें है। धर्मग्रंथ में अनेक विचार आते हैं। समाज के नीति-नियम, आचरण के नियम, शासन के बारे में नियम, कानून, सृष्टि और ईश्वर का संबंध, इतिहास, उससे संबंधित पौराणिक कथाएं, व्यक्तियों के चरित्र, लीलाएं, आदि-आदि सब प्रकार की बातें धर्मग्रंथ में आती हैं। आजकल जो लिखने की पद्धति है उसमें ऐतिहासिक, भौगोलिक, ऐसे विभाग कर देते हैं। परंतु पुराने ग्रंथों में ऐसे अलग-अलग विभाग नहीं रहते थे। सब इकट्ठा ही रहता था। जैसे हम भोजन करने बैठते हैं तो यह नहीं करते कि पहले दाल खा ली, फिर चावल खाया, फिर तरकारी। भोजन में सब चीजें इकट्ठा होती हैं। वैसा ही इन ग्रंथों में रहता है। इसलिए धर्मग्रंथ का चयन करना आसान नहीं होता ।

धर्मग्रंथ का चयन करते समय यह ख्याल रखना पडता है कि किसी पर अन्याय न हो। ग्रंथ का सार अच्छी तरह से आ जाये और वह निर्विवाद हो। ये सारी बातें ध्यान में रखकर सावधानी से ध्यानपूर्वक चयन करना पडता है।

कुरान के कुल 114 विभाग हैं। उसको 'सुरा' कहते हैं। सुरा शब्द पुलिंगी है। स्त्रीलिंगी शब्द है, सूरत – पहली सूरत, दूसरी सूरत, इस प्रकार बोला जाता है। पठन की दृष्टि से कुरान के तीस विभाग किये हैं, उनको 'पारा' बोलते हैं। चौबीस घंटे में कुरान का पूरा पाठ हो इस दृष्टि से दो घटिका में एक विभाग मानकर तीस विभाग किये । लेकिन यह तो पाठ या पारायण करनेवालों के लिए हुआ। ग्रंथ के विषय के अनुसार उसकें 114 प्रकरण हैं।

हमने जो सार निकाला है उसके हमने नौ खंड किये हैं। वे हैं – (1) ग्रंथारंभ, (2) ईश्वर, (3) भक्ति-रहस्य, (4) भक्त-अभक्त, (5) धर्म, (6) नीति, (7) मानव, (8) प्रेषित, (9) गूढ-शोधन । इसका एक संस्कृत श्लोक बनाकर वह हमने पुस्तक के आरंभ में ही दिया है –

आरम्भे, तदनुध्यानं, भक्त्या, भक्तैर्निषेवितम्
धर्मनीती, मनुष्याणां, प्रेषितैर्गुढशोधनम् ।।*

इन नौ खंडों में कुल नब्बे प्रकरण हैं। इनकी सूचि भी हमने संस्कृत श्लोकों में बनायी है। हर खंड के प्रकरणों का एक श्लोक, इस प्रकार ये नौ श्लोक हैं। ये श्लोक मालूम हो तो बहुत सहजता से, चलते-चलते भी उस पर चिंतन हो सकता है। उन श्लोकों को हम थोडे में देखेंगे ।

पहले 'ग्रंथारंभ' खंड में कुल चार प्रकरण हैं –

सप्तकं, सारतत्त्वं च, सारल्येन समर्पितम्,
पुस्तकेऽस्मिंस्ततो भक्त्या शुचिर्भूत्वा पठेदिदम् ।

1 **सप्तकम् :** कुरान में आरंभ में सात श्लोक आते हैं, उनको 'अल्फातिहा' बोलते हैं। 'अल्' तो एक व्यंजन है, जैसा अंग्रेजी में 'दि' है। असल शब्द है 'फातिहा', यानी आरंभ । 'फित्' धातु है। 'इफ्तिताह'** शब्द हमने पूर्व पाकिस्तान की पदयात्रा में चलाया था, वह भी इसी धातु से बना है। 'इफ्तिताह' यानी आरंभ, उद्घाटन । ग्रंथ का आरंभ इन सात श्लोकों से हुआ है। ये श्लोक 'पारा' में नहीं आते, उनसे अलग, स्वतंत्ररूप से आरंभ में दिये हैं और किसी भी मंगल कार्य का प्रारंभ करते समय पहले ये बोले जाते हैं। हमने उसको 'सप्तकम्' नाम दे दिया है। यह शब्द मनुस्मृति में एक वेदसूक्त के लिए आया है – **'एस्वीन् सप्तकं जपेत'** – इन मंत्रों के जप से पापविमोचन होता है। पापविमोचन के लिए वेद में और भी उपाय बताये हैं, जो क्रियारूप में हैं। यह मंत्र जपरूप में है। तो 'फातिहा' को 'सप्तकम्' नाम दे दिया; क्योंकि ये भी सात श्लोक हैं और मंगल कार्य के आरंभ में गाये जाते हैं।

2 **सारतत्त्वं च :** ग्रंथ का सब सार थोडे में इस प्रकरण में दे दिया है। यह भी कहा है कि कुरान का जो सार है, जो विशेष बात है, सारतत्त्व है, वह लेना चाहिए। यह वाक्य कुरान का ही है और ग्रंथ में कहीं बीच में आया है, वह हमने शुरुआत में दिया है। जैसे नामघोषा में कहीं बीच में ही एक घोषा है – "भाल कथा शुनि आछि, मने लैलो सार बाछि", वह हमने वहां से उठाकर नामघोषा-सार के आरंभ में दे दी।

3 **सारल्येन समर्पितम् पुस्तकेऽस्मिन् :** इस ग्रंथ में सरलता से कहा है। समर्पितम् यानी कहा है। समर्पितम् का अर्थ समर्पित करना होता है, परंतु यहां भावार्थ लेना है। यह बिलकुल ठीक है कि कुरान में सरल भाषा में कहा है, समझने के लिए आसान है। देश्यम्, सरलम्, अकाव्यम्, हृद्यम्, आवर्तनीयम् – ग्रंथ मातृभाषा में, सरल भाषा में है, कवि का शब्द नहीं है, हृद्य है और आवर्तनीय अल्फातिहा दिया। यह ग्रंथ का स्वरूप है।

4 **ततो भक्त्या शुचिर्भूत्वा पठेदिदम् :** कुरान में कहा है कि कुरान पढने से पहले शुचिर्भूत होना चाहिए। हाथ-पैर-मुंह धोकर, स्वच्छ होकर कुरान पढने को बैठना चाहिए। इसको 'वुजू' कहते हैं। ऐसे ही अशुचि से नहीं पढना चाहिए। वेद में भी ऐसा ही कहा है। वेदांत (उपनिषद-गीतादि) में ऐसा नहीं है। वेदांत के लिए शुचि, अशुचि का महत्त्व नहीं। वह कभी भी, किसी भी स्थल पर पढ सकते हैं। नामस्मरण के लिए भी इन बातों का महत्त्व नहीं है। लेटे-लेटे, बैठकर, नहाने के पहले, बाद में, किसी भी स्थान पर नामस्मरण कर सकते हैं। गायत्री मंत्र का ऐसा नहीं। गायत्री मंत्र का जप शुचिर्भूत होकर ही करना होता है। कुरान को भी इसी तरह पढना चाहिए। यहां पहला खंड समाप्त होता है।

दूसरा खंड '**ईश्वर**' है, जिसके पंद्रह प्रकरण हैं। इसमें परमेश्वर का वर्णन बहुत व्यापक स्वरूप में आया है। जैसे वेद में आया है, भागवत में आया है। न्यू टेस्टामेंट में इस प्रकार का वर्णन नहीं है। उसमें ईसा मसीह का वर्णन है। उनको भगवान का अवतार माना है। ईसा की मृत्यु के बाद माना गया कि उनका दूसरा अवतार हुआ। वही वर्णन उसमें आता है, लेकिन प्रत्यक्ष भगवान का वर्णन नहीं। कुरान में भगवान का वर्णन बहुत व्यापकता से किया है, जो इस खंड में दिया है। भगवान कैसे हैं ?

एक एवाद्वितीयश्च, प्रकाशो, ज्ञानमेव च,
दयालुर्, दानवान्, कर्ता, सुरूपः सुप्रकेतनः ।
सर्वशक्तिः, स्वतंत्रेच्छो, मनोवाचामगोचरः,
नामभिर्घोषितश्चाविः, प्रार्थनीयः पुनः पुनः ।

5, 6 **एक एवाद्वितीयश्च :** एकमात्र है। ईश्वर एक है। निरपेक्ष है, न जनिता है, न जन्य है, तत्सम कोई है नहीं। इस प्रकरण का यह पहला परिच्छेद है। इसे पढने से पूरा कुरानशरीफ पढने का पुण्य प्राप्त होता है। इस्लाम 'एक ईश्वर' को मानता है। ईश्वर का

अद्वितीय एकत्व इस्लाम की मूलभूत कल्पना है। वैदिक दर्शन भी एक ईश्वर को ही मानता है, लेकिन मानता है कि ईश्वर को संख्या की मर्यादा नहीं हो सकती; परंतु ईश्वर अनेक 'है', अनेक 'हैं' नहीं। ये जो अलग-अलग देवताएं माने हैं, वे भगवान के ही अलग-अलग रूपों, अलग-अलग शक्तियों के प्रतीक के तौर पर माने हैं। जैसे ब्रह्मा उत्पत्ति करनेवाला, विष्णु पालन करनेवाला, महेश (शंकर) संहारकर्ता। ये एक ही भगवान की शक्तियां हैं। इनको भगवान की एक शक्ति मानकर उपासना करते हैं तो वह भगवान की ही उपासना होती है। कुरान में कहा है कि ईश्वर का भागीदार कोई नहीं हो सकता। इसलिए कहा कि चंद्र, सूर्य को प्रणिपात मत करो, परंतु जिसने उनको उत्पन्न किया उसको करो। परमात्मा की दो शक्तियां हैं – उत्पन्न करने की और सत्य का मार्ग दिखाने की – मतलब पिता और गुरु – जिसमें परमात्मा की भागीदारी कोई कर नहीं सकता। गीता में है, 'तू कर्ता का कर्ता और गुरु का गुरु है।'

7 **प्रकाशः** अल्लाह आकाशों और भूमि का नूर – प्रकाश है।

8 **ज्ञानमेव च :** वह सर्वज्ञ है। आपके अंतःकरण के रहस्यों को भी जानता है। वह सर्व-कर्म-साक्षी है – तुम्हारे चित्त की स्थिति, तुम्हारा धर्म-ग्रंथ-पठन और तुम्हारे कर्मयोग का वह साक्षी है। कुरान में कहा है कि गूढ का ज्ञान ईश्वर को ही होता है। वह गूढ-पंचगर्भज्ञ है। अंतिम दिन – कयामत का, बारिश कब बरसेगी इसका, माता के गर्भ का, कल क्या होनेवाला है इसका और किस भूमि पर मृत्यु है इसका ज्ञान उसी को है। एक आयत में बताया है कि वही दृष्टि का द्रष्टा है (दृष्टि उसको देख नहीं सकती)। उपनिषद में भी कहा है, 'दृष्टेः द्रष्टा' है, श्रुति का श्रोता है, मति का मन्ता है इत्यादि । दूसरी एक आयत में है कि वह आदि-अंत, व्यक्त-अव्यक्त सर्व वस्तुओं का ज्ञाता है – इन दो आयतों पर सूफियों का दर्शन खडा है।

9 **दयालुः** : गफूरुर्रहीमुन् । परमात्मा क्षमावान है, करुणावान है। उसकी क्षमा ऐसी होती है जो सुधार करती है। वह दयावान है और दक्ष भी है। फिर एक जगह यह भी बताया है कि परमात्मा उनको क्षमा नहीं करेगा, जो परमात्मा के साथ किसी की भागीदारी मानेंगे, क्योंकि ईश्वर एक है।

10-15 वह **दानवान** हैं, इसमें ईश्वरीय देनें बतायी हैं। वह **कर्ता** – सृष्टिकर्ताहै। वह **सुरूपः** है। ईश्वर की रचना सुंदर है। वह **सुप्रकेतनः** है। इसमें ईश्वरीय संकेत, ईश्वरीय चिह्न बताये हैं। ईश्वर नाना रंग-निर्माता है। श्वेताश्वतर उपनिषद में कहा है, ईश्वर की प्रकृति कैसी है? तिरंगी, लोहित-शुक्ल-कृष्ण-वर्णाः – रज-सत्त्व-तम । गीता में है, 'नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च' । वह **सर्वशक्तिमान** है। वह **स्वतंत्रेच्छा** – इच्छा-समर्थ है। ईश्वरीय इच्छा सार्वभौम है। वह सत्ता-प्रतिष्ठा-ल्याणदाता है ।

16 **मनोवाचामगोचरः** मन, वाणी को अगोचर, मालूम न होनेवाला है। अवर्णनीय है। उसके वर्णन के लिए भूमि पर के सब वृक्षों की कलम और सात समुद्रों की स्याही भी पूरी नहीं पडेगी। हमने इस परिच्छेद को शीर्षक दिया है, 'असितगिरिसमं स्यात्...'। इस प्रकरण में ईश्वर के महासन (सिंहासन) 'आयतुल्कुरसी' का वर्णन आता है ।

17 **नामनिर्घोषितः** : इसमें भगवान के नाम हैं। जैसे नामस्मरण के लिए हम भिन्न-भिन्न नाम लेते हैं – विष्णुसहस्रनाम है, वैसे ही इस्लाम में भगवान के 99 नाम बोले जाते हैं। उनमें से 81 नाम कुरानशरीफ में ज्यों के त्यों आये हैं और 18 कुरान में आये शब्दों से बने हैं। उन्हें 'अस्मा-उल् हुस्ना' ईश्वर के सुंदर नाम कहते हैं। उनमें से कुछ नाम कुरान-सार के इस प्रकरण में ये हैं।

18 **आविः** : साक्षात्कार। इसमें मूसा को हुए साक्षात्कार का और मुहम्मद पैगंबर को हुए साक्षात्कार का वर्णन है।

19 **प्रार्थनीयः पुनः पुनः** : ऐसा प्रभु प्रार्थनीय है। परमात्मा कि बार-बार प्रार्थना करें।

तीसरा खंड '**भक्ति-रहस्य**' है, जिसके नौ प्रकरण हैं –

उपासनोपदिष्टेयं, या धृता भौतिकैरपि,
निष्ठा, त्यागस्तपश्चर्या, धैर्यं, मद्भक्तिलक्षणम् ।
सत्संगः, क्षणिको भावो, वैराग्यं च तदुद्भवम् ।

20 **उपासनोपदिष्टेयम् :** भक्ति के दो रूप हैं। एक क्रियारूप होती है,उसको उपासना कहते हैं। जप, तप, पूजा, आरती, ये क्रियाएं हुईं। इसी पर से भक्ति पहचानी जाती है। यह उपासना है। दूसरा स्वरूप है गुणविषयक । यह आंतरिक भक्ति हुई। भगवद्गीता में भगवान ने भक्त के लक्षण कहे हैं, गुण ही हैं, जैसे जो दृढनिश्चयी है, जो संन्यासी है, वगैरह। भक्ति में गुणविकास तो जरूरी है है । यहां, कुरान में क्रियाएं कही हैं।

दूसरी बात, '**उपासनः उपदिष्ट इयम्**' । 'उपदिष्ट' यानी उपदेशित, कथित । जो उपासनाएं उपदिष्ट होती हैं अर्थात् जो शास्त्रों में कही गयी हैं, जो कुलपरंपरा में चली हैं, ऐसी उपासनाएं करनी चाहिए। अलग अपनी उपासनाएं चलायेंगे, तो वह अहंकार होगा। पंद्रह दिन में एक बार उपवास करना है, तो वह एकादशी के दिन न करते हुए त्रयोदशी के दिन करने में क्या लाभ ? कल विजयादशमी थी, तो हमने शक्तिपूजा को लेकर ग्रामदान और ग्राममाता की बात समझायी। क्योंकि यह पूजा समाज में मान्य है। अब दूसरी कुछ पूजा, जो इस समाज में मान्य नहीं, लेकर बोलते तो चलता नहीं। इसलिए, 'उपासनः उपदिष्ट इयम्' ।

21 **या धृता भौतिकैरपि :** 'या धृता' यानी धारण करती है, पकडती है 'भौतिकैरपि' – भौतिक सृष्टि भी। यह कुरान की विशेषता है। कुरान में कहा है कि संपूर्ण सृष्टि परमेश्वर की उपासना कर रही है। मेघ गर्जना जप कर रही है। शुपक्षी स्तवन करते हैं। सृष्टि का जप

अगम्य भाषा में हो रहा है। परछाइयां भी प्रणिपात कर रही हैं। संपूर्ण सृष्टि और कतिपय मनुष्य प्रार्थना करते हैं। बाकी सबके पीछे 'सब' शब्द लगा, लेकिन मनुष्य के पीछे 'कुछ' शब्द लगाया। ऐसा नहीं कहा कि सब मनुष्य करते हैं।

22 **निष्ठा :** परमेश्वर पर आस्था । उसके सिवा भक्ति हो नहीं सकती। जीवन-मरण सब परमेश्वर के लिए है। ज्ञानदेवमहाराज ने कहा, 'आम्ही हरीचें भूषावयालागीं' – हम हरि का भूषण बनने के लिए ही हैं। निष्ठा में ईश्वर की इच्छा की शरण जाने को कहा। कुरान में कहा है कि ऐसा नहीं बोलना चाहिए कि 'मैं कल यह करूंगा...', लेकिन कहना चाहिए कि 'यदि ईश्वर की इच्छा हो तो कल यह हो सकेगा' – 'इन्शाअल्लाह' !

23 **त्यागः** : भक्ति के लिए त्याग बहुत आवश्यक है। त्यागवृत्ति नहीं होगी, तो भक्ति नहीं हो सकेगी। यह वृत्ति नहीं होगी तो आसक्ति होगी और भक्ति में बाधा आयेगी ।

24 **तपश्चर्या :** दुर्जनों से आघात होते हैं, सुहृद्जनों का वियोग होता है, वह सहन करने की शक्ति चाहिए – तितिक्षा हिए। भगवान भक्त की सब प्रकार से कसौटी लेता है। गरीबी भी कसौटी के लिए देता है अमीरी भी कसौटी के लिए देता है।

25 **धैर्यम् :** धैर्य का सर्वसाधारण अर्थ होता है हिम्मत रखना। लेकिन सिर्फ इतना ही उसका अर्थ नहीं है। हिंदी-गुजराती में शब्द है धीरज। उसका अर्थ सहनशक्ति भी होता है। मराठी में कहते हैं, 'धीर धरा' । वह भी इसी अर्थ का है । वह शब्द हमने चलाया। भक्ति का अर्थ है सहन करें, हिम्मत रखें, शांति रखें।

ये '**मद्भक्तिलक्षणम्**' – मेरी भक्ति के लक्षण हुए। भक्ति के साथ-साथ दूसरी भी कुछ बातों कि जरूरत होती है, जो यहां बतायी हैं।

26 **सत्संगः** : सत्संगति का महत्त्व तो हम मानते ही हैं । शिक्षा-प्रणाली में सबसे ज्यादा महत्त्व सत्संगति को देना चाहिए। नयी तालीम, पुरानी तालीम, बुनियादी तालीम,

उद्योग, इन सबसे ज्यादा महत्त्व सत्संगति का है। एक बार हमसे पूछा गया कि शिक्षा की व्याख्या क्या है, तो हमने जबाब दिया, सत्संगति ।

कुरान में इसके संगठन का जिक्र आता है। कहा है कि सज्जनों का समाज बनाओ । मूलतः इसका उद्देश्य अच्छा ही रहता है। परंतु आगे जाकर उसमें दोष पैठ जाते हैं। चर्च भी एक संगठन ही है । हम संगठन को तो नहीं मानते, लेकिन ऐसे ही दो-चार लोग भक्ति के लिए, ईश्वरविषयक चर्चा के लिए इकट्ठा हो जायें तो अच्छा ही है। ऐसे भी, भक्तों को सत्संगति और किस चीज के लिए जरूरी है ? साधारण मनुष्य को संस्कार के लिए सत्संगति चाहिए। लेकिन भक्तों को तो इसी लिए चाहिए कि परस्पर चर्चा हो, सहचिंतन हो ।

27 **क्षणिको भावो :** यह सब, संसार की शोभा क्षणिक (क्षणभंगुर) है, मिथ्या है, यह भाव होगा तभी भक्ति होगी। अन्यथा आसक्ति जायेगी नहीं। यह भाव आ जाये कि यह सब क्षणिक है, तो विराग – वैराग्य कठिन नहीं होगा, अपने आप आ ही जायेगा। लुकमान की कहानी है कि उनकी जिंदगी हजार साल की थी। वे एक झोंपडी में रहते थे। लोग पूछते थे कि अच्छा मकान बनाओ, तो कहते थे, क्या जरूरत है अच्छे मकान की, यह सब तो क्षणिक है।

28 **वैराग्यं च तदुद्भवम् :** इसी में से वैराग्य पैदा होता है। कुरान में शैतान से सावधान किया है – शैतान की टोली से सावधान रहो। वह तुम्हारा शत्रु है तो तुम भी उसे शत्रु समझो – 'विध्येनमिह वैरिणम्' ।

चौथा खड '**भक्त-अभक्त**' का है। भक्ति के लक्षण के बाद भक्त के लक्षण भी कहे हैं। इसको अलग स्वतंत्ररूप से देने की जरूरत नहीं थी। लेकिन कुरान में ये लक्षण बहुत

विस्तार से दिये हैं, इसलिए हमने भी उसका एक स्वतंत्र खंड कर दिया और उसमें अभक्त के लक्षण भी जोड दिये। इस खंड में दस प्रकरण हैं –

लक्षण्याः, प्रार्थनावन्तो, नैष्ठिका, धैर्यशालिनः,
अहिंसका ये मद्भक्ता, मद्दूतैरभिरक्षिताः ।
नास्तिका, भ्रांत-चित्तास्तु, मोघा, निरयगामिनः ।

29 **लक्षण्याः** : शंकराचार्य ने भक्त के दस लक्षण दिये हैं। कुरान में भी भक्त के दस लक्षण दिये हैं। मुसा ने भी दस आज्ञाएं दी थीं। वही ईसाइयों ने आगे चलायीं । बौद्धों का जो पंचशील है, वह भी इन आज्ञाओं की पहली पांच आज्ञाएं हैं। जब वे समूचे समाज के लिए होती हैं, तब स्थूल होती हैं। जैसे, अहिंसा यानी किसी को मारना नहीं, सत्य यानी झूठी गवाह देना नहीं, तो सत्य-अहिंसा का पालन हो गया। लेकिन जब व्यक्ति के लिए, भक्त के लिए कही जाती हैं, तब वे सूक्ष्मरूप में ली जाती हैं। ऐसे भक्तों के कुछ लक्षण इस प्रकरण में हैं।

30-34 **प्रार्थनावन्तो, नैष्ठिका, धैर्यशालिनः** : ये सब भक्ति के लक्षणों में आ ही गया है, इसलिए इनके बारे में कहने की अब जरूरत नहीं। एक और लक्षण बताया, **अहिंसकः** । भक्त को पूर्ण अहिंसक होना ही चाहिए। वे क्षमाशील होंगे, अन्योन्य विमर्श करनेवाले होंगे और अच्छाई के द्वारा बुराई को दूर करनेवाले – जोडनेवाले – होंगे। **ये मद्भक्ता** – ये मेरे भक्त हैं। जिनके ये लक्षण हैं, वे मेरे भक्त पहचाने जायें। **मदूद्तैरभिरक्षिताः** । ऐसे भक्तों को आशीर्वाद दिया है कि उन पर शैतान का बस चलेगा नहीं। इन भक्तों का मेरे दूतों के द्वारा रक्षण होता है। भगवान के भक्तों का रक्षण भगवान अपने दूतों के द्वारा करते हैं।

35-38 ये भक्त के लक्षण कुरान में कहे हैं। और हमने उसके आगे अभक्त के लक्षण जोड दिये । **नास्तिकाः** – परमेश्वर पर जिनकी निष्ठा नहीं। अंधश्रद्धा होती है, वैसी अंध

अश्रद्धा भी होती है। ये अंध अश्रद्ध हैं। **भ्रांत-चित्तास्तु** – जिनका चित्त भ्रांत है। **मोघा** यानी व्यर्थ; उनका जीवन व्यर्थ है। **निरयगामिनः** – वे नरक में जायेंगे। उनकी गति नरक की तरफ है।

चौथे खंड की समाप्ति के बाद एक तरह से ग्रंथ का पूर्वार्ध पूरा होता है। आगे के पांच खंडों को उत्तरार्ध कह सकते हैं। पांचवां खंड '**धर्म**' का है, जिसमें तीन प्रकरण हैं –

धर्म-निष्ठा, सहिष्णुत्वं, लोकसंग्रह-योजना ।

39 **धर्म-निष्ठा :** हर धर्म की निष्ठाएं होती हैं। इस प्रकरण में इस्लाम की निष्ठाएं दी हैं। इसमें धर्म का सार बताते हुए दो शब्द आते हैं, जो इस्लाम में निष्ठापूर्वक माने जाते हैं – खैरात और जकात । खैरात यानी ईश्वर के प्रेम से धन देना अनाथों को, याचकों को आदि। और जकात यानी नियतदान। जैसे हम कहते हैं कि अपनी आमदनी का एक हिस्सा संपत्तिदान में दो। इसमें कहा है कि ईश्वरशरणता के अतिरिक्त कोई धर्म नहीं है। 'दीनइलाही' यानी भागवत धर्म !

40 **सहिष्णुत्वम् :** धर्म-सहिष्णुता । इसमें सहनशीलता की बात नहीं है, यह आध्यात्मिक वस्तु है। कुरान में माना है कि सब धर्म समान हैं। कहा है कि हम रसूलों में किसी में कोई भेद नहीं करते। ईश्वर पर श्रद्धा रखें और रसूलों में भेद न करें। रसूल यानी भगवान का संदेश लानेवाला। और कहा है कि अल्लाह ने हर भाषा के लिए रसूल भेजा है। भगवान के सब रसूल समान हैं। लोगों ने धर्म को काटकर टुकडे-टुकडे कर लिये, परंतु तुम्हारा – भक्तों का एक समाज है और मैं तुम्हारा प्रभु हूं। फिर यह भी कहा है कि धर्म के विषय में जबरदस्ती नहीं हो सकती ।

41 **लोकसंग्रह-योजना :** शंकराचार्य ने लोकसंग्रह की व्याख्या की है – **'लोकस्य उन्मार्गे प्रवृत्ति निवारणं लोकसंग्रहः'** । लोग उन्नत मार्ग में जायें, उसमें जो बाधाएं होंगी उनका निवारण करना, लोगों को उन्नति के मार्ग में जाने के लिए मदद करना । उसके लिए कुरान में जो बातें बतायी हैं, उनको इस 'धर्म-विधि' प्रकरण में डाला है। निष्ठापूर्वक प्रार्थना, नियत दान बताया। पंचनमाज का बहुत महत्त्व माना गया है। आहार के बारे में बताया है कि प्रभुस्मरणपूर्वक आहार-सेवन करें। इस प्रकार कुछ धर्म-विधि बतायी है।

फिर आता है **'नीति-विचार**' का खंड (छठा)। नीति-विचार यानी जीवन के लिए अनिवार्य नियम, जिसको चारित्र्य कहते हैं। इसमें अठारह प्रकरण हैं।

सत्य-धीरो, वदेद् वाक्यं सत्यं, शिवमनिंदनम्,
न्यायं रक्षेत्, परं न्यायात् करुणैव गरीयसी ।
अहिंसायां दृढश्रद्धा, स्नेहेन सहजीवनम्,
पापैरसहकारश्च, प्रतीकारश्च संयतः ।
अस्वादो, वासनाशुद्धिरस्तेयं, मित-संग्रहः
दानं, शिवानुसन्धानं, नीतिराचार-पालनम् ।

42 **सत्य-धीरः** : हमने एक शब्द बनाया – सत्यग्राही। गांधीजी का शब्द था सत्याग्रही, यानी दुनिया में जो सत्य है उसका आग्रह रखनेवाला । सत्य का आग्रह रखना चाहिए। और आसपास जो सत्य है, दुनिया में जगह-जगह जो सत्य पडा है, उसका ग्राही – ग्रहण करनेवाला – होना चाहिए। वह है सत्यग्राही। सत्याग्रही भी हो और सत्यग्राही भी हो। इन दोनों को मिलाकर हमने यह शब्द लिया – सत्य-धीरः । इसमें चार बातें बतायीं। सत्यासत्य में तम-प्रकाशवत् विरोध है। जलफेनन्यायेन उसमें विवेक करना चाहिए। सत्य

अ-मिश्र हो – सत्यासत्य की मिलावट न करें। और, सत्य हमारी वासनाओं के अनुसार नहीं चलता – 'न वासनानुसारी ।'

43 **वदेद् वाक्यं सत्यम् :** वाक्शुद्धि की बात । वाणी में सत्य होना चाहिए और सत्य होते हुए भी वाणी चुभनेवाली न हो। अन्यथा वाणी जैसे जोडनेवाली होती है वैसे तोडनेवाली भी होती है। कभी विनोद में हम कुछ बोल देते हैं, वह चुभनेवाला होता है और उससे दिल टूट जाते हैं। ऐसी वाणी न हो। ऐसी वाणी बोले, जिससे आपस में मेलजोल, सुलह हो और जो सत्य के साथ जोडनेवाली हो ।

44 **शिवम् :** वाणी कल्याणकारी हो। कहा है कि ईश्वर का डर रखकर सीधी बात कहो ।

45 **अनिंदनम् :** हम रोज प्रार्थना में एकादशव्रत बोलते हैं। एकादश यानी ग्यारह। उसमें हमने एक और बारहवां व्रत जोड दिया है – अनिंदा-व्रत। कुरान में भी यह बात कही है कि निंदा न करो। यानी दोषों का उच्चारण न हो। दोषों का उच्चारण करने से वे जाते नहीं, बल्कि वाणी में पैठ जाते हैं। इसलिए गुणग्राहक वृत्ति हो। दोषों का दर्शन होने पर भी वाणी में न लायें। दोषों के विषय में मौन रहने से ही लाभ होता है। गुणों को ही बार-बार बोलें।

46 **न्यायं रक्षेत् :** यह मुहम्मद पैगंबर की विशेषता है। गुण-दोषों का ठीक मूल्यांकन हो और उसके अनुसार न्याय मिले। परंतु,

47 **परं न्यायात् करुणैव गरीयसी :** न्याय होते हुए भी न्याय के ऊपर करुणा हो। न्याय होने के बाद भी आखिर करुणा की दृष्टि से देखा जाये। किसी मां का लडका मारा गया है, तो कत्ल करनेवाले को सजा होनी चाहिए, यह न्याय हुआ। लेकिन मरनेवाला तो मर गया, अब मारनेवाले को मारकर क्या लाभ ? यह करुणा की दृष्टि अगर मां में आ जाये,

तो वह भावना ज्यादा श्रेष्ठ होगी। दोषों का ठीक मूल्यांकन होने पर भी करुणा की दृष्टि होनी चाहिए।

48 **अहिंसायां दृढश्रद्धाः** अहिंसा पर दृढ श्रद्धा हो। यहां क्षमा और ईश्वर के आश्रय की बात कही है। क्षमा करने की वृत्ति का विकास करते जायें। क्या तुम नहीं चाहते कि ईश्वर तुमको क्षमा करें? ईश्वर क्षमावान, करुणावान है। इसलिए तुम भी क्षमावान बनो। फिर बताया है कि बुराई का प्रतिकार भलाई से करें। और प्रभु के आश्रय की मांग करें।

49 **स्नेहेन सहजीवनम्:** जीवन में स्नेह हो और स्नेह के द्वारा, स्नेह के साथ सहजीवन हो । सहजीवन में एक-दूसरे को सत्य और धीरज का बोध देने की बात आती है। कुरान में दो शब्द आते हैं – हक और सब्र – सत्य और धीरज । सहजीवन में स्नेह, सत्य और धीरज की आवश्यकता होती है।

50 **पापैरसहकारश्च :** सहजीवन में सत्कृतियों और संयम में, सत्य और धीरज में एक-दूसरे की सहायता करेंगे, लेकिन पाप के साथ असहकार हो । जहां पाप देखा वहां असहकार किया। कोई पाप करने को अनिवार्य कहे, तो भी उसमें असहयोग करें।

51 **प्रतिकारश्च संयतः** : संयम से प्रतिकार हो। कुरान में माना गया है कि प्रतिकार होना चाहिए। ऐसे तो अहिंसा को श्रेष्ठ माना है, जैसे कि पहले बतलाया। फिर भी रक्षण के लिए प्रतिकार को मान्यता दी है। परंतु प्रतिकार संयम से हो। मतलब यह कि शस्त्रास्त्र से प्रतिकार हो तो भी वह संयत हो, मर्यादा के साथ हो ।

यहां तक जीवन के लिए – समाज के और व्यक्ति के जीवन के लिए आवश्यक बातें बतलायीं। इसके आगे व्यक्ति की शुद्धि के लिए आवश्यक बातें बताते हैं।

52-59 **अस्वाद :** इस विषय में कुरान में एक ही वचन मिला। मूसा का वचन है। लोगों ने मूसा से शिकायत की कि हम एक ही प्रकार के अन्न से ऊब गये तो अच्छी-अच्छी

चीजें दो। मूसा ने कहा, तुम श्रेष्ठ चीजों की जगह कनिष्ठ चीजें मांग रहे हो, तो किसी शहर में जाओ। वे वहां गये। वहां वे गुलाम बन गये और ईश्वर का उन पर कोप हुआ। **वासना-शुद्धिः** खास कर विषय-वासना न हो। कुरान में ब्रह्मचर्य की अपेक्षा नहीं है, लेकिन ब्रह्मचर्य के लिए आदर है। संन्यास के बारे में भी यही भूमिका है। ब्रह्मचर्य के लिए आदरयुक्त वचन जहां-जहां मिले, वे सब इकट्ठा कर यहां दे दिये हैं। ईश्वर का स्मरण रखकर काम-नियमन करने की बात कही है। **अस्तेयम् :** चोरी न करना, इतना ही नहीं; शुद्ध आजीविका की बात कही है। इसलिए सूद लेने का भी निषेध किया है। कहा है, धन व्याज पर मत दो, दान में दो। हम कहते हैं, सौ रुपये उधार दिये तो वापस लेते समय 95 ही वापस लो । गलत रास्ते से की हुई कमाई को शैतान की कमाई कहा है और 'मा गृधः' भी कहा है। **मित-संग्रहः** : कम से कम वस्तुओं का संग्रह हो। जिस वस्तु के बिना चल सकता है, ऐसी वस्तु संग्रह में न रहे। **दानम् :** यह विषय पहले भी आ गया है। **शिवानुसंधानम् :** शिव के साथ सदा अनुसंधान हो । सृष्टि में, जीवन में जहां-जहां शिव है, मंगल है, उसके साथ संबंध हो, अनुसंधान हो । गीता-प्रवचन में इस शुभदृष्टि का विवरण हमने किया है। ध्यानयोग के लिए इसकी जरूरत होती है। **नीति :** मुहम्मद पैगंबर के समय मुसलमानों के लिए नीति-नियम बनाये गये थे, उनका समावेश इसमें है। **आचारपालनम् :** हर देश, हर प्रदेश के शिष्टाचार – सभ्यता के रिवाज होते हैं। जैसे असम में है कि लोग बैठे होंगे और बीच में से जाना पडे तो झुककर जायें, कोई खाना खाता हो तो वहां से निकल जायें। ऐसे शिष्टाचार का पालन होना चाहिए। ऐसी बातें उसमें दी हैं, उनमें महा-निषेध की बात भी है। इनमें से कई बातें हमारे नित्य पठनीय 'एकादश-व्रत' में आती हैं।

अब आता है '**मानव**' खंड। इसमें मनुष्य का आज का स्वभाव बताया है यह कुरान की विशेषता है। अगर मनुष्य का विकास चाहते हो, तो प्रथम उसके चित्त का स्वरूप समझ लेना चाहिए। उसके बिना उसके विकास में मदद नहीं हो सकती। इसमें मनुष्य का आज

का चित्तस्वरूप दिया है, यानी मानसविज्ञान । दुनिया के सभी मनोवैज्ञानिक कमबेशी मात्रा में इसको मानेंगे। इसके पांच प्रकरण हैं।

वैशेष्येऽपि मनुष्याणां, दौर्बल्यं, पाप-वश्यता,
निर्मातरि कृतघ्नत्वं, नास्तिकास्तिकयोर्भिदा ।

60 **वैशेष्येऽपि मनुष्याणाम् :** मनुष्य की विशेषता है। अन्य प्राणियों से मनुष्य विशेष है। वैदिक धर्म ने भी यह माना है। भागवत में कहा है, भगवान ने अनेक प्राणि पैदा किये लेकिन उनको संतोष नहीं हुआ। आखिर में जब सुंदर नरदेह पैदा की, तब वे संतुष्ट हुए, क्योंकि उसमें ब्रह्म के दर्शन की शक्ति हैं। **ब्रह्मावलोकधिषणं मुदमाप देवः** । यही बात नामघोषा में कही है। '**कत महादुःखे पुण्य करि, अपवर्गयोग्य नरतनु पाया पृथिवीत**' – कई युगों तक पुण्य किया, कई प्रकार के जन्म पाये, पुण्यकर्म किये और फिर मोक्षप्राप्ति के लिए योग्य नरदेह पायी। मतलब, सभी ने यह माना है कि अन्य प्राणियों से मनुष्य की विशेषता है।

वैदिक धर्म में कहा है कि मनुष्य बाकी प्राणियों से श्रेष्ठ है, तो उसका कर्तव्य होता है कि वह बाकी प्राणियों की रक्षा करे। अन्य धर्मों में यह बात शायद ही मिलेगी। सेंट पाल ने कहा है कि तुम्हारे भाई को तकलीफ होती हो तो मांस खाना छोड दो, परंतु मांसाहार को निषिद्ध नहीं माना। कुरान में भी मनुष्य का अन्न क्या है बताते हुए उसमें मांसाहार का समावेश नहीं है, परंतु मांसाहार-निषेध भी नहीं है। हिंदुस्तान में मांसाहार-मुक्ति के सामाजिक प्रयोग हुए। आज हमारे देश में अनेक जमातें पूर्णरूप से शाकाहारी हैं और मांसाहार को प्रतिष्ठा नहीं है।

कुरान में मनुष्य की विशेषता बतायी कि वह अत्युच्च बन सकता है और अति नीच भी बन सकता है। और मनुष्य-जन्म का हेतु बताया कि हमने मनुष्य को इसलिए पैदा किया कि वह हमारी भक्ति करें। लेकिन यह विशेषता होते हुए भी उसमें दोष हैं। कौनसे दोष ?

61 **दौर्बल्यम्:** वह दुर्बल है। उसकी दुर्बलता का काफी विस्तार से वर्णन किया है। मनुष्य अनुभव से पाठ नहीं लेता, दोलायमान है, आत्मश्लाघी है, लालची है। एक आयत में बताया है कि वह जब आपत्ति होती है तब मांगता है और जब संपत्ति होती है तब देता नहीं। इसको हमने शीर्षक दिया है, 'विषादी दीर्घसूत्री'। फिर वह संवेदनहीन है और बुराई की तरफ जल्दी बढता है।

62 **पाप-वश्यता:** दुर्बल होने के कारण वह पापाभिमुख है। उसमें पापप्रवणता है।

63 **निर्मातरि कृतघ्नत्वम्:** मुहम्मद पैगंबर ने यह मनुष्यों के दोषों में विशेष दोष कहा है। मनुष्य उसके निर्माता के प्रति, परमेश्वर के प्रति कृतघ्न है। वह भगवान की कृपा का स्मरण नहीं रखता, और जब भगवान की कृपा से उसके कष्ट दूर होते हैं तब मानने लगता है, 'अस्माकं अयं महिमा' ।

64 **नास्तिकास्तिकयोर् भिदा:** कृतघ्नता का इतना वर्णन करने पर भी फिर कह दिया कि सबके सब ऐसे नहीं होते। जो नास्तिक होते हैं वे परमेश्वर से कृतघ्न होते हैं और जो आस्तिक हैं वे कृतघ्न नहीं होते। यहां एक और बात कही कि जो भलाई पर विश्वास रखते हैं, वे आस्तिक हैं और जो भलाई पर विश्वास नहीं रखते, वे नास्तिक हैं।

इसके बाद का खंड है '**प्रेषित**' – रसूल। इसके आधे हिस्से में रसूलों के बारे में कहा है और बाद के आधे हिस्से में मुहम्मद पैगंबर के बारे में। पहले आधे हिस्से में नौ प्रकरण हैं–

साधारणा, मनुष्यास्तु, धीरा ये, तस्मृतिः शुभा,

अन्न प्रकाशिताः केचित्, सन्त्यन्येऽप्यप्रकाशिताः ।

65 **साधारणः** : प्रेषित सभी मनुष्यों के लिए समान होते हैं, यानी सभी का उन पर समान अधिकार होता है। मतलब वे 'कामनवेल्थ' हैं। ऋग्वेद में आता है, **इंद्रसाधारणस्तु** ।

66 **मनुष्यास्तुः** प्रेषित मामूली आदमी जैसे ही होते हैं। लेकिन वे ईश्वर के कृपापात्र होते हैं।

67 **धीरा येः** इसमें प्रेषितों के गुणविशेष दिये हैं।

68 **तत्स्मृतिः शुभाः** प्रेषितों की कहानियां कहने का हेतु इसमें बताया है। उनके द्वारा तुम्हें सत्य मिलेगा, उपदेश मिलेगा।

69-72 **अन्न प्रकाशितः केचित्ः** इसमें कुछ अन्य प्रकाशित रसूलों की बातें कही हैं। नूह, इब्राहिम, मूसा और ईसा के बारे में कहा है।

73 **सन्त्यन्येऽप्यप्रकाशिताः** : अंत में मुहम्मद पैगंबर को कहा है कि हमने तुम्हारे पहले बहुत से रसूलों को भेजा, जिनमें से कुछ का निर्देश हमने किया और कुछ का नहीं किया है। मतलब, अरबस्तान में जो रसूल हो गये, उनके अलावा और देशों में भी हो गये हैं, जिनका निर्देश नहीं किया है। कुरान में इससे पहले भी एक जगह आ गया है कि भगवान कहते हैं कि हमने हर भाषा के लिए प्रेषित भेजा है। सभी भाषाओं के यानी धर्मों के प्रेषितों के लिए समान भाव है।

इसके आगे के छः प्रकरणों में मुहम्मद पैगंबर के जीवन के बारे में कहा है। पूरा जीवन तो नहीं है। लेकिन जगह-जगह पर उनके ऐसे वचन हैं, जिनमें उनके जीवन की बातें मिलती हैं, उन्हें यहां इकट्ठा रख दिया है। महापुरुष आवश्यकता होने पर अपने बारे में इस

तरह कहा करते ही हैं। कुछ ऐसे भी होते हैं, जो नहीं कहते हैं। जैसे शंकराचार्य ने अपने कुल ग्रंथों में अपने बारे में कुछ भी कहा नहीं है। तुकाराममहाराज ने उनके अभंगों में उनके अपने बारे में बहुत कुछ कहा है। वे सारे वचन अगर इकट्ठा करेंगे तो उनका एक जीवन-चरित्र बन सकेगा। ऐसी दो वृत्तियां महापुरुषों में दिखायी देती हैं। जो आध्यात्मिक और सामाजिक क्रांतिकारी होते हैं, वे अक्सर अपने जीवन के उदाहरण मार्गदर्शन के लिए दिया करते हैं। मुहम्मद पैगंबर आध्यात्मिक और सामाजिक क्रांतिकारी थे।

ऐसे, माना गया है कि कुल कुरान भगवान के देवदूत ने मुहम्मद पैगंबर को कहा है। कुरान की पूरी रचना इसी तरह की है। लेकिन मुहम्मद पैगंबर के वचन भी उसमें आते हैं। उनके जीवन की पूरी कहानियां दूसरे एक ग्रंथ में इकट्ठा हैं, जिसको हदीस कहते हैं। परंतु हदीस की अपेक्षा कुरान पर ज्यादा विश्वास रखा जाता है। वैदिक धर्म में भी ऐसा ही है। स्मृति से ज्यादा विश्वास श्रुति पर है। जो स्मृति श्रुति के अनुसार है, उसे मान लिया है और बाकी स्मृतियों से श्रुति को ज्यादा प्रमाण माना। वही बात यहां है। कुरान श्रुति है और हदीस स्मृति ।

मुहम्मद पैगंबर को परमात्मा का दूत मानते हैं। वह वचन प्रसिद्ध है – **लाइलाहइलल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** । इसका अर्थ है, 'ईश्वर के सिवा कोई भजनीय नहीं और मुहम्मद दूत मात्र है।' यानी वे भगवान के दूत हैं, अल्लाह के रसूल हैं, अल्लाह नहीं। लेकिन अक्सर इसका अर्थ यह किया जाता है कि मुहम्मद ही एक रसूल हैं। उस वाक्य का ऐसा अर्थ नहीं है, वैसा अर्थ करना गलत है। कुरान में तो सब रसूलों को माना है। तो यहां भी मुहम्मद एक ही रसूल हैं, ऐसा नहीं कहा है, मुहम्मद केवल रसूल है, ऐसा कहा है। उनका वर्णन किया है –

प्रातिभं, चेश्वरादेशो, घोषणा, गुण-संश्रयः
कार्यं पंचविधं यस्य, स चाशीर्वादमर्हति ।

74 **प्रातिभम्:** जिसकी प्रतिभा को ईश्वर का साक्षात्कार हुआ है, ईश्वर का स्पर्श हुआ है, वह प्रातिभम् । मुहम्मद पैगंबर को ईश्वर का साक्षात्कार हुआ था और ईश्वर की वाणी सुनायी दी थी।

75 **ईश्वरादेशो :** जिसको ईश्वर का आदेश हुआ है। मुहम्मद पैगंबर को ईश्वर से उपदेश मिला और फिर आदेश हुआ। उनकी एक कहानी कही जाती है। देवदूत ने उनके सामने परचा डाला और कहा, 'इक्रा' – पढ । भगवान का संदेश था। पर मुहम्मद अनपढ थे। उन्होंने कहा कि हे अल्लाह, मैं पढना जानता नहीं। तो भगवान को खुद आकर कहना पडा। अनपढ होने का फायदा हुआ। अगर पढ सकते तो भगवान सामने नहीं आते। तो भगवान ने उन्हें बोध दिया और कहा कि यह संदेश निर्भयता से लोगों तक पहुंचाओ। इसमें तुम्हें कष्ट झेलने पड़ेंगे, तो कष्ट झेलने की सतत तैयारी रखो। इसको हमने शीर्षक दिया है – **मामनुस्मर युध्य च** ।

76 **घोषणा:** इसमें पंच आदेश हैं।

77 **गुण-संपदा:** इसमें मुहम्मद पैगंबर की विशेषताएं बतायी हैं। एक जगह कहा है कि तुम कहो कि परमात्मा पर और उसके भेजे हुए अनपढ रसूल पर श्रद्धा रखो, क्योंकि वह परमात्मा पर और उसकी वाणी पर श्रद्धा रखता है। 'अनपढ' भी विशेषता थी। मुहम्मद पैगंबर को जब साक्षात्कार हुआ और भगवान की वाणी सुनायी दी, तब वे भयभीत हो गये। तो भगवान ने उनको दृढ बनाया।

78 **कार्य पंचविधं यस्य:** इसमें उनका मिशन बताया है। उनको करुणा का दूत कहा है और फिर पांच प्रकार के कार्य बताये हैं।

79 **स चाशीर्वादमर्हति:** मुहम्मद सबके आशीर्वाद चाहते हैं। कहते हैं कि हे श्रद्धावानो, मुहम्मद को आशीर्वाद दो कि उसे शांति और शरणता प्राप्त हो। यह नम्रता है।

जिनके पास लोग आशीर्वाद के लिए जाते हैं, वे आप सबके आशीर्वाद की याचना कर रहे हैं। बहुत बडी बात है। मैं मानता हूं कि यह मुहम्मद पैगंबर की सबसे बडी विशेषता थी। यहां मुहम्मद पैगंबर के बारे में कथन खतम होता है।

अब आखिरी खंड '**गूढ-शोधन**' । इसमें ग्यारह प्रकरण हैं –

विश्वं, जीवं, परात्मानं, नैव तर्केण योजयेत्,
श्रद्दधानः संविधानं, विपाकं, मरणोत्तरम् ।
समुत्तिष्ठ, दिनं पश्य, विविच्य विविधा गतीः,
तुष्टात्मन् प्रविशोद्यानं, प्राप्नुहि प्रेम चैश्वरम् ।

ये सब विषय करीब सभी धर्मों में आते हैं। वह एक गूढ है और इसलिए हमने उसको 'गूढ-शोधनम्' नाम दे दिया। वैदिक धर्म में इस विषय पर बहुत ज्यादा जोर दिया है। जीव, जगत् और जगदीश; जीव, विश्व और परमात्मन्, इसके बारे में कहा है। फिर विषय आते हैं मृत्यु, पूर्वजन्म, पुनर्जन्म, स्वर्ग, नरक – मृत्यु के पश्चात् यानी मरणोत्तर जीवन, जिसको सांपराय कहते हैं। वैदिक धर्म का पूरा दर्शन इस विषय पर है। इन विषयों पर भारत में बहुत चिंतन हुआ है। चिंतन, ध्यान-साधना आदि के द्वारा ऋषियों को जो अनुभव आये, उसके आधार पर इस गूढ के बारे में दर्शन बना । कुरान में इस विषय पर बहुत ही कम मिलता है। बाइबिल में तो बिलकुल ही नहीं। जान दि बाप्टिस्ट ने थोडा प्रयत्न किया है पर इतना विस्तार से और किसी भी धर्म में नहीं मिलता, जो भारत के दर्शन में मिलता है।

____

* प्रारंभ में मैं उस ईश्वर का ध्यान करता हूं, जिसकी भक्ति कर भक्तों ने जीवन-साफल्य पाया है, जिसने धर्म एवं नीति की मानव को दीक्षा दी है और प्रेषितों के द्वारा गूढ-शोधन करवाया है।

– 'कुरान-सार' से

** पूर्व पाकिस्तान की यात्रा में पहले ही दिन भूदान मिला, तब यह शब्द कहा था। – सं.

*   *

12. कुरान के चौदह रत्न

[मै. अक्तू. 72]

1. ईश्वर सगुण निराकार
2. देवता-निषेध
3. ईश्वर स्वतंत्रेच्छ
4. तथापि कर्म-विपाक मान्य
5. मानव का दैवीकिकरण निषिद्ध
6. भक्ति श्रेष्ठतम कर्तव्य

*

7. बचाव की हिंसा मान्य, लेकिन अहिंसा श्रेयस्कर
8. ब्रह्मचर्य की अपेक्षा नहीं, लेकिन आदर है
9. संन्यास के विषय में यही भूमिका
10. नैतिक मूल्य विहित हैं

*

11. मरणोत्तर जीवन है
12. पुनर्जन्म की कल्पना नहीं, परंतु निषेध ही है यह कहना ठीक नहीं होगा।
13. अंतिम न्याय-दिन

*

14. जातिभेद नहीं

* *

परिशिष्ट 1

[मै. 73]

अस्माउल् हुस्ना

(ईश्वर के सुंदर नाम)

पैगंबर मुहम्मदसाहब एकबार अल्लाह के लिए लगातार 99 नाम बोल गये । वे नाम 'अस्माउल् हुस्ना' के नाम से मशहूर हुए। नित्य जप में उनका प्रयोग होने लगा। इनमें से 81 नाम कुरानशरीफ में ज्यों-के-त्यों मौजूद हैं। बाकी 18 कुरानशरीफ में आये शब्दों से बने हैं।

इन 99 नामों का अर्थ विनोबाजी ने विष्णुसहस्रनाम के शब्दों (नामों) में किया है। विष्णुसहस्रनाम नित्य पठन का ग्रंथ है। अस्माउल् हुस्ना के अर्थ में दिये विष्णुसहस्रनाम के ये शब्द सहस्रनाम के 64 श्लोकों में आये हैं। इनमें से कुछ शब्द सहस्रनाम में अन्य श्लोकों में भी आते हैं, पर वहां वे भिन्न अर्थ में आते हैं। इन 64 श्लोकों का संदर्भ भी नामों के साथ दिया गया है। यहां कुल दो प्रकार की सूचियां दी जा रही हैं। पहली है, 'अस्माउल् हुस्ना' हदीस के क्रम से विष्णुसहस्रनाम के समानार्थक नामों के साथ। दूसरी है, 'अस्माउल् हुस्ना' अकारानुक्रम से विष्णुसहस्रनाम के साथ ।

अरबी लिपि में कई अक्षर नुक्ते के साथ रहते हैं। यहां नुक्ते नहीं दिये हैं।

अस्माउल् हुस्ना हदीस के क्रमानुसार

विष्णुसहस्रनाम के साथ

1	अल्लाहु	परमात्मा	8	मुहैमिनु	रक्षण:
2	रह्मानु	प्रियकृत्	9	अजीजु	जेता

3	रहीमु	प्रीतिवर्धनः	10	जब्बारु	महाबलः
4	मलिकु	लोकनाथः	11	मुतकब्बिरु	महाशक्तिः
5	कुद्दूसु	पूतात्मा	12	खालिकु	स्रष्टा 63
6	सलामु	शरणं शर्म	13	बारिउ	विधाता
7	मुअ्मिनु	शांतिद:	14	मुसव्विरु	विश्वकर्मा
15	गफ्फारु	क्षमिणांवरः	44	रकीबु	प्रजागरः
16	कहहारु	दारुणः	45	मुजीबु	अनुकूल:
17	वह्हाबु	वरदः	46	वासिउ	व्यापी
18	रज्जाकु	वाजसनः	47	हकीमु	वैद्यः
19	फत्ताहु	योगविदांनेता	48	वद्दु	सुहृत्
20	अलीमु	सर्वज्ञः	49	मजीदु	गुरुतमः
21	काबिदु	प्रग्रहः	50	बाइसु	बीजमव्ययम्
22	बासितु	उदारधीः	51	शहीदु	साक्षी
23	खाफिदु	दमयिता	52	हक्कु	सत्यः
24	राफिउ	उत्तारण:	53	वकीलु	आधारनिलयः
25	मुइज्जु	मानदः26	54	कवीयु	शक्तिमतांश्रेष्ठः
26	मुजिल्लु	दर्पहा	55	मतीनु	महावीर्यः
27	समीउ	विश्रुतात्मा	56	वलीयु	लोकबंधुः
28	बसीरु	सर्वदृक्	57	हमीदु	स्तव्यः
29	हकमु	नियंता	58	मुह्सियु	काल:
30	अद्लु	समात्मा	59	मुब्दिउ	उद्भवः
31	लतीफु	सूक्ष्मः	60	मुईदु	समावर्तः

32	खबीरु	विद्वत्तमः	61	मुह्यियु	प्राणदः
33	हलीमु	सहिष्णुः	62	मुमीतु	शर्वः
34	अजीमु	महान्	63	हय्यु	जीवनः
35	गफूरु	सर्वसहः	64	कय्यूमु	शाश्वतः
36	शकूरु	कृतज्ञः	65	वाजिदु	संग्रहः
37	अलीयु	प्रांशुः	66	माजिदु	शुचिश्रवाः
38	कबीरु	श्रेष्ठः	67	वाहिदु	एकः
39	हफीजु	गोप्ता	68	अहदु	एकात्मा
40	मुकीतु	भूतभृत्	69	समदु	विविक्तः
41	हसीबु	पुष्टः	70	कादिरु	विक्रमी
42	जलीलु	प्रतिष्ठितः	71	मुक्तदिरु	क्षमः
43	करीमु	भक्तवत्सलः	72	मुकद्दिमु	भूतादिः
73	मुअख्खिरु	अंतकः	86	मुक्सितु	न्यायः
74	अव्वलु	सर्वादिः	87	जामिउ	श्रीनिधिः
75	आखिरु	विक्षरः	88	गनीयु	निधिरव्ययः
76	जाहिरु	व्यक्तरूपः	89	मुग्नीयु	धनेश्वरः
77	बातिनु	अव्यक्तः	90	मानिउ	दुरारिहा
78	वाली	शास्ता	91	दार्रु	प्रतर्दनः
79	मुतआलि	उदीर्णः	92	नाफिउ	सिद्धिदः
80	बर्रु	पुरुसत्तमः	93	नूरु	प्रकाशात्मा
81	तव्वाबु	पापनाशनः	94	हादियु	नेता
82	मुन्तकिमु	शत्रुतापनः	95	बदीउ	सर्गः

83	अफूवु	सहः	96	बाकी	सनात्
84	रऊफु	सुंदः	97	वारिसु	वंशवर्धनः
85	मालिकुलमुल्कि जुल्जलालि वल्इक्रामि	लोकस्वामी महातेजाः मान्यः	98	रशीदु	गुरुः
			99	सबूरु	धृतात्मा

अस्माउल् हुस्ना अकारानुक्रम से विष्णुसहस्रनाम के साथ

1	अल्लाहु	परमात्मा	27	जामिउ	श्रीनिधिः
2	अव्वलु	सर्वादिः	28	जाहिरु	व्यक्तरूपः
3	अहदु	एकात्मा	29	तव्वाबु	पापनाशन:
4	आखिरु	विक्षरः	30	दार्रु	प्रतर्दनः
5	अजीजु	जेता	31	नाफिउ	सिद्धिदः
6	अजीमु	महान्	32	नूरु	प्रकाशात्मा
7	अद्लु	समात्मा	33	फत्ताहु	योगविदांनेता
8	अफूवु	सहः	34	बदीउ	सर्ग:
9	अलीमु	सर्वज्ञ:	35	बर्रु	पुरुसत्तमः
10	अलीयु	प्रांशुः	36	बसीरु	सर्वदृक्
11	कबीरु	श्रेष्ठ:	37	बाइसु	बीजमव्ययम्
12	करीमु	भक्तवत्सलः	38	बाकी	सनात्
13	कय्यूमु	शाश्वतः	39	बातिनु	अव्यक्तः
14	कवीयु	शक्तिमतांश्रेष्ठः	40	बारिउ	विधाता
15	कहहारु	दारुणः	41	बासितु	उदारधीः
16	कादिरु	विक्रमी	42	मजीदु	गुरुतमः
17	काबिदु	प्रगह:	43	मतीनु	महावीर्यः
18	कुद्दूसु	पूतात्मा	44	मलिकु	लोकनाथः
19	खबीरु	विद्वत्तमः	45	माजिदु	शुचिश्रवाः
20	खालिकु	स्रष्टा	46	मानिउ	दुरारिहा

21	खाफिदु	दमयिता	47	मालिकुल्मुल्कि	लोकस्वामी
22	गनीयु	निधिरव्ययः		जुल्जलालि	महातेजाः
23	गफूरु	सर्वसहः		वल्इक्रामि	मान्यः
24	गफ्फारु	क्षमिणांवरः	48	मुअख्खिरु	अंतकः
25	जब्बारु	महाबलः	49	मुअ्मिनु	शांतिदः
26	जलीलु	प्रतिष्ठितः	50	मुइज्जु	मानदः
51	मुईदु	समावर्तः	76	वकीलु	आधारनिलयः
52	मुकद्दिमु	भूतादिः	77	वद्वदु	सुहृत्
53	मुकीतु	भूतभृत्	78	वलीयु	लोकबंधुः
54	मुक्तदिरु	क्षमः	79	वह्हाबु	वरदः
55	मुक्सितु	न्यायः	80	वाजिदु	संग्रहः
56	मुग्नीयु	धनेश्वरः	81	वारिसु	वंशवर्धनः
57	मुजीबु	अनुकूलः	82	वाली	शास्ता
58	मुजिल्लु	दर्पहा	83	वासिउ	व्यापी
59	मुतकब्बिरु	महाशक्तिः	84	वाहिदु	एकः
60	मुतआलि	उदीर्ण	85	शकूरु	कृतज्ञः
61	मुन्तकिमु	शत्रुतापनः	86	शहीदु	साक्षी
62	मुब्दिउ	उद्भवः	87	समीउ	विश्रुतात्मा
63	मुमीतु	शर्वः	88	सलामु	शरणं शर्म
64	मुसव्विरु	विश्वकर्मा	89	सबूरु	धीरः
65	मुहैमिनु	रक्षणः	90	समदु	विविक्तः
66	मुह्यियु	प्राणदः	91	हादियु	नेता

67	मुह्सियु	कालः	92	हकमु	नियंता
68	रऊफु	सुंदः	93	मुकीमु	वैद्यः
69	रकीबु	प्रजागरः	94	हक्कु	सत्यः
70	रज्जाकु	वाजसनः	95	हफीजु	गोप्ता
71	रशीदु	गुरुः	96	हमीदु	स्तव्यः
72	रहीमु	प्रीति-वर्धनः	97	हय्यु	जीवनः
73	रहमानु	प्रियकृत्	98	हलीमु	सहिष्णुः
74	राफिउ	उत्तारणः	99	हसीबु	पुष्टः
75	लतीफु	सूक्ष्मः			

परिशिष्ट 3

संदर्भ-सूचि

संक्षेप विवरण

अ.त. विनोबा : अहिंसा की तलाश (परंधाम प्रकाशन, पवनार, 2007)

अ.द. विनोबा : अध्यात्म-दर्शन (गुजराती)

अ.श.ख. विनोबा : अहिंसक शक्ति की खोज (सर्व सेवा संघ, वाराणसी)

का.पा. विनोबा : कार्यकर्ता पाथेय (सर्व सेवा संघ, वाराणसी)

कु.सा. विनोबा (सं.): कुरान-सार (सर्व सेवा संघ, वाराणसी, 1966)

क्रां.द. विनोबा : क्रांत-दर्शन (परंधाम प्रकाशन, पवनार)

गी.चिं. विनोबा : गीताई-चिंतनिका (परंधाम प्रकाशन, पवनार)

पा.या. चारु चौधरी : विनोबा की पाकिस्तान-यात्रा (सर्व सेवा संघ, वाराणसी)

भू.गं. विनोबा : भूदान-गंगा (सर्व सेवा संघ, वाराणसी)

भू. पु. भूमिपुत्र पत्रिका

भू.य. भूदान-यज्ञ पत्रिका

म. वि. विनोबा : महाराष्ट्रात विनोबा (परंधाम प्रकाशन, पवनार)

मा. भा. दादा धर्माधिकारी : मानवनिष्ठ भारतीयता (परंधाम प्रकाशन, पवनार, 1992)

मै. मैत्री पत्रिका

मो. पै. विनोबा : मोहब्बत का पैगाम (सर्व सेवा संघ, वाराणसी)

वि. चिं. विनोबा-चिंतन पत्रिका

वि. प्र. विनोबा-प्रवचन

वि.सा.खं. विनोबा साहित्य खंड (परंधाम प्रकाशन, पवनार)

शां.या. विनोबा : शांति-यात्रा

स. या. विनोबा : सर्वोदय-यात्रा (भारत जैन महामंडल, वर्धा, 1951)

से. सेवक पत्रिका

ह. से. हरिजनसेवक पत्रिका

* * * * *